प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 JULY. 7 H. C. } NO. 12
खण्ड ७ { कानपुर १५ जुलाई हरिश्चन्द्र सं० ७। } संख्या १२

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ⅃) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई ⅃) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर।

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर।

विज्ञापन।

हम ब्राह्मण को खुशी से बंद नहीं करते यदि एक [illegible] २ रुपया महीना [illegible]
साझी अथवा सच्चे सौ ग्राहक नियत कर देने का [illegible] कोई भी [illegible]
भी इसे चलाए जायं पर न हम का सामर्थ्य है न [illegible]
है इस से जब तक फिर हमारा ही जी फिर से न [illegible]
ही समझिए क्योंकि अब मेहनत कर के और कष्ट [illegible]
के कदरी नहीं देखी जाती इस से अब वह सज्जन [illegible] हमारे पास अपने [illegible]
भेजें जो मूल्य चाहते हों।

हम से बहुतेरे महाशय पत्र द्वारा आज्ञा करते [illegible] हैं कि कोई अपनी [illegible]
पोथी दीजिए तो छपवावें उन की सेवा में निवेदन [illegible] है कि हमारी बनाई [illegible]
संग्रह की हुई पुस्तकों पर बांकीपुर निवासी श्री बाबू रामदीन सिंह का [illegible]
कार है अतः हमारे बदले उन से मांगना चाहिये।

प्रतापनारायण मिश्र

प्रमोद्गार।

काशीवासी प्रिय मित्र श्री राधाकृष्ण दास लिखित।

नाथ! तुम्हें लोग दयालु कहते हैं; दया सागर [illegible] हैं और साथ ही
न्यायी भी कहते हैं! आहा! कैसी मिठाई है जिस में [illegible] का भी [illegible]
है! दया और न्याय! न्याय एक को फांसी चढ़ाता है और दया उसी को
राजा बनाती है। परस्पर कैसा द्वेष परंतु दोनों एक ही साथ! [illegible]
क्यों? आश्चर्य क्यों? ये सभी तो तुम्हारे ही खिलवाड़ हैं। [illegible]
गुण बनाए साथ ही यह तीसरा मिश्रित गुण अपने [illegible]
हम उस का नाम नहीं जानते कि उस से पुकार कर [illegible]
कृतार्थ करें। लोग कहते हैं धर्म, पर यह नहीं निश्चय [illegible]
धर्म क्या है? तुम्हें रिझाने के लिए कौन धर्म है? उस [illegible]
है? क्या जप तप करके शरीर को कांटा कर देना ही धर्म है [illegible] रुपया
व्यय कर के तुम्हारी पूजा करना धर्म है? और क्या इन्हीं [illegible] तुम प्रसन्न
होते हो? हो—पर नहीं भी होते! बड़े बड़े ज्ञानी और बड़े बड़े धनिक
धर्मात्मा हैं पर उन्हें तो तुम अपनी अलौकिक छटा की एक [illegible] भी नहीं

बखुशती ? भला यह तो कहो अजामिल ने कौन सा तप, धर्म किया था जो तुरंत ही आप पिघल गए ? और हाय ! उस बड़ भागिनी सेवरी के सुख में क्या मिठाई थी जो आतुर हो उस के घर जा कर जूठे फलों को मांग मांग चखा ? गजराज विचारा तो बोल भी नहीं सकता था क्योंकि जानवरों को लोग बेजुबान कहते हैं उसने किस गुरु से उपदेश पाया था जो तुम्हारा स्वरूप उसने पहिचाना ? तुम क्या उस के नौकर थे जो उस की विपत्ति उस की पुकार सुनते ही उठ दौड़े ? पर तुम्हें तो सारा संसार ही पुकारा करता है सभों के पास क्यों नहीं जाते ? क्या तुम मग्न हो जो लोग तुम्हें खोजते हैं पर तुम छिपे छिपे फिरते हो ? सच है "गोविंद की गति गोविंद जाने" भला यह तो कृपा ही यह बतलाओ कि तुम रहते कहां हो ? तुम्हें कहां जा कर खोजें ? तुम कहां मिलोगे ? हाय !

"घर ही में मोतिया हेराइलि रामा कहं ढूंढउं"

कहीं पता भी हो या यों ही मारे मारे फिरें ? लोग कहते हैं 'घरही में मोतिया हेराइलि' पर घर तो सब देख डाला कहीं भी तो पता न लगा ! हय ! आपही अपने को ढूंढ़ता है मिलै क्यों कर ? आंख संसार को देखती है पर अपने को नहीं देख सकती ! हां अगर उस की उलटी दृष्टि वा हम आंख के भीतर देख सकते तो अवश्य आंख को भी देखते।

हां ठीक तो है दर्पण ले कर आंख भी तो देख सकते हैं ? पर तुम्हें देखने को कौन दर्पण चाहिए ? चाहे दर्पण का दोष हो वा आंखों का पर तुम्हें देखने के समय शीशा अंधा हो जाता है ! दयामय ! सह भूले—जो दया मय होते तो अंधों को भटकता देख दया न आती ? रास्ता न बतलाते ? अच्छा जाने दो। हे न्यायी !—यह क्यों ? क्या अपने बंदों को दर बदर भरमाना, शुतुर बे मुहार की तरह जिधर चाहें जाने देना, अपनी मंगलमयी सृष्टि में असंगल मूर्ति को आने देना न्याय है ? बलिहारी इस दया के और बलिहारी इस न्याय के ! अच्छा हे विलक्षण मूर्ति ! तुम्हारे जी में क्या है कुछ बताओ तो सही ? बिना कहे जी का हाल कैसे जाना जाय ? और बिना हाल जाने संतुष्ट कैसे किया जाय ? बतलाते क्यों नहीं ? जान पड़ता है तुम्हारे ही जी में है कि ये भटका करें—यह खराबी कराना तुम्हीं को मंजूर है ! अच्छा यही सही—"राज़ी हैं हम उसी में जिस में तेरी रिज़ा है" जी

चाहे जिस जिस नाच नचाओ पर आपने भी यह वे हया है कि कभी टलने वाले नहीं। " सहेंगे सब कुछ, उम्र भर तुम्ही से यार निबाहेंगे। "

स्वतंत्रता।

यह एक ऐसा गुण है कि न किसी के देने से किसी को प्राप्त हो सकता है न कोई किसी से मांग के पा सकता है किन्तु पात्रानुसार तारतम्य के साथ आप से आपही लब्ध होता है ईश्वर सब बातों में सब से बड़ा है अत: पूर्ण रीति से वही एक स्वतंत्रता का आधार है और किसी को इस का दावा करना व्यर्थ है जो लोग कहते हैं कि मनुष्य को ईश्वर ने स्वतंत्र बनाया है वे भूलते हैं क्योंकि कोई किसी के बनाने से स्वतंत्र नहीं बन सकता जबतक वह स्वयं उस के योग्य न बने मनुष्य अपने निर्वाहार्थ काम करने में भले ही स्वतंत्र हो पर उन को कामों का फल भोगने में स्वतंत्र नहीं है उस की इच्छा के विरुद्ध ईश्वरीय नियमानुसार रोग वियोगादि उसे आदि दबाते हैं तो फिर स्वतंत्रता कहां रही सिद्धांत यह कि जिसके ऊपर किसी प्रबलतर व्यक्ति का प्रभाव पड़ सकता है वह स्वतंत्र कदापि नहीं कहा जा सकता और ईश्वर या सृष्टि का नियम सब के ऊपर प्राबल्य जमाए हुए हैं अत: सचमुच की स्वतंत्रता किसी को नहीं है हां भ्रमात्मक विश्व में कल्पना करना चाहिए तो यों कर लीजिए कि जो जितना बड़ा है उसे उतनी ही स्वतंत्रता हस्तगत है जिसे अधिक बड़े लोग छीन लेंने सकते हैं किन्तु छोटे लोगों का जो उस के आधीन हैं अथवा हो सकते हैं उसको रीस करना वृथा है अथच न्यायादि के अनुरोध द्वारा उस को स्वातंत्र्य में से साझा मांगना एक प्रकार का पागलपन है जब कि आप स्वल्प सामर्थी वा सामर्थ्य शून्य हो कर स्वतंत्र बनाना चाहते हैं तो जिसे स्वतंत्रता प्राप्त है वह उसे गांवा बैठना या घटा लेना क्यों चाहेगा ? यों अपनी इच्छा से आप को फुसला देने के लिए चिकनी चुपड़ी बातें बना देना और बात है पर यह कभी संभव नहीं है कि आप के मांगने से कोई पुरुष वा समुदाय वह वस्तु उठा दे अथवा उस में आप को भी साझी बना ले जिसे संसार में सभी चाहते हैं किन्तु प्राप्त उसी को होती है जो उस के योग्य हो! यदि आप योग्यता रखते हों अथवा धन जन बल छल इत्यादि की सहायता से योग्य बन जाय तो आप को भी आप से आप मिल रहेगी नहीं तो यांचा

वह है जिस ने त्रैलोक्य व्यापी विष्णु भगवान को बावन अंगुल का बना दिया उस के द्वारा बड़ाई किसे मिल सकती है ? और बड़ाई भी वुह जिसे बड़े २ लोग बड़ी २ मुड़धुन करके प्राप्त करते हैं सो भी पूर्ण तृप्ति के योग्य नहीं, तीन खाते हैं तेरह को भूख बन ही रहती है ऐसे परम बांछनीय अमूल्य पदार्थ के चाहने वालों को तो चाहिए कि अपने अभीष्ट की मानसिक मूर्ति वा काल्पनिक प्राप्ति के हेतु अपना तन मन धन प्रान लोक परलोक वार देने का हौसिला रक्खें अथवा सब प्रकार के भय संकोच लालच इत्यादि को तिलांजुली दे के अपने को दृढ़ विश्वास के साथ स्वतंत्र समझ लें और इस विश्वास विक्षेप डालने वाले ईश्वर तक को कुछ न समझें बस फिर प्रत्यक्ष देख लेंगे कि ऐसे चाहने वाले से परमेश्वर भी दूर नहीं रह सकता स्वतंत्रता तो उस के अनंत गुणों में से एक गुणमात्र है जब जहां जिसने जो कुछ प्राप्त किया है इसी सच्चे और दृढ़ प्रेम के द्वारा प्राप्त किया है इसी के अवलम्बन से जो कोई जो कुछ प्राप्त करना चाहे कर सकता है और यदि यह न हो सके तो समझ लीजिए कि सभी स्वतंत्र हैं संसार में बीसियों धर्म ग्रंथ एवं सैकड़ों राज नियम सहस्रों भांति का भय दिखलाया करते हैं पर कोई काम ऐसा नहीं है जो न होता हो समर्थी लोग कोई न कोई बहाना गढ़ के मन माना काम कर लिया करते हैं और असमर्थी यह विचार के जो चाहते हैं कर उठाते हैं कि यह होगा तो क्या होगा और वह होगा तो क्या होगा इस रीति से विचार के देखिए तो आवश्यकता ही का नाम स्वतंत्रता है जिसे जब किसी बात की अत्यावश्यकता होती है और उस की पूर्ति का किसी ओर से आसरा नहीं देख पड़ता तब वह दुनिया भर का संकोच छोड़ के अपना काम निकालने के लिए सभी कुछ कर लेता है यह स्वतंत्रता नहीं तो क्या है ? और इस की प्राप्ति के लिए चाहिए ही क्या ? केवल दैव के भरोसे बैठे रहिए "रात दिन गरदिश में हैं सात आसमान हो रहेगा कुछ न कुछ घबरायं क्या" जब परतंत्रता अपनी पराकाष्टा को पहुंच जायगी खाना पीना मरना जीना सभी कुछ पराए हाथ जा पड़ेगा तब आप ही झख मारिएगा और जैसे बनेगा वैसे स्वतंत्रता का खोज कीजिएगा एवं 'जिन ढूंढा तिन पाइयां' का जीवित उदाहरण बन जाइयेगा पर उस में आप की करतूत कुछ न होगी वह काम भगवान की लीला कहलावैगी जो अपने चक्र को सदा घुमाया करते हैं और

तदनुसार नीचे के आरे ऊपर तथा ऊपर वाले नीचे आप से आप हो जाया करते हैं आप को यदि स्वतंत्रता प्यारी हो और उस को प्राप्ति का यत्न करना अभीष्ट हो तो इतना ही मात्र कर्तव्य समझिए कि जहां तक हो पराए झगड़े अपने ऊपर न लीजिए केवल अपने काम से काम रखिए एवं अपने काम में यथा सामर्थ्य दूसरों का सम्पर्क न होने दीजिए इस में यदि कोई अन्याय अथवा बल प्रदर्शन द्वारा हस्तक्षेप करना चाहे तो ईश्वर वा सामयिक प्रभु अथवा किसी सामर्थ्य वाले का साहाय्य ग्रहण कीजिए पर केवल उतना ही जितने से बली विघ्नकर्ता के हाथ से बचाव रहे यह न होने पावे कि सहाय-कर्ता की आधीनता में कोई ऐसा दूसरा विषय भी आ पड़े जिस में विघ्नकारी का हाथ न पड़ा था पर ऐसा कभी ही कभी हुआ करता है नित्य के लिए तो केवल इतना ही ध्यान रखना चाहिए कि अपना तथा अपनों का निर्वाह होता रहे अपने साथ दूसरों का तथा दूसरों के साथ अपना कोई प्रयोजन नहीं कोई कुछ कहे कहीं कुछ हो अपने को क्या ? अपनी आत्मा प्रसन्न रहनी चाहिए बस इस पथ का अवलंबन करने से देश काल की दशा के अनु-सार स्वतंत्रता के उतने अंश को प्राप्त कर लीजिएगा जितना आप की सी दशा वालों को प्राप्य है और इसी से आप अपनी भली वा बुरी मनोगति के अनुकूल ईप्सित कार्य्यों की पूर्ति में सब से अधिक सक्षम रहिएगा नहीं तो कोरी बातें बनाया कीजिए और नाना प्रकार के उपाय करते रहिए पर रहि-एगा परतंत्र ही स्वतंत्रता तो केवल उन्हीं के लिए है जो स्वभावतः स्वतंत्र हों अथवा अपने स्वभाव को स्वतंत्र बनाने का पूर्ण उद्योग करें।

अन्तिम सम्भाषण।

"दरो दीवार प हसरत से नज़र करते हैं। खुश रहो
अहलेवतन हम तो सफ़र करते हैं॥"

परम गूढ़ गुण रूप स्वभावादि सम्पन्न प्रेमदेव के पद पद्म को बारम्बार नमस्कार है कि अनेकानेक विघ्नों की उपस्थिति में भी उनकी दया से ब्राह्मण ने सातवर्ष तक संसार की सैर कर ली नहीं तो कानपुर तो वह नगर है जहां बड़े २ लोग बड़े बड़ों की सहायता के आछत भी कभी कोई हिन्दी का पत्र चा

छः महीने भी नहीं चला सके और न आसरा है कि कभी कोई एतद्विषयक कृतकार्यत्व लाभ कर सकेगा क्योंकि यहां के हिन्दू समुदाय में अपनी भाषा और अपने भाव का ममत्व विधाता ने रक्खा ही नहीं फिर हम क्योंकर मान लें कि यहां हिन्दी और उस के भक्त जन कभी सहारा पावेंगे ऐसे स्थान पर अक्खड़ों के और खुशामदी तथा हिकमती न बन के ब्राह्मणदेवता इतने दिन तक बने रहे सो भी एक स्वेच्छाचारी के द्वारा संचालित हो के इस प्रेम देव की आश्चर्य लीला के सिवा क्या कहा जा सकता है? यह पत्र अच्छा था अथवा बुरा अपने कर्तव्य पालन में योग्य था वा अयोग्य यह कहने का हमें कोई अधिकार नहीं है न्यायशील सहृदय लोग अपना विचार आप प्रगट कर चुके हैं और करेंगे पर हां इस में संदेह नहीं है कि हिन्दीपत्रों की गणना में एक संख्या इस के द्वारा भी पूरित थी और साहित्य (लिटरेचर) को थोड़ा बहुत सहारा इस से भी मिला रहता था इसी से हमारी इच्छा थी कि यदि खर्च भर भी निकलता रहे अथवा अपनी सामर्थ्य के भीतर कुछ गांठ से भी निकल जाय तो भी इसे निकाले जायंगे किन्तु जब इतने दिन में देख लिया कि इतने बड़े देश में हमारे लिए सौ ग्राहक मिलना भी कठिन है यों सामर्थ्यवालों और देशहितैषियों की कमी नहीं है पर वर्ष भर में एक रुपया दे सकने वाले हमें सौ भी मिल जाते अथवा अपने इष्ट मित्रों में दस २ पांच २ कापी बिकवा देने वाले दस पंद्रह सज्जन भी होते तो हमें छः वर्ष में साढ़े पांच सौ की हानि क्यों सहनी पड़ती जिस के लिए साल भर तक काले-कांकर में स्वभाव विरुद्ध बनवास करना पड़ा यह हानि और कष्ट हम बड़ी प्रसन्नता से अंगीकार किए रहते यदि देखते कि हमारे परिश्रम को देखने वाले और हमारे विचारों पर ध्यान देने वाले दस बीस सद्व्यक्ति भी हैं पर जब वह भी आशा न हो तो इतनी मुड़धुन क्योंकर सही जा सकती है कि महीना आरंभ हुआ और एक फिकर शिरपर सवार है यह विषय गद्य में लिखना चाहिए यह पद्य में—और इस का फल क्या होगा कि डाकखाने और छापाखाने के लिए देने को तो भर. २ मुट्ठियों रुपया चाहिए पर मिलने के लिए चिट्ठी पर चिट्ठी लिखने तथा मुलाहिज़ा छोड़ के वेल्यू पेएबिल भेजनेपर कभी किसी भलेमानस ने एक रुपया भेज दिया जिस का हम ऐसों के हाथ में एक दिन भी ठहरना असंभव है यह झंझट सौंपने के लिए यदि किसी को

अपना समझ के मैनेजर ठहराते हैं तो या तो वह साहब आमदनी ही हज़म कर बैठते हैं या बेगार का काम समझ के हम से भी अधिक मस्त बन बैठते हैं जिस में न किसी की चिट्ठी पत्री का जवाब है न कोई हिसाब है इस रीति से हमें जब देना पड़ा है गांठ ही से देना पड़ा है जिस के लिए समय पर रुपया पास न होने के कारण यंत्राध्यक्षों से झूठे वादे और चित्त की झुंझलाहट रोक के 'बाबूसाहब बाबूसाहब' करना एक मामूली बात है एक भले मानस हमारे हानि लाभ के साझी बने थे पर जब कुछ दिन मैनेजमेंट अपने हाथ में रख के समझ गए कि इस में हानि ही हानि है तो झट से तोते की तरह आंखें बदल बैठे पर परमेश्वर बड़े दयामय हैं हमें उन की एक कौड़ी का भी रवादार नहीं बनाया वरंच उन के मुंह फेरते ही हमारे लिए तीन सहायक प्रस्तुत कर दिए एक कोल्हापुर निवासी श्री मानराव साहब राय सिंह देव शर्मा दूसरे दिल्ली वासी श्रीयुत जगन्नाथ भारतीय तीसरे श्रीमत्स्वामी मंगल देव सन्यासी सच पूछो तो हमारी टूटी हुई हिम्मत इन्हीं सत्पुरुषों के उत्साह प्रदान से तीन वर्ष तक कायम रही नहीं तो हमें केवल अपनी इच्छा से बेगार भुगतना और हर साल जुर्माना देना कभी का असह्य होगया होता किन्तु जब बरसों तक यह देखते रहे कि जिन लोगों के लिए मारी हाय २ की जाती है उन में से बहुतेरों को यह भी ध्यान नहीं है कि हिन्दी हमारी कौन है अथवा ब्राह्मण किस खेत की मूली है तो गत वर्ष यह दृढ़ विचार कर लिया था कि यह झगड़ा अब न रक्खेंगे किन्तु हमारे परम हितैषी और हिन्दी के सच्चे प्रेमी श्री सल्लहाराज कुमार बाबू रामदीन सिंह महोदय (खड्गविलास प्रेस बांकीपुर के स्वामी) की अकृतिम दया और प्राकृतिक स्नेह के वश वर्ष भर तक फिर भी ब्राह्मण ने जगज्जात्रा की पर अब हम नहीं चाहते कि समय सम्पत्ति और स्वतंत्रता नष्ट करके अपनी वाणी की विडंबना कराते एवं अपने थोड़े से सच्चे सहायकों को चिन्ता में फंसाते रहें इससे ब्राह्मण को ब्रह्मलोक भेज देना ही उत्तम समझते हैं ग्राहक बढ़ाने और पत्र को स्थिर रखने के सब उपाय कर देखे पर अंत को यही जान पड़ा कि या तो हम देश की सेवा के योग्य नहीं हैं या देश ही हमारे गुणों को समझने की योग्यता नहीं रखता फिर किस आसरे पर गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी पेट पीट के पोर उपराजने का ठान ठानें? हां बीते हुए महीनों

के लेखानुसार न्यायव्ययादि का प्रबन्ध हो जायगा अथवा दो चार वर्ष में फिर शौक चर्रायगा तो देखा जायगा पर आज तो सात वर्ष का तमाशा देखते २ जी ऊब उठा है यद्यपि उन लोगों से बिदा होते मोह लगता है जिन के साथ इतने (अथवा कुछ कम) दिनों सम्बन्ध रहा है और कभी कोई कलहकी बाली बात नहीं आने पाई पर क्या कीजिए समय का प्रभाव रोकना किसी का साध्य नहीं है अतः छाती पर पत्थर रख के बिदा होते हैं और कोई सुने वा न सुने पर अपने धर्मानुसार चलते चलते कहे जाते हैं कि—

चहहु जु सांचहु निज कल्यान । तौ सब मिलि भारत संतान ॥
जपौ निरंतर एक जबान । हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान ॥ १ ॥
रीझै अथवा खिझै जहान । मान होय चाहै अपमान ॥
पै न तजौ रटिवे की बान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ २ ॥
जिन्हैं नहीं निजता को ज्ञान । वे जन जीवत मृतक समान ॥
याते गहु यह मंत्र महान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ ३ ॥
भाषा भोजन भेष बिधान । तजै न अपनो कोई मतिमान ॥
बसि समझौ सौभाग समान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ ४ ॥
धनि है वह धन धनि वे प्रान । जे इन हेत होहिं कुरबान ॥
यही तीन सुख सुगति निधान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ ५ ॥
तिहुं लोक पर पूज्य प्रधान । करि हैं तव त्रिदेव इबचान ॥
सुमिरौ तीनहु समय सुजान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ ६ ॥
सरबसु जाइ दीजिए जान । सब कछु सहिए बनि पाषान ॥
पै गहि रहिय प्रेम प्रन ठान । हिन्दी हिन्दू हिन्दुस्तान ॥ ७ ॥
तबहिं सुधारि है जनम निदान । तबहि भलो करिहैं भगवान ॥
जब रहि है निशिदिन यह ध्यान । हिन्दी हिन्दू हिंदुस्तान ॥ ८ ॥

जब लगि तजि सब शंका सकुच अरु आस पराई ।
नहिं करिहौ अपने हाथन आपनो भलाई ॥
अपनो भाषा भेष भाव भोजन भाइन कहं ।
जब लग जगते उत्तम नहिं जानिहौ जिय महं ॥
तब लग उपाय कोटिन करत अगनित जनम बिताय हौ ।
पै सांचो सुख सम्पति सुजस सपनेहु नहिं लखि पाय हौ ॥ ९ ॥

भारतेंदु हरिश्चन्द्र कृत ग्रन्थ जो बिक्री के लिये तयार है।

क्रम	ग्रन्थ	मूल्य
१	नाटक	।=)
२	सत्यहरिश्चन्द्र	।=)
३	मुद्राराक्षस	॥।)
४	हिंदी भाषा	=)
५	कर्पूरमंजरी	≡)
६	चंद्रावली	॥)
७	विद्यासुंदर	।)
८	भारतजननी	=)
९	भारत दुर्दशा	।)
१०	नीलदेवी	≡)
११	माधुरी	/)
१२	पाखंडविडम्बन	=)
१३	अंधेरनगरी	=)
१४	दुर्लभ बन्धु	॥।)
१५	भाण	=)
१६	धनंजय विजय	।)
१७	सतीप्रताप	=)
१८	वैदिकीहिंसाहिंसानभवति	≡)
१९	प्रेमयोगिनी	=)
२०	काश्मीरकुसुम	॥।)
२१	महाराष्ट्र देश का इतिहास	/)
२२	बूंदीराजवंश	/॥)
२३	रामायण का समय	/॥)
२४	अगरवालों की उत्पत्ति	/)
२५	खत्रियों की उत्पत्ति	॥)
२६	उदयपुरोदय	।)
२७	बादशाहदर्पण	॥=)
२८	पुरावृत्त संग्रह	॥)
२९	कार्त्तिक नैमित्तिक कर्म	।)
३०	युगलसर्वस्व	॥)
३१	भक्तसर्वस्व	।)
३२	विजयनी विजय वैजयंती	=)
३३	मनोमुकुलमाला	।)
३४	गोमहिमा	=)
३५	रसबरसात	=)
३६	प्रेमाश्रुवर्षण	=)
३७	पुरुषोत्तम मासविधान	=)
३८	मलारजयन्ती कजली संग्रह	=)
३९	वर्षाविनोद	।)
४०	चरितावली	॥)
४१	भक्तमाल	।)
४२	हिन्दीव्याकरण	/)
४३	वेश्यास्तोत्र	=)
४४	तदीय सर्वस्व	॥)
४५	वैष्णवता और भारतवर्ष	=)
४६	संगीतसार	≡)
४७	प्रेमप्रलाप	।)
४८	प्रेमफुलवारी	/)
४९	मलारावली	=)
५०	मानसोपायन	१)
५१	श्रीवल्लभीय सर्वस्व	।)
५२	वैष्णव सर्वस्व	।)

मनेजर "खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर।

श्री रामचरित्रमानस

अर्थात्

श्री तुलसी कृत रामायण।

यह ग्रन्थ बड़े परिश्रम और यत्न से श्री तुलसीदास जी की लिखी हुई खास प्रति से शोध कर ज्यौं का त्यौं छापा गया है। इस भय से कि कदाचित् कोई इसे असम्भव समझे, गोसाईं जी के हाथ की लिखी हुई प्रति के १० पृष्ट का फोटोग्राफ् भी पुस्तक में लगा दिया है, और उस की दृढ़ पुष्टि के लिये गोसाईं जी के हाथ के लिखे हुए पंचनामा का फोटोग्राफ् भी उसी के संग है, जिस में लोगों को यह भी न कहना पड़े कि गोसाईं जी के हाथ के लिखे हुए का प्रमाण ही क्या है ? और लोगों की भांति मैं नहीं चाहता कि इश्तिहार में नीचे से ऊपर तक प्रशंसा ही भर दूं, क्योंकि जो इस के गुणग्राहक हैं उन के लिये इतना ही बहुत है। इस ग्रन्थ में तुलसीदास जी का जीवनचरित्र भी दिया गया है और अक्षर बड़े वो कागज़ अच्छा है। तीनसौ वर्ष पर यह अलभ्य पदार्थ हाथ लगा है, जिन को रामरस के अपूर्व स्वाद लेना हो वे न चूकें और नीचे लिखे हुए पते से मंगा लेवें। नहीं तो अवसर निकल जाने पर पछताना होगा।

मूल्य फोटोग्राफ् सहित ६) मूल्य बिना फोटो की ४) डाक महसूल १॥)

साहब प्रसाद सिंह।

"खड्गविलास" प्रेस बांकीपुर

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास" प्रेस बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 खण्ड ७ — CAWNPORE, 15 JUNE. 7 H. C. कानपुर १५ जून हरिश्चन्द्र सं० ७। — NO. 11 संख्या ११

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ‌।) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा ।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ।

३—विज्ञापन की छपाई ‌/) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा ।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा ।

५—लेख तथाब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर ।

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर ।

हरि जैसे को तैसा है ।

इस में कोई संदेह नहीं है कि ईश्वर अनंत है और उस की सभी बातें अनंत हैं इस रीति से यह सामर्थ्य कभी कहीं किसी को न हुई है न है न हो सकती है कि उस का ज्ञान पूर्ण रूप से प्राप्त कर ले पर सच्चे विश्वास के साथ उसे जो कोई जिस रीति से मानता है वह अपनी रुचि ही के अनुसार उस को रूप गुण स्वभावादि पाता है क्योंकि सर्व शक्तिमान का अर्थ ही यह है कि किसी प्रकार किसी बात में बंद न हो यह तत्त्व न जानने के कारण बहुधा कुतर्की लोग पूछ बैठते हैं कि ईश्वर सब कुछ कर सकता है तो अपने को मार भी डालने सकता है, अथवा चोरी जारी इत्यादि भी कर करा सकता है कि नहीं ? ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने में वे लोग अक्षम हो रहते हैं जो यह माने बैठें हैं कि ईश्वर के विषय में जितना कुछ किसी ग्रंथ विशेष में लिखा है उतने ही से इति श्री है अथवा जिन बातों को बुद्धिमानों ने सांसारिक व्यवहार के निर्वाहार्थ जैसा ठहरा रक्खा है वे ईश्वर के पक्ष में भी वैसी ही हैं पर जो जानते हैं कि परमेश्वर किसी बन्धन में बद्ध नहीं है केवल प्रेम बन्धन ही उस पर प्रभाव डाल सकता है पर उस के द्वारा वास्तविक स्वतंत्रता में अन्तर नहीं पड़ता वे छूटते ही उत्तर देंगे कि हां साहब ईश्वर आप की तरह स्वल्प सामर्थी नहीं है जो मार डालने वा मर जाने के उपरांत जिला देने अथवा जी उठने की सामर्थ्य न रखता हो वह मृत्यु और जीवन दोनों का अधिष्ठाता है इस न्याय से स्वेच्छानुसार अपने पराए अथ च सब के साथ दोनों को व्यवहृत कर सकता है और सुनिए चोरी जारी छल कपट इत्यादि केवल आप ऐसों के पक्ष में बुरे हैं किन्तु परमात्मा किसे कैसा समझता है यह आप की समझ में न कभी आया है न आवैगा फिर इन बातों से क्या यदि वह चोरी करेगा तो आप तो आप ही हैं आप के बाप भी उसे दंड नहीं दे सकते आप के देखते २ आप के कितने ही सम्बन्धियों के प्राण उड़ा ले गया तब आपने क्या बना लिया था ? फिर ऐसे कुतर्कों के द्वारा आप का यह विचारना व्यर्थ है कि हम किसी सच्चे विश्वासी को डिगादेंगे अथवा बातें बनाके जीत लेंगे पर यह विषय तो तर्क वितर्क का है ही नहीं इस में तो केवल अनुभव का काम है चित्त को शुद्ध कर के मन एकाग्र कर के कुछ दिन अनुभव कर देखिए तो

विदित हो जायगा कि जो कुछ भगवान श्रीकृष्णचन्द्र ने आज्ञा की है कि 'यो यथा मां प्रपद्यन्ते तं तथैव भजाम्यहं' और महा प्रभु श्री वल्लभाचार्य ने जगत के उद्धारार्थ शिक्षा दी है कि 'सर्वदा सर्व भावेन भजनीयो ब्रजाधिप:'. वही भजन परायण महात्मा कबीर ने अपने और अन्यान्य भक्तों के अनुभव द्वारा निश्चय कर लिया है कि हरि जैसे को तैसा है सच्चे विरागियों के लिए जिन्हें संसार तो क्या अपने ही शरीर का मोह नहीं है ईश्वर निराकार निरवयव निर्गुण अकर्ता अभोक्ता इत्यादि है और केवल ज्ञानियों के लिए जो विचार करने के अति रिक्त हाथ पांव हिलाने का अवसर ही नहीं पाते परमेश्वर भी "पग बिन चलै सुनै बिन काना। कर बिन करम करै बिधि नाना॥" इत्यादि विशेषण विशिष्ट है परन्तु जिन्हें घर बार छोड़ के बन में जा बैठना और हस्त पदादि होते हुए निकम्मे बन बैठने की रुचि नहीं है उन के लिए वह उन की मनोगति के अनुसार अनेक रूप सम्पन्न भी है।

योगियों के लिए परम योगीश्वर महान शोभा मयी प्राणप्रिया को अर्द्धांगं में धारण किये रहने पर भी अष्ट प्रहर समाधि में तत् पर रहता है वीरों के लिए महाधीर धुरंधर वीर बर खड्ग चक्र त्रिशूलादि नाना शस्त्रास्त्र सज्जित रहने पर भी केवल हुंकार के द्वारा शत्रु निकर के निमित्त प्राण शोषक भयंकर है रसिकों के लिए रसिक शिरोमणि कोटि काम सुंदर महामनोहर है कहां तक कहिए यह कहने सुनने की बातें ही नहीं है तौभी कहने वाले कही गए हैं "जिन के रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी" पर देखने के लिए आंखें चाहिए सो भी अंत: करण में और प्रेमांजन से अंजित यों लोभ की लपालप से मन की आंखों का काम नहीं निकलने का जबकि ऊपरीही आंखों का काम निकलना असंभव है इसी प्रकार वह सबसे पृथक रहने पर भी सब से मिला रहता है निवृत्त लोगों के लिए वह किसी का कोई नहीं है मानो कबीर साहब के द्वारा उसी ने कहा है कि—ना हम काहू के कोई न हमारा—पर प्रवृत्ति मार्ग में सारा संसार उसी का है और वह भी सब का सब कुछ है कभी २ ईसाई धर्म प्रचारक जब महात्मा मसीह को ईश्वर का पुत्र कहते हैं तो उन के धर्म विरोधी पूछ बैठते हैं कि ईश्वर के पुत्र है तो स्त्री और माता पितादि अन्यान्य कुटुम्बी भी होने चाहिए इस पर सार्वभौमिक धर्मावलम्बियों को उत्तर देने का बहुत अच्छा अवसर मिल सकता है कि हां बातों को

हार जीत का व्यसन छोड़ के आप सच्चे जी से उस के बन जाइए तो देखिए गा कि साधारण रीति से समस्त संसार ही उसकी संतति है क्यों कि उत्पत्ति कारक सबका वही है रहा विशेष सम्बन्ध सो मसीह जानते थे कि मैं उसका पुत्र हूं कभी २ स्नेह की उमंग में कह भी देते थे पर यह कभी नहीं हुआ कि वह शास्त्रार्थ में अपने को खुदा का बेटा सिद्ध करते फिरें हों क्योंकि शास्त्रार्थ से और आंतरिक सिद्धांत से बड़ा अंतर होता है यदि आप को प्रेम-भक्ति हो तो नंद बाबा और दशरथ महाराज इत्यादि की नाईं उसके पिता बन जाइए और देख लीजिए कि वह आप के मनोमंदिर में शिशु लीला सम्पादन करता है अथवा नहीं ? अवश्य करेगा क्योंकि वह अपने भक्तों का कोई मनोरथ सफल करने में कभी त्रुटि नहीं करता पर होना चाहिए भक्त केवल वक्ताओं के लिए वह शब्द मात्र से अधिक कुछ नहीं है सो भी अनेक मतावलम्बियों के सिद्धांतानुसार पवित्र और न्यायपूर्ण शब्द जो अपवित्र मुख और अन्यायपूर्ण हृदय से निकलने पर उच्चारण कर्त्ता को उसके कुव्यवहार का फल अवश्य चखाता है अधिक नहीं तो ऐसे वंचकों का (जो अपने आंतरिक स्वार्थ एवं कपट को छिपा के संसार के सन्मुख अपनी धर्म्म निष्टता और ब्रह्मविज्ञता दिखलाते रहते हैं) चित्तहि ऐसा सदसद्विवेक वंचित बना देता है कि उन्हें कुछ दिन पीछे यह बोध भी नहीं रह जाता कि हम जो चाल चल रहे हैं वह वस्तुतः अच्छी है अथवा बुरी ? इस से स्वयं सिद्ध है कि 'हरि जैसे को तैसा है ' अस्मात हमें उचित है कि उसे जिस रीति से जैसा कुछ मानते हैं माने जायं न किसी के बहकाने से बहकें न किसी को बहकाने का मानस करें क्योंकि ऐसा करते ही हमारे ईश्वर के मानने में विक्षेप पड़ जायगा और इसके साथ ही यह भी स्मरण रखना चाहिए कि मानना सच्चे जी से सरल भाव के साथ सम्बन्ध रखता है यदि अंतःकरण उसके अस्तित्व की साक्षी न देता हो तो लोगों के दिखलाने को ईश्वर २ करने का कोई काम नहीं है झूठे बनावटी आस्तिक से नास्तिक कोटि गुणा उत्तम होता है क्योंकि वह किसी को धोखा नहीं देता और कच्चा आस्तिक अपनी आत्मा के साथ आपही अन्याय तथा प्रवंचना करता रहता है इस से यदि मानिए तो सच्चाई के साथ दृढ़ता पूर्वक मानिए फिर इस बात का झगड़ा न रह जायगा कि कैसा मानें क्यों कर मानें ? जैसा मानिए गा वैसा फल आप पा जाइयेगा

क्योंकि 'हरि जैसे को तैसा है' हमारी समझ में अभी भारत सन्तान के मध्य नास्तिकता बहुत नहीं फैली अस्मात हम अपने पाठकों से पूछा चाहते हैं कि आप ईश्वर को अपना क्या मानते हैं ? यों कहने को तो माता पिता गुरु स्वामी अन्न दाता सुखदाता मुक्ति दाता इत्यादि अगणित शब्द हैं पर मानना वही है जो दृढ़ निश्चय के साथ माना जाय यों सहस्र नाम का पाठ करने मे केवल समय का नष्ट करना है अथवा लोक परम्परा की गुलामी करना है इसे छोड़िये यदि मानना हो तो कैसा ही मानिए कुछ ही मानिए किसी प्रकार से मानिए पर सच्चाई के साथ फिर देख लीजिए कि वह वास्तव में आपही के मन्तव्य की अनुकूलता का निर्वाह करता है कि नही ? यदि कोई हम से इस विषय में सम्मति लिया चाहे तो साधारणतया तो हम यही कहेंगे कि अपनी दशा के अनुसार अपने जी से आप ही पूछ देखिए जैसा वह बतलावे वैसा मानने लगिए और वही मानना ठीक होगा रही हमारी विशेष अनुमति वह यह है कि अपने गृह कुटुम्ब जाति देश की गिरी हुई दशा सुधारने पर कटि बद्ध हूजिए यहां के धन बल विद्यामान मर्यादा को नष्ट होने से बचाने के लिए तन मन धन वचन कर्म से अहर्निश जुटे रहीए क्योंकि ईश्वर जगत में व्याप्त है इस से जगत के साथ उत्तमाचरण करना ही ईश्वर के साथ सद व्यवहार करना है जिस ने संसार को सुखित करने का उद्योग किया वह ईश्वर की प्रसन्नता सम्पादन कर चुका जब कि संसारिक पिता और राजा अपने संतान तथा प्रजा के हितकारकों को अपना हित समझते हैं तो जगत्पिता जगदीश्वर अपनी सृष्टि के शुभचिंतक को अपना प्रीति पात्र क्यों न समझेंगे ? पर सारा संसार बहुत बड़ा है और इतने बड़े विश्व के साथ स्नेह सम्बन्ध रखना हमारे लिए अति कठिन हैं इस से केवल अपने देश जाति की भलाई को जगत की भलाई समझ के उसका उद्योग कर चलिए और उस में ईश्वर को अपना सच्चा सामर्थ्यवान सुदृढ़ सहायक समझिए फिर देखिए उसकी सहायता से आप कितने शीघ्र कैसी उत्तमता से कृतकार्य होते हैं और विघ्न कारणी बातें कैसे बात की बात में बतासा सी बिलाती हैं वरंच अपने भाव के विरुद्ध आप की अनुकूलता सम्पादन करें तो बात है क्योंकि जिसे आप अपना सहायकारी मानेंगे वह 'कर्तुम कर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ है' पर जब मानिए और स्नेह शास्त्र का यह वाक्य भी जानिए कि 'जहां तक हमारे लिए होगा वहां तक

अपने सहायक पर भार न डालेंगे' बस यही सब प्रकार की समुन्नति का सोपान है जिसका अवलंबन करने से अभीष्ट का प्राप्त करना सहज हो जायगा नहीं तो कोरी बातें बनाया कीजिय कभी कोई बात न बनेगी अंतर्यामी परमेश्वर के साहाय्य की आशा निरी ऊपरी बातों से कदापि नहीं पूर्ण होने की क्योंकि हरि जैसे को तैसा है

दशावतार।

जो केवल मुख से ईश्वर २ ब्रह्म २ वेद २ धर्म २ इत्यादि कहा करते हैं पर मानसिक नेत्रों से कभी उसके दर्शन करने की चेष्टा नहीं करते जिनकी हृदय भूमि केवल संसारिक चिंता अथवा मतवाद के तर्क बितर्क की विहार स्थली बन रही है भगवत्प्रेम लीला के योग्य न कभी थी न होने की संभावना है जिन्हें आर्य कवीश्वरों की रसमयी वाणी का गूढ़ार्थ विदित होना दुर्घट है वही लोग अवतारों के विषय में नाना संदेह उठाया करते हैं पर जो जानते हैं कि परम स्वतंत्र अनन्त नाम रूप गुण स्वभाव विशिष्ट परमात्मा किसी बंधन में बद्ध नहीं हैं केवल अपनी अप्रतर्क्य इच्छा से जब जैसा चाहता है कर उठाता है उन्हें एतद्विषयक संदेह कभी नहीं उठने के जो प्रमेश्वर अपने भक्तों की रुचि रखने मात्र के लिए उन के मनो मंदिर में उन्हीं की इच्छानुसार रूप धारण करके नाना प्रकार की लीला दिखलाया करता है उसका विशेष २ समयों पर विशेष २ कार्यों के लिए रूप विशेष धारण करना क्या आश्चर्य है? मतवादी कहा करें कि वह दिक्कालाद्यनवच्छिन्न होने के कारण एक देश में एक काल पर क्यों कर आविर्भाव कर सकता है? पर बुद्धिमान जानते हैं कि सर्वशक्तिमान शब्द का अर्थ ही यही है कि जो बातें तार्किक ज्ञान के द्वारा असंभव हों उन्हें कर दिखावे सर्वव्यापक भी बना रहना निरवयव भी बना रहना और किसी स्थान पर किसी रूप में प्रकाशितभी हो जाना आप की समझ में न आवै तो न सही पर आप यह कभी न सिद्ध कर सकेंगे कि ऐसा करना उसकी सामर्थ्य में नहीं है! यदि आप कहें कि तुम उसे मछली कछुआ इत्यादि बना के उसका उपहास करते हो तो हम भी कहेंगे कि हमारे प्रेम सिद्धांतमेंउपहास करना दूषित नहीं है बरंच प्रेमिक और प्रेम पात्र दोनों के मनोविनोद का एक अंग है पर आप उस को सन्मान कारक और मर्यादा

रक्षक बनते हुए भी उसे सृष्टि स्थिति संहारक काम के पागल बनाते हैं क्यों कि अपने हाथ से कोई वस्तु बनाना और आप ही उसे नष्ट भ्रष्ट कर देना बुद्धिमानी का काम नहीं है पर यहां इन बातों से क्या हाउ विषय तो पुराणों का है जो सर्वोत्कृष्ट श्रेणी के काव्य हैं जिन के समझने के लिए कविता रसिकों की बुद्धि चाहिए न कि शास्त्रार्थियों की ! शास्त्रार्थी की दृष्टि केवल अपनी बात पुष्ट करने और दूसरे की काटने पर रहती है किन्तु साहित्यवेत्ता यह देखते हैं कि अमुक की अमुक बात का उद्देश्य क्या है इस रीति से देखिए तो देख पड़ेगा कि जिन्होंने ईश्वर के रूप कर्मादि का अलंकारिक वर्णन किया है उन्होंने अपनी बुद्धि के वैभव और उस के न्याय दया सामर्थ्य सहिष्णुतादि अनेक गुणों का चित्र खींच दिखाया है जिन के मन की आंखों में पक्षपात इत्यादि दोष हैं उन्हें दोष ही दृष्टि पड़ते हैं पर जो सच मुच देख सकते हैं उन से छिपा नहीं है कि मत्स्यावतार की कथा से यह प्रमाणित होता है कि जैसे जल में मछली की गति का कहीं अवरोध नहीं है गहिराई उथलाई मंदता तीव्रता सरलता तिर्यकता सब उसके विचरण करने के लिए समान हैं और उस से बड़ा वहां कोई प्राणी नहीं होता वैसेही परमात्मा का संसार सागर में कहीं प्राप्त होना असंभव नहीं है छोटे बड़े दुःखी सुखी भले बुरे सब उस की दृष्टि में समान हैं तथा कोई उससे बड़ा क्या बराबर का भी नहीं है अथच वेद अर्थात् आर्यों की परम प्राचीन सत्य विद्या को यदि कोई राक्षस लुप्त किया चाहे तो परमेश्वर के मारे वह पानी का डूबा भी नहीं बच सकता है सबउस के आश्रितों को महा प्रलय में भी कोई खटका नहीं है इसी प्रकार कच्छपावतार की लीला से यह निश्चित होता है कि जब देवता और राक्षस अर्थात् आर्य एवं अनार्य एकत्रित होकर संसार सागर का मथन कर के उस में छिपे हुए रत्न प्रगट करने में कटि बद्ध होते हैं तो उन के उद्योग में सहारा देने के लिए भगवान की पीठ बड़ी मजबूत है फिर उन के परिश्रम का फल उन के जाति स्वभाव के आधीन है जिसे अमृत रुचै वह अमृत ले जिसे मदिरा भावै वह बोतलें लुढकावै वराह रूप का वर्णन यह दर्शाता है कि हिरण्याक्ष अर्थात् सुवर्ण (धन) ही पर दृष्टि रखने वाले राक्षस या यों कहो स्वार्थांध लालची जब पृथिवी को पाताल में लेजाने का उद्योग करते हैं अर्थात् सारा संसार रसातल को चला जाय इस की चिंता

नहीं करते केवल अपना घर भरने में तत्पर रहते हैं उन के दूरी करणार्थ परम देव सब प्रकार प्रस्तुत हैं चाहें, तुच्छ से तुच्छ और भयंकर से भयंकर रूप एवं स्वभाव धारण करना पड़े नृसिंह स्वरूप का आख्यान यह दिखलाता है कि जो प्रेम प्रमत्त भगवत् भजन के आगे न अपने जातीय सम्प्रदाय की चिन्ता करते हैं न मा बाप का संकोच रखते हैं न मरने जलने से डरते हैं उन के उद्धारार्थ प्रेम देव सब प्रकार प्रस्तुत रहते हैं प्रति पक्षी चाहे जैसा समर्थी हो चाहै जिस का बरदानी हो पर भगवान खंभा फाड़ के निकल आवैंगे और उसे मार गिरावैंगे ! वामन वपुष का चरित्र इस बात का प्रकाशक है कि ईश्वर का स्वरूप देश काल पात्रानुसार अत्यन्त छोटा भी है एवं अतिशय बड़ा भी है तथा देवताओं अर्थात् दिव्य गुण स्वभाव वालों के उपकारार्थ वे किसी बात में बंद नहीं हैं यदि हम स्वजातियों की भलाई के लिए भीख मांगें अथवा छल करें तो भी ईश्वर की दृष्टि में बुरे न ठहरेंगे बरंच उस के उदाहरण पर चलने वाले होंगे परशुराम जी का इतिहास इस आशय का प्रदर्शक है कि साहसी के लिए शस्त्र की आवश्यकता नहीं है बड़ी से बड़ी सेना में घुसजाने और सहस्रबाहु ऐसे का सामना करने को छोटी सी कुल्हाड़ी बहुत है पर इस अवतार की न कहीं विशेष रूप से पूजा होती है न इनदिनों इनके गुणों का कोई प्रयोजन है धर्मानुरागियों को शांति से बढ़ के कोई शस्त्र आवश्यक नहीं श्री रामचंद्र का तो कहनाही क्या है उन के व्रत में हम बहु २ लोक परलोक बनाने वाले उपदेश पासकते हैं जिनका वर्णन करने को बड़ा ग्रंथ चाहिए पर हां बालि को छिप के मारना और सीता जी का बिठूर भेज देना उन के पक्षमें कोई २ लोग अनुचित समझते हैं पर जब वह मन लगा के शरणागत की रक्षा और मित्र के उद्धार एवं प्रजा रंजन के कर्तव्य की महिमा का विचार करेंगे तो जान जायंगे कि भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम के यह दोनों काम राजधर्म एवं साधुनीति के विरुद्ध न थे इसी रीति से भगवान श्री कृष्ण परमात्मा का मानव चरित हमें धीरता वीरता गंभीरता व्यवहार कुशलता समयानुकूलता ब्रह्म विज्ञतादि आर्योचित गुण श्रेणी की शिक्षा देता है यद्यपि अनभिज्ञ लोगों ने उन्हें चोरी और जारी का कलंक लगाया है पर आजतक यह नहीं सिद्ध कर दिखाया कि किस वेद अथवा शास्त्र वा पुराण के किस स्थल पर तथा श्री मद्भागवत वा महा भारतादि किस धर्म ग्रंथ में कहां

पर लिखा है कि उन्हों ने अमुक के घर में अमुक समय सेंध देके वा भीत फांद के धन वस्त्र पात्रादि अपहरण किया रहा माखन सो ब्रज में (जहां एक २ गोप के घर सहस्रावधि गऊ थीं वहां) कौन सी बहुमूल्य वस्तु समझी जा सकती थी सो भी उन्हों ने के वर्ष की संभली हुई अवस्था में कै मन अथवा कै सेर चुरा के किसे हानि पहुंचाई यदि किसी सखी की प्रसन्नतार्थ बाललीला के अंतर्गत थोड़ा सा अल्पमूल्य पदार्थ उठा खाना वा फेंक देना चोरी समझा जाय तो समझनेवालों की समझ की बलिहारी है ! और सुनिए सोलह वर्ष की अवस्था में तो वह मथुरा ही चले गए थे इतने ही बीच में व्यभिचार भी कर लिया ! सो भी उन दिनों में जब भारत के मध्य भोजन वस्त्रादि के अभाव और नाना रोगों के प्रभाव से छोटी ही अवस्था में यौवन और यौवन काल में बुढ़ापा न आ जाता था ! भला इतनी कच्ची उमर में व्यभिचारी हो के कोई भी हाथी के दांत उखाड़ने बड़े २ बलिष्ट मनुष्यों को मारने के योग्य रह सकता है ? पर द्वेषियों को कौन समझावै कि भागवत भर में कोई शब्द वा संकेत भी ऐसा नहीं पाया जाता जो जार कर्म का द्योतन करता हो हां कवियों और प्रेमियों को अधिकार है कि चाहे जैसी पदावली में चाहे जिस आशय को लिख दिखावैं किन्तु उन के गूढ़ाशय का समझना हर एक का काम नहीं है अतः योगीश्वर कृष्णचन्द्र को कामुक समझना लोगों की समझ का फेर है ! बुधदेव के जीवनचरित्र से हम यह सीख सकते हैं कि ईश्वर २ वेद २ चिल्लाना व्यर्थ है जबतक जीव रक्षा परोपकार धर्म प्रचार के निमित्त आत्म विसर्जन न कर दें पर एतद्देशीय साधु समुदाय में प्रतिष्ठित बने रहने के लिए हमें मान्यग्रंथों का मौखिक आदर भी करते रहना चाहिए कल्कि स्वरूप का कर्तव्य तो सब जानते ही हैं कि कलियुग का प्राबल्य दमन और धर्म का पालन करने को भगवान अवतीर्ण होंगे क्योंकि जहां राजा प्रजा सभी स्वेच्छाचारी हों वहां धरती और धर्म परमेश्वर ही के रक्खे रह सकता है अब बतलाइए अवतार माननेवाले ईश्वर को कौन गाली देते हैं ? और न मानने वाले कहां का राज्य सौंपे देते हैं ? फिर किसी के सिद्धांत का खंडन करने की मनसा से अपना समय दूसरे की शांति आपस का सुख प्यार नष्ट करना निरा निष्प्रयोजन ही है कि और कुछ ?

प्राप्तिस्वीकार।

चातुर्यतार्णव—श्री बाबू बलनाथ साहब वकील हाईकोर्ट निर्मित-मूल्य ।) मिलने का पता ग्रन्थकार के पास प्रयाग-यह पहिला भाग है जिस में केवल वकील मुखतार आदि का विषय वर्णित है जब सब खंड छप जायंगे तब निश्चय सब प्रकार के लोगों के लिए उपकारी होगा क्योंकि इस भाग का रंग ढंग ग्रन्थ कर्ता महाशय की चतुरता एवं अनुभव शीलता का अच्छा परिचय देता है और आशा दिलाता है कि पूरा छप जाने और भली भांति प्रचार पाने पर देशवासियों में चातुर्य फैलाने के लिए अत्युपयोगी होगा।

हिन्दी उर्दू का नाटक—ग्रन्थकार वही दाम वही पता वही—इस का उद्देश्य अत्युत्तम है देवनागरी तथा उस के भक्तों और उरदू एवं उस के रसिकों की दशा अथच लक्षण उत्तम रीति से दिखाए हैं पर भाषा और कविता तथा नाट्य विधान में कहीं २ छोटे २ दोष भी रह गए हैं किन्तु जब हम देखते हैं कि दूसरे छोटे २ वकील मुखतार आदि जहां हिन्दी के नाम से मुंह बिचकाते हैं वहां एक ऐसे प्रतिष्टित सज्जन का निज भाषा पर इतना प्रेम है कि ग्रन्थ रचना और धन का व्यय का भार स्वीकार कर रक्खा है तो दोष देखने को जी नहीं चाहता संतोष स्नेह और आनंद के साथ प्रशंसा ही निकलती है जो अधिकांश में उचित भी है।

बाला अन्याय निदर्शन—श्रीयुत लाला लीलापति लिखित मूल्य /) मिलने का पता ग्रन्थ कर्ता के पास नयागंज आगरा—इस देश की स्त्रियों पर जो वर्तमान सामाजिक रीति के हाथों अन्याय होते रहते हैं उन का चित्र और युक्ति तथा प्रमाणों के द्वारा समयानुसार गृह देवियों की दशा सुधारने के उपाय भली भांति लिखे गए हैं पर ध्यान देने वाले कहां से आवैं?

बाल शिक्षा प्रथम भाग—रचयिता वही पता वही दाम दो आना धर्म शास्त्र और नीतिशास्त्र के वाक्य रत्न भाषानुवाद सहित देखना हो और अपने प्यारे बालकों का सचमुच जन्म सुधारना हो तो इसे अवश्य देखिए क्योंकि इस के निर्माण कर्त्ता लाला साहब भी एकही छिपे रुस्तम हैं चुपचाप बैठे २ एक न एक ऐसा दिव्य रत्न प्रकाश कर देते हैं कि बस हिन्दुओं का धर्म कर्म लोक परलोक सभी उस से आश्रय पा सकता है गत वर्ष मनुस्मृति का इच

निकाल के रख दिया था इस वर्ष इस पुस्तिका में कई एक नीत्याचार्य्यों के जौहर का नमूना दिखा दिया है ऊपर से तुर्रा यह कि दाम बहुत थोड़े और पक्षपात का नाम नहीं मत वाद से काम नहीं फिर भी इस के यथ उचित आदर न पावैं तो देश का दुर्भाग्य है।

गत मास की पहेलियों का उत्तर।

यद्यपि कई लोगों ने भेजा है पर निरा ऊटपटांग! जिस देश के लोगों की कविता में रुचि ही नहीं है सहृदयता की उमंग ही नहीं है वहां ऐसी मनोरंजक बातों तक क्यों कर बुद्धि पहुंचे ? पर हां हमें इस बात से संतोष हुआ कि पाठकों ने ध्यान दिया शायद कभी २ और २ लेख भी पढ़ते हों और पटना निवासी बाबू पत्तन लाल के उत्तरो से प्रसन्नता भी हुई कि ऐसे सुहृदय विद्यमान हैं जो बात की तह तक पहुंच जाने में पूर्ण रूप से जी लगाते हैं और अनेकांश में पहुंच भी जाते हैं इन्हों ने दूसरो और चौथी पहेलिका का उत्तर बहुत ही ठीक दिया है पांचवीं का भी टकसाल बाहर नहीं है पर तोसरो के विषय में हम स्वयं नहीं जानते कि चारा नामक कौन जंतु होता है ? कदाचित दोहा के लक्षण उस से मिलते हों पर पहिली का अर्थ बहुत खींच खांच से निकलता है! 'सरिता' का आधा सीता और नृपति का आधा पति निकालना जबरदस्ती है दोहे में 'सरोता' है भी नहीं बरंच सरिता है नृपति भी नही हैं नृप है अस्तु हम सब का उत्तर आप ही लिख देते हैं।

(१) बालूशाही नामक मिठाई है चार अक्षर के नाम को आधा२ कीजिए तो 'बालू' (सरिता में बसे) और 'शाही' अर्थात् राज्य (नृप आधीन) निकल आता है

(२) केरोसिन तेल की रोशनी है (बाबू पत्तन लाल साहब भी यही सोचे हैं)

(३) सूई है जिस का एक नेत्र (छिद्र) प्रत्यक्ष ही है और बिल बना के बसना तथा घटना बढ़ना कपड़े के संसर्ग में खुल जायगा।

(४) नारियल है (बा० प० ला० भी कहते हैं)

(५) बाबू साहब के मत से नाड़ो (नबज़) है और हो भी सकता है पर संस्कृत के कवियों ने 'खटमल' लिखा है हमारी समझ में भी वही बहुत ठीक है।

हमारे उत्साह दाता।

हमारे अपरैल वाले पत्र बंद कर देने के नोटिस पर कुछ सज्जनों ने ध्यान दिया है उन में से एक तो हमारे परम सहायक कोल्हापुर निवासी राव साहब श्रीमान राय सिंह देव वर्म्मा हैं जिन का रुपया पहिले ही से जमा है दूसरे हिन्दी के परमोत्साही दिल्ली निवासी श्री जगन्नाथ भारतीय हैं जिनका हमें पूरा विश्वास है और तीसरे हमारे मित्र पंडित शंकर दयालजी भट्ट कानपुर ही में हैं और आशा है कि निरालस भाव से मैनेजमेंट भी करेंगे इन सब को हमारा धन्यवाद है और निवेदन है कि यदि मैनेजरी का झगड़ा मेरे माथे न रहे और आप लोगों की इच्छा होतो एक साझा मैं भी ले लूंगा तथा कहिए तो सम्पादन का भार भी लिए रहूंगा पर ग्राहक बढ़ाने और हानि घटाने का उद्योग सब को करना पड़ेगा इस रीति से चार साझी तो हो गए रहे छः उन का बंदोबस्त हो जाय तो पत्र मजे में चला जायगा आमदनी बढ़ाने की फिक्र रखिएगा तो गांठ से दिया हुआ रु० कुछ अथवा पूरा फिर भी आवैगा रहा लाभ सो आपलोगों के उद्योग और ईश्वर की इच्छा पर निर्भर है मैं दिए हुए रु० लें से फेर लेने और लाभ में साझी होने से भी दूर रहूंगा सम्पादकता का भी शौक नहीं चर्राता पर पत्र का बना रहना चाहता हूं और केवल एक महीना रहगया है क्या छः साझी मिल जायंगी ? जो रुपया महीना देते रहें।

कई लोगों ने यह भी लिखा है कि ब्राह्मण हमारे पत्र में मिला दीजिए और सम्पादक का भार लेलीजिए तो हानि लाभ हम भुगत लेंगे, पर हम दूसरे पत्र में मिला देना नहीं पसंद करते सात वर्ष का पत्र नए पत्रों का आश्रित बनने से चल बसना उत्तम समझेगा हमें लिखने का साध पुजाने को द्विजपत्रिका, हिन्दोप्रदीप भारतमित्र भगवान ने दे रक्खे हैं फिर दूसरों में ब्राह्मण क्यों मिलावैं ? लाभ हानि के साझे और उन्नति के उद्योग की शर्त पर जो महाशय चाहैं ब्राह्मण में अपना पत्र मिला देने सकते हैं।

भ्रम है।

विद्याधर्मदीपिका सम्पादक पंडितवर श्री चंद्रशेखरधरमिश्र महोदय मई मास की उक्त पत्रिका में आज्ञा करते हैं कि 'गजल और लावनी आदि

के छंद व्रजभाषा में ठीक नहीं बरंच अत्यन्त कर्णाकमंद जंचते हैं' हम उन्हें स्मरण दिलाते हैं कि श्री शाहकुन्दन लाल (महात्मा ललित किशोरी) और नारायण स्वामी इत्यादि कई सज्जनों की बहुत सी गज़लें प्रसिद्ध हैं नमूने के लिए दो चार का मतला (टेक) सुन लीजिए।

यथा।

सुनिए जसोदा रानी या लाल की बड़ाई। सब लोक लाज यानें जमुना में धो बहाई॥

और

विनती कुंअरि किशोरी और मेरी मान मान मान। बिन चूक मान मोसों मती ठान ठान ठान॥

तथा।

देखो कहूं गलीन में वृषभाननंदिनी॥ ठुम २ धरै धरनिपं चरन गति गयंदिनी॥ इत्यादि।

इसी प्रकार। लावनी को यद्यपि देश के कई प्रांतों में बहुत चर्चा नहीं है तौ भी श्री राधाचरण गोस्वामी हमारे गुरुवर श्री ललिता प्रसाद जी त्रिवेदी (ललित कवि) तथा हम और कई एक और, कवियों ने बहुत सी लावनी लिखी हैं।

यथा।

सब गोपवधूटी भृकुटि सर्थनियन साधे। गिरि परै न गिरिवर आय कान्ह के कांधे॥

फिर।

अरी बतावै क्यों न हाल तू कौन ख्याल में है भटकी, कहीं अटकी, लिए मटकी जु फिरै मटकी मटकी॥

पुनः

दिन २ दीन दसा भारत की अधिक २ अधिकाई है। दीन बन्धु बिन, दीन की दीपत कोउ न सहाई है॥ इत्यादि।

यह सब ब्रजभाषा हैं और किसी कवि ने इन्हें कर्ण कटु नहीं बतलाया आशा है आप भी अच्छा न कहैं तो बुरा भी न ठहरावैंगे इस के अतिरिक्त और भी जिन २ छंदों के कहिए उन के नवीन तथा प्राचीन उदाहरण सेवा में निवेदित किए जायं पर खड़ी बोली में दोहा चौपाई क्या लावनी इत्यादि के सिवा सभी छंद स्वादु रहित होते हैं और होंगे नमूने के लिए ढूंढ़ने नहीं जाना कई पुस्तकें छपी हुई मौजूद हैं फिर यदि 'बहुत से सुजन' कहते हैं कि 'बिना ब्रजभाषा के विशुद्ध हिन्दी में कविता ...... ठीक नहीं हो सकती' वे क्या पाप करते हैं ? आप ने भी अपनी बासंती कविता में माधुर्य रक्षार्थ ब्रजभाषा का आश्रय लिया है फिर यदि काव्य रसिक लोग ब्रजभाषा ही को मधुर कविता के योग्य मानते हैं तो क्या अन्याय है ? हां यदि वृजभाषा और होती और खड़ी बोली और होती तो कविता न होने से निश्चय हिन्दी का 'भाग्य दोष' अथवा 'कलंक' था पर जब कि यह बात लाखों कोस नहीं है तो नागरी देवी का यही परम सौभाग्य और महद्यश समझना चाहिए कि वे दुनिया भर की सभ्य भाषाओं से इतनी अधिक श्रेष्ठता रखती हैं कि गद्य के समय और रूप तथा पद्य के अवसर अन्य छटा दिखला सकती हैं फिर हम नहीं जानते वे कैसे 'हिन्दी के हितैषी' हैं जो अपनी आदरणीया मातृ-भाषा को सभी काल में उस के स्वभाव विरुद्ध खड़ेही रखने का हठ करते रहते हैं संगीतवेता अनेक स्थल पर यदि 'मृदंग' शब्द को 'मृदौंग' न कहैं तो स्वर की पूर्णता नहीं होती इस में व्याकरणियों का शब्द शुद्धि विषयक आग्रह करना व्यर्थ है योंहीं कवि लोग यदि अवसर पड़ने पर माधुर्य एवं लावण्य के अनुरोध से शब्दों में कुछ परिवर्तन न करें तो निरसता कानों और प्राणों में खटकने लगती है इस बात के जाने बिना केवल गद्यलेखकों का तर्क वितर्क उठाना निरा भ्रम है ।

जय जानकीजीवन ।

प्रेमगंगतरंग

नाम

श्री मद्रामचरित्र

लाला तपसीराम सीतारामीय प्रणीत ।

यह पोथी श्रीकाशीजी की छपी, काग़ज़ बहुत ही उत्तम, बड़े पुष्ट अक्षरों में, अनेक पद और कवित्त और छन्द और रामकलेवा अष्टयाम प्रभृति और चरणचिन्ह चित्र सहित, २२८ पृष्टि, अच्छी बँधी हुई, हरि रसिकों के लिये विशेष सुखदाई और अवश्य देखने योग्य है ॥ यह पोथी ग्रन्थ कर्त्ता के पुत्र बाबू सीतारामशरण भगवानप्रसाद डेपुटि इन्स्पेक्टर स्कूल जिला पटना और बाबू सीतारामचन्द्र सबइन्सपेक्टर स्कूल बेतिया जिला चम्पारन के पास, और पटना बांकीपुर खड्गविलास प्रेस में, एक एक रुपये को मिलती है । १)

और श्री प्रेमगंगतरंग को प्रथम भाग कैथी में ।=)

Roman Primer.

रोमन् प्राइमर् नाम इङ्गरेज़ी अक्षरों में हिन्दुस्तानी इबारत् और नाम लिखने का तौर् ॥ मोल सिर्फ़ दो पैसे ।

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 MAY: 7 H. C. } NO. 10.

खण्ड ७ { कानपुर १५ मई हरिश्चन्द्र सं० ७। } संख्या १०।

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथाब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर।

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर।

गंगा जी की स्थिति ।

आज कल हिन्दू समुदाय में अनेक लोगों को दो बातों की धुन चढ़ी हुई है कि गंगा जी की आयु केवल आठ वर्ष के लगभग शेष रह गई है और गंगा जी सदा बनी रहेंगी इन दोनों मतों के लोगों ने अपने२ सिद्धांत के पुष्ट रखने में यथा संभव कोई युक्ति अथवा प्रमाण उठा नहीं रक्खे और काल के प्रभाव से हमारे धर्म ग्रंथों को पंडित नाम धारियों ने बना भी ऐसा ही रक्खा है कि मोम की नाक चाहे जिधर फेर लो चाहे जिस विषय के खंडन में कुछ वाक्य ढूंढ़ लीजिए चाहे जिस के मंडन में सभी मिल जायंगे पर हमारी समझ में इस प्रकार के झगड़े उठा के आपस में वैमनस्य बढ़ाना निरा व्यर्थ है विचार के देखिए तो हैं दोनों बातें सत्य देश काल और पात्र का विचार किए बिना शास्त्र के किसी वचन पर हठ करना अच्छा नहीं शास्त्रकारों की केवल एक ही प्रकार के लोगों पर दृष्टि न थी वे जानते थे कि 'भिन्न रुचिर्हि लोकः' अतः उन के वचनों में जहां भिन्नता पाई जाय वहां समझ लेना चाहिए कि वे त्रिकालदर्शी और सत्यवादी किसी विशेष कारण से विशेष रूप के जन समूह और विशेष समय के लिए जो कुछ लिख गए हैं वह है सत्य ही पर समझने वाला चाहिए इस रीति से हम देखते हैं कि इस समय के लोग पश्चिमीय विद्या के प्रभाव और अपने धर्म कर्म रीति नीति वस्तु व्यक्ति इत्यादि की ममता के अभाव से केवल रंग ही के भारतीय रह गए हैं सो भी मनों चरबी मिला साबुन मल२ कर चाहते हैं कि किसी प्रकार ऊपर का चमड़ा छिल जाय और भीतरी लाल२ रंगत निकल आवै तो अत्युत्तम है ऐसों के सामने ईश्वर ही की महिमा बनी रहे तो बड़ी बात है (क्योंकि उन के गुरु परम्परा के देश में नास्तिकता की छूत बढ़ती जाती है) वेद शास्त्र गंगा भवानी की तो बात ही क्या है इन का वास्तविक महत्व संस्कृत पढ़े बिना और प्राचीन काल के रस सिद्ध कवीश्वरों की लेखनी का गूढ़तत्व जाने बिना कदापि समझ में नहीं आने का उनके नाते इन्हें नागरी का काला अक्षर भैंस बराबर है बरंच भैंस दूध देती है किन्तु इन अक्षरों की चर्चा से इन के प्राण सूख जाते हैं इस से यह कहना चाहिए कि अक्षर काले बुखार के बराबर है ऊपर से प्रयाग यूनीवर्सिटी ने हिन्दी का गला काट वह पालिसी अवलम्बन की है कि आठ वर्ष में संस्कृत का प्रचार तो दूर रहा आश्चर्य नहीं कि हिन्दू जाति की लड़की

के नाम रखने के लिए शब्द भी न मिलें इस पर भी तुर्रा यह है कि जो लोग संस्कृत नागरी के ममत्व का अभिमान एवं अपने ऊपर आर्यत्व का गुमान रखते हैं उन में से बहुतेरों का सिद्धांत यह है कि 'माला कक्कड़ ठाकुर पत्थर गंगा निरबक पानी' सो पानी भी कैसा कि न सोडावाटर के समान जाति कुजाति का उच्छिष्ट न अरुणं प्रिया की भांति स्वादिष्ट फिर पीने और छूने में किसे भावे जब तक विलायत जा के और नाम रूप बदल के न आवे ! हाय गंगा जल एक दिन तुम इसी भारत में अमृतमय कहलाते थे पर आज नहरों के रूप में छिन्न भिन्न हो कर पराधीनता से बहे २ फिरते हो और खेतों को उपज के हक में विष का सा काम करते हो जिस धरती पर तुम ने आश्रय ले रक्खा है उस में लाखों असंस्कृत मृतक गाड़े जाते हैं करोड़ों निरपराधी जीव मारे जाते हैं जिस मेघमंडल की छाया में तुम्हारी स्थिति है उसे हवन का सुगंधित एवं गुण पूरित धुआं दुर्लभ हो गया है उस के स्थान पर पत्थर के कोयले और मट्टी के तेल का अरुचि कारक तथा दुर्गन्ध प्रसारक धूम छाया रहता है पान फूल धूप कर्पूर से तुम्हें सुवासित रखने वाले दिन २ दीन होते जाते हैं नगर भर का अघोर और कहीं २ बबूल की छाल के साथ सड़े हुए चमड़े का मानों पानी तथा अनाथ मनुष्य एवं पशुओं के बिन जले और अध जले सहस्रों मृत: शरीर तुम्हीं में फेंके जाते हैं फिर तुम अपना रूप गुण बदल डालो तो क्या दोष है ? भगवति गंगे ! क्या सर्व गुण हीन हिन्दुओं के हाथ से विडंबना सहन करतेहुए अभी तृप्त नहीं हुई हो जो आठ वर्ष और इन की तथा अपनी दुर्दशा देखने की इच्छा रखती हो ? तुम्हारा रहना तभी शोभा देता था जब सूर्यवंशावतंस मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीमान भगवान रामचन्द्र के वृद्ध प्रपितामह महाराज भगीरथ ने कई पीढ़ी की कठिन तपस्या के उपरांत तुम्हें प्राप्त किया था और उन के वंशजों ने भागीरथी नाम से तुम्हारा गुण गान करने में अपना गौरव मान रक्खा था और समस्त संसार को विश्वास करा दिया था कि परम प्रतापी रघुकुल के राजेंद्र गण श्रीमती भागीरथी को निज वंशजा कन्या की भांति आदर देने ही में अपना महत्व जानते हैं तदुपरांत महाराज शांतनु ने तुम्हें अपनी प्राणप्रिया बना के और वीरशिरोमणि भीष्मपितामह ने तुम्हारे ही नाते गांगेय पद पा के सारे जगत निश्चय करा दिया था कि विश्वविजयी चन्द्रवंशी महिपाल जन्हुनंदिनी को

अपनी कुल श्री का सम्मान, करते हैं जिस समय सूर्यचन्द्रवंश के गौरव्य को दुष्काल रूप राहु ने ग्रास करना आरंभ किया तो महामान्य विप्रवंश ने तुम्हारी महिमा रक्षित रखने का भार लिया और विद्या प्रतिष्ठादि गुण श्रेणी से भूषित होने पर भी किसी अन्य विषय का आश्रय न ले कर लोक परलोक का निर्वाह केवल तुम्हीं पर निर्भर कर के गंगापुत्र के नाम से अपना परिचय दिया पर आज तुम्हारे पिता पति पुत्र सभी के वंशधर सर्व लक्षण हीन सर्वथा दीन महा मलीन दशा में दलित हो रहे हैं बरंच अपने एक २ काम से सूर्य चंद्र एवं मुनि वृन्द का नाम डुबो रहे हैं फिर तुम किस मुख को आशा से संसार को सुख दिखाने का मानस करती हो? नहीं नहीं गंगा जी अब नहीं है! हम इतनी बक बक न जाने किस उमंग में कर गए भला होतीं तो भारत की यह दशा होती? जिन का नाम लेने से मन के पाप और तन के ताप का विनाश हो जाता है उन के समक्ष में यह कहां सम्भव था कि हम दुर्बुद्धि एवं दुर्गति के आधार बन जाते इस से निश्चय गंगा नहीं हैं केवल गंजेज़ (Ganges) नाम्नी नदी का जल मात्र अवशिष्ट है सो भी आश्चर्य नहीं कि आठ सात वर्ष में जाता रहे क्योंकि यहां के धन बल विद्या कृषि वाणिज्य शिल्प, सेवादि सभी निर्वाहोपयोगी उत्तम गुण और पदार्थ विदेश को लद गए फिर यदि पानी और मट्टी में भी कोई अच्छाई पाई जायगी तो क्या संभावना है कि हमारे हाथ बनी रहने पावेगी जहां नोन और घास तक टैक्स की छूत से नहीं बचे वहां जलकी बच रहनेकी भी क्या आशा है? बचे भी तो हमें क्या हम तो सामयिक नीति के वश 'अशनं वसनं वासो येषां चैवाविधानतः' का प्रत्यक्ष उदाहरण बन रहे हैं और बनते ही जाते हैं फिर हमारे लिए 'मगधे न समा काशी गंगाप्यङ्गार वाहिनी' वाला वाक्य क्यों न चरितार्थ होगा? यद्यपि चरितार्थ होही रहा है तौभी वर्तमान लक्षणों से देखि कौन सहृदय न मान लेगा कि यदि कलियुग का प्रभाव यों हीं बना रहा तो आठ वर्ष बीतते २ 'कलौ दश सहस्राणि विष्णु तिष्ठति मेदिनीं। तदर्द्धं जान्हवीतोयं तदर्द्धं ग्राम देवता' वाली भविष्यत वाणी को सफल करते हुए भगवती भागीरथी का सर्वथा लोप न हो जायगा।

अब रहा यह कथन कि गंगा जी सदा बनी रहेंगी सो इस रीति से सत्य है कि यदि प्रेम ईश्वर का रूप है और ईश्वर अनादि अनंत एवं सर्वथा

स्वतंत्र है तो संसार में चाहे कोटि विघ्न हों कोटि संकष्ट हों कि परन्तु प्रेमियों का प्रादुर्भाव समय २ पर होता ही रहैगा और उन की हृदय भूमि में भगवान प्रेम देव स्वेच्छानुसार विहार करते ही रहेंगे अथच विहार कभी अकेले होता नहीं है इस न्याय से उन के साथ सर्व शक्ति समूह का आविर्भाव होना स्वयं सिद्ध है और जहां और सब शक्ति होंगी वहां त्रितापहारिणी परमानन्द प्रसारिणी आदि शक्ति श्री गंगा महारानी क्यों न होंगी ? गंगा के बिना हमारे पाप सन्ताप कौन दूर कर सकता है ? और इन के दूर हुए बिना हमारा मनो मंदिर प्रेम लीला के योग्य क्यों कर हो सकेगा ? फिर यह माने बिना कैसे निर्वाह हो सकता है कि जिन के हृदय में आर्यत्व की उमंगें धर्म प्रेम सौजन्य की तरंगें कभी स्वप्न में भी क्षण भर को भी लहरायेंगी उन्हें गंगा छोड़ जायेंगी अथवा गंगा को वे कहीं जाने देंगे जिन्हों ने देववाणी एवं व्रजभाषा देवी की दया से जान लिया है कि भगवान वैकुण्ठ बिहारी का चरणामृत, देवाधि देव महादेव का शिरोभूषण, जगत पिता के कमंडलु की सिद्धि भारत माता के श्रृंगार की मौक्तिकमाला गंगा ही हैं हमारे परम विरागी महर्षि गण यदि त्रैलोक्य में किसी पदार्थ के अनुरागी थे तो इसी ब्रह्मद्रव के ! जिन्हें गंगा के दर्शन मज्जन पान नाम स्मरणादि में अनंत सुख का अनुभव होता है कहांतक कहिए गंगाजलबिन्दु में गोविन्द प्राप्त हो जाते हैं उन्हें छोड़ के गंगा कहां जा सकती हैं ? हमने माना कि ऐसे धन्यजन्मा इस काल में थोड़े हैं बरंच सभी काल में थोड़े होते हैं पर यदि गंगा वही हैं जिन्हें हमारे सहारसास्वादनु रसिक कविवृन्द अपनी हृदय हारिणी सहृदय हृदय विहारिणी बाणी का विहारस्थल बनाते हैं तो ऐसों ही के लिए हैं जो अपने प्रेम प्रभाव से जगदीश्वर तक को मनमाना नाच नचा सकते हैं भला ऐसों का सानिध्य छोड़ के गंगामाई किस सुख के लिए कहीं जा सकती हैं ? क्या लेके जायेंगी ? महिमा ? वह तो वास्तव में प्रेम ही की महिमा का नामान्तर है प्रेम न हो तो तीर्थ देवता इत्यादि क्या हैं परमेश्वर स्वयं कुछ नहीं है और प्रेम की झलक दिखाई देने पर अकेली गंगा क्या है 'सर्वाणि तीर्थानि वसंति तत्र यत्राच्युतो दार कथा प्रसंगः' हां अच्युत नामधारी विश्वविहारी का अभाव हो जाय एवं उन के गुण गाने वाले प्रेम मदिरा के मतवाले दैवी जीवों का तिरोभाव हो जाय तो गंगा का भी अद-

र्शन युक्ति युक्त हो सकता है पर ऐसा आर्यावर्त में जन्म पाने वालों अथच आस्तिक कहलाने वालों की समझ में क्या कभी मन में भी नहीं आने का फिर कोई कैसे यह कह सकता है कि गंगा का महत्व जाता रहेगा ? रहा जल, सो भौतिक पदार्थ है उसे यदि किसी में सामर्थ्य हो तो आठ वर्ष में काहे को आज ही जहां चाहे उठा ले जाय भक्त जन 'सब जल गंगा जल भए जब मन आय राम' के अनुसार जो जल पावैंगे उसी को गंगा मान लेंगे कुछ भी बाह्य पदार्थ न होने पर भी उन की मनोभूमि में प्रेम लहरी उच्छलित होने पर नेत्र द्वारा आनंदाश्रुमयी प्रेम गंगा का प्रवाह कौन रोक सकता है ? फिर हमारे इस कहने में क्या झूठ है कि जब तक ईश्वर धर्म प्रेम प्रेमिक भारत भूमि आदि नाम बने हैं तब तक गंगा भी अवश्य ही बनी रहें-गी और इस प्रकार पूर्वोक्त दोनों सिद्धांत सत्य हैं केवल विवाद मिथ्या है ।

बात ।

यदि हम वैद्य होते तो कफ और पित्त के मध्यवर्ती बात की व्याख्या करते तथा भूगोलवेत्ता होते तो किसी देश के जल बात का वर्णन करते किन्तु इन दोनों विषयों से हमें एक बात कहने का भी प्रयोजन नहीं है इस से केवल उसी बात के ऊपर दो चार बात लिखते हैं जो हमारे तुम्हारे सम्भाषण के समय मुख से निकल २ के परस्पर हृदयस्थ भाव प्रकाशित करती रहती है सच पूछिए तो इस बात की भी क्या ही बात है जिस के प्रभाव से मानव जाति समस्त जीवधारियों की शिरोमणि—अशरफुल मखलूकात—कहलाती है शुकसारिकादि पक्षी केवल थोड़ी सी समझने योग्य बातें उच्चरित कर सकते हैं इसी से अन्य नभचारियों की अपेक्षा आदृत समझी जाते हैं फिर कौन न मान लेगा कि बात की बड़ी बात है हां बात की बात इतनी बड़ी है कि परमात्मा को सब लोग निराकार कहते हैं तो भी इस का सम्बन्ध उस के साथ लगाए रहते हैं वेद ईश्वर का वचन है कुरआनशरीफ़ कलामुल्लाह है होली बाइबिल वर्ड आफ़ गाड है यह वचन कलाम और वर्ड बात ही के पर्याय हैं जो प्रत्यक्ष में मुख के बिना स्थिति नहीं कर सकते पर बात की महिमा के अनुरोध से सभी धर्मावलम्बियों ने " बिन बानी वक्ता बड़ योगी " वाली बात मान रक्खी है यदि कोई न माने तो लाखों बातें बना के मनाने पर कटिबद्ध

रहते हैं यहां तक कि प्रेम सिद्धांती लोग निरवयव नाम से मुंह बिचकावेंगे "अपाणिपादो जवनो ग्रहीता' इत्यादि पर हठ करनेवाले को यह कहके बातों में उड़ावेंगे कि " हम लंगड़े लूले ईश्वर को नहीं मान सकते हमारा प्यारा तो कोटि काम सुन्दर श्याम वरण विशिष्ट है निराकार शब्द का अर्थ श्री शालिग्राम शिला है जो उस की श्यामता का द्योतन करती है अथवा योगा-भ्यास का आरंभ करने वाले को आंखें मून्दने पर जो कुछ पहिले दिखाई देता है वह निराकार अर्थात् बिलकुल काला रंग है' सिद्धांत यह कि रंग रूप रहित को सब रंग रंजित एवं अनेक रूप सहित ठहरावेंगे किन्तु कानों अथवा प्राणों वा दोनों को प्रेम रस से सिंचित करनेवाली उनकी मधुर मनो-हर बातों के मजे से अपने को वंचित न रहने देंगे ! जब परमेश्वर तक बात का प्रभाव पहुंचा हुआ है तो हमारी कौन बात रही ? हम लोगों के तो 'गात माहिं बात करामात है' नाना शास्त्र पुराण इतिहास काव्य कोश इत्यादि सब बात ही के फैलाव हैं जिन के मध्य एक २ बात ऐसी पाई जाती है जो मन बुद्धि चित्त को अपूर्व दशा में ले जाने वाली अथच लोक परलोक में सब बात बनानेवाली है यद्यपि बात का कोई रूप नहीं बतला सकता कि कैसा है पर बुद्धि दौड़ाइए तो ईश्वर की भांति इस के भी अगणित ही रूप पाइ-एगा बड़ी बात छोटी बात सीधी बात टेढ़ी बात खरी बात खोटी बात मीठी बात कड़वी बात भली बात बुरी बात सुहाती बात लगती बात इत्यादि सब बात ही तो हैं ? बात के काम भी इसी भांति अनेक देखने में आते हैं प्रीति बैर सुख दुःख श्रद्धा घृणा उत्साह अनुत्साहादि जितनी उत्तमता और सहज-तया बात के द्वारा विदित हो सकते हैं दूसरी रीति से वैसी सुविधा ही नहीं घर बैठे लाखों कोस का समाचार मुख और लेखनी से निर्गत बात ही बतला सकती है डाकखाने अथवा तारघर के सहारे से बात को बात में चाहे जहां की जो बात हो जान सकते हैं इस के अतिरिक्त बात बनती है बात बिगड़ती है बात आ पड़ती है बात जाती रहती है बात खुलती है बात छिपती है बात चलती है बात अड़ती है बात जमती है बात उखड़ती है हमारे तुम्हारे भी सभी काम बात ही पर निर्भर करते हैं, "बातहि हाथी पाइए, बातहि हाथी पांव' बात ही से पराए अपने और अपने पराए हो जाते हैं मक्खी चूस उदार तथा उदार स्वल्पव्ययी, कापुरुष युद्धोत्साही एवं युद्ध प्रिय शान्ति शील, कुमार्गी

सुपथगामी अथच कुपंथी कुराही इत्यादि बन जाते हैं बात का तत्व समझना हर एक का काम नहीं है और दूसरों की समझ पर आधिपत्य जमाने योग्य बात गढ़ सकना भी ऐसों वैसों का साध्य नहीं है बड़े २ विज्ञवरों तथा महा २ कवीश्वरों के जीवन बातही के समझने समझाने में व्यतीत हो जाते हैं सहृदयगण की बात के आनन्द के आगे सारे संसार तुच्छ जचता है बालकों की तोतली बातें सुंदरियों की मीठी२ प्यारी२ बातें सत्कवियों की रसीली बातें सुवक्ताओं की प्रभावशालिनी बातें जिस के जी को और का और न कर दें उसे पशु नहीं पाषाण खंड कहना चाहिए क्योंकि कुत्ते बिल्ली आदि को विशेष समझ नहीं होती तो भी पुचकार के तूतू पूसी २ इत्यादि बातें कह दो तो भावार्थ समझ के यथा सामर्थ्य स्नेह प्रदर्शन करने लगते हैं फिर वह मनुष्य कैसा जिस के चित्त पर दूसरे हृदयवान की बात का असर न हो बात वह आदरणीय बात है कि भले मानस बात और बाप को एक समझते हैं हाथी के दांत की भांति उनके मुख से एकबार कोईबात निकल आनेपर फिर कदापि नहीं पलटसकती हमारे परम पूजनीय आर्यगण अपनी बात का इतना पक्ष करते थे कि 'तन तिय तनय धाम धन धरनी। सत्य संध कहं तृन सम बरनी' अथच 'प्रानन ते सुत अधिक है सुत ते अधिक परान। ते दूनो दसरथ तजे बचन न दीन्हों जान।' इत्यादि उन की अक्षर सम्बद्धा कीर्ति सदा संसार पट्टिका पर सोने के अक्षरों से लिखी रहेगी पर आज कल के बहुतेरे भारत कुपुत्रों ने यह ढंग पकड़ रक्खा है कि 'मर्द की जबान (बात का उदय स्थान) और गाड़ी का पहिया चलता ही फिरता रहता है' आज और बातें हैं कलही स्वार्थांधता के बश हुजूरों की मरजी के मुवाफ़िक़ दूसरी बातें हो जाने में तनिक भी विलंब की संभावना नहीं है यद्यपि कभी २ अवसर पड़ने पर बात के कुछ अंश का कुछ रंगढंग परिवर्तित कर लेना नीति विरुद्ध नहीं है पर कब? जात्योपकार, देशोद्धार, प्रेमप्रचार आदि के समय न कि पापी पेट के लिए! एक हमलोग हैं जिन्हें आर्यकुलरत्नों के अनुगमन की सामर्थ्य नहीं है किन्तु हिन्दुस्तानियों के नाम पर कलंक लगानेवालों के भी सहमार्गी बनने में घिन लगती है इससे यह रीति अंगीकार कर रक्खी है कि चाहे कोई बड़ा बतकहा अर्थात् बातूनी कहै चाहे यह समझै कि बात कहने का भी शऊर नहीं है किन्तु अपनी मति के अनुसार ऐसी बातें बनाते रहना चाहिए जिन कोई न कोई

किसी न किसी के वास्तविक हित की बात निकलती रहे पर खेद है कि हमारी बातें सुनने वाले उंगलियों ही पर गिनने भर को हैं इस से 'बात बात में बात' निकालने का उत्साह नहीं होता अपने जी को 'क्या बने बात जहां बात बनाए न बने' इत्यादि विदग्धालापों की लेखनी से निकली हुई बातें सुना के कुछ फुसला लेते हैं और बिन बात की बात को बात का बतंगड़ समझ के बहुत बात बढ़ाने से हाथ समेट लेना ही समझते हैं कि अच्छी बात है।

हा ! हा !! हा !!!

हाय अभागिनी भारत भूमि ! तेरे सभी रत्न खोते जाते हैं १५ अप्रिल को मुरादाबाद के हिन्दुओं की शोभा श्रीमान मुंशी इन्द्रमणि महोदय भी इस पाप पूरित संसार से चल बसे यद्यपि इन का शरीर अत्यंत दुर्बल था अवस्था भी ६६ वर्ष की थी तथा दो वर्ष से रुग्ण रहते थे पर हमने अपना एक पुरुष रत्न खोया है और आज उस के स्थान पर स्थापित होने के योग्य कोई नहीं देखते फिर कैसे हाय २ न करें यह महात्मा फारसी और अरबी के एक ही पंडित थे यदि कहीं कोई इन के जोड़ का होगा भी तो अपने घर में बैठा पेट पाल रहा होगा फिर हमारे किस काम का ? यह यद्यपि छाती ठोंक २ के सभाओं में खड़े हो २ कर झूठ मूठ देश भक्ति के गीत गाने वालों में से न थे साधारण समुदाय की रीति नीति से कुछ भिन्नता भी रखते थे किन्तु इस में संदेह नहीं है कि आर्य गौरव की रक्षा में एक सच्चे उत्साही और निर्भय व्यक्ति थे अथच संस्कृत के विद्वान एवं रसज्ञ होने के कारण उन हिन्दू नाम पर कलंक लगानेवालों के लिए उदाहरण स्वरूप थे जो स्वार्थ वशतः विदेशी भाषाएं तो वर्षों रटा करते हैं पर घर के रंजीपुंजी होने पर भी आर्य भाषा पर तनिक भी ध्यान नहीं देते ! यों दोष दर्शी लोग यह आक्षेप लगा सकते हैं कि इन्हों ने अपना बहुत सा समय मत वाद में बिता के तोहफतुल् इसलाम मौलूद हिन्द इत्यादि कई एक झगड़े के ग्रन्थ बना के बहुत से मुसलमान

भाइयों का जी दुखाया था पर विचार शक्ति इसके लिए इन्हें दूषित नहीं ठहरा सकती क्योंकि झगड़े का बीज बोने वाला निंदनीय होता है न कि झगड़ालू का मुख मर्दन करने वाला! पहिले थोड़े से मतवादियों ने हमारे धर्मग्रन्थों और पूज्य पुरुषों को नीच वाक्य न लिखे होते तो मुंशी जी को 'शाठ्यं कुर्यात शठम्प्रति' का मार्ग ग्रहण करने की कोई आवश्यकता न थी परमेश्वर करे सर्व धर्मावलम्बीगण एक दूसरे के साथ भ्रातृ भाव से रहना सीख जांय पर न करे परमात्मा कि कोई समुदाय किसी तुच्छ मतिवाले निंदक का अन्याय पूर्ण साहस बढ़ने दे! मुंशी महाशय ने रामपुर के पड़ोस रहकर (जहां कभीर हिन्दुओं को शंख तक बजाने पर आपदा घेरती रही है) और साधारण दशा में होने पर साहस पूर्वक अपने मृतक जाति वाले भाइयों का पक्ष लिया था और मरण काल तक स्थिर चित्तता के साथ भगवान का स्मरण किया था फिर हम क्यों न खेद पूरित हृदय से कहें, हा आर्य वीर! हा पुरुष रत्न! हा मुंशी इन्द्रमणि!

समालोचना ।

सत्य धर्म्म मुक्तावली—स्वर्गवासी पंडित श्रद्धाराम द्वारा लिखित और उन की विधवा महताब कुंवरि कर्तृक प्रकाशित मूल्य ।≤) मिलने का ठिकाना हरि ज्ञान मंदिर नगर फुल्लौर ज़िला जालंधर (पंजाब) यों तो भगवान के भजन सम्बन्धी गीतों का क्या ही कहना है मनुष्य की आत्मा के लिए सब प्रकार से हित कारक हो हैं पर काव्य रसिकों के लिए विशेष स्वादिष्ट नहीं है तथापि एक पंजाबी की लेखनी से ऐसी हिन्दी भी बहुत कुछ समझना चाहिए बीसियों पश्चिमोत्तर देशियों से तो इतनी भी नहीं बनती।

असंभव है ।

प्रेम के बिना आत्मिक शांति असम्भव है। हिन्दी का पूर्ण प्रचार हुए बिना हिन्दुओं का उद्धार असंभव है। हिन्दुओं के भली भांति सुधरे बिना हिन्दुस्तान का सुधार असम्भव है। दूसरों के भरोसे अपनी भलाई की आशा करने पर यथार्थ सिद्धि असंभव है दूसरों के भरोसे अपनी भलाई की आशा करने पर यथर्थ सिद्धि असंभव है। भय लज्जा और धर्माधर्म का विचार रखने में संसार के काम चलना असंभव है। कपट त्यागे बिना सच्ची मित्रता असंभव है। कुपथ्य करने से रोग की शांति असंभव है। स्वार्थी से वास्तविक परोपकार असंभव है। उदार पुरुष को धन का संकोच न होना असंभव है। ईश्वर की सर्वव्यापकता के विश्वासी से पाप कर्म असंभव है। संगीत साहित्य और सौंदर्य के स्वाद बिना सहृदयता असंभव है। दो चार बार धोखा खाए बिना अनुभव शीलता असंभव है। प्रजा को संतुष्ट रक्खे बिना राज्य की चिरस्थायिता असंभव है। अदालत में जा के सत्यवादी बना रहना असंभव है। कपट का भंडा फूट जाने पर संभ्रम रहना असंभव है। मतवादी में धार्मिकता असम्भव है। धन की उन्नति बिना किसी लौकिक विषय की उन्नति असम्भव है। गोरे रंग वालों से निष्पक्षता असम्भव है। जिस विषय में पूरा अनुभव न हो उस में मुंह खोल के विज्ञ मंडली के मध्य प्रशंसा पाना असम्भव है। शास्त्रार्थ से ईश्वर का सिद्ध कर देना असम्भव है। दुःख और दुर्व्यसन से पूर्णतया बचे हुए जीवन यात्रा असम्भव है। बन्धु विरोध कर के लाख चतुरता के अच्छत सुख सम्पति बनाए रखना असंभव है। निरुत्साही से कोई काम होना असंभव है। प्रजा विरोधी से राजभक्ति असंभव है। इन सिद्धांतों का अयथार्थ ठहराने की मनसा से विवाद उठा के जय लाभ करना असंभव है।

✓ स्फुट कविता (सैना वर्णन)

कहूं घन सी गरजैं गज राजि । कहूं मधि खूदहिं कूदहिं बाजि ॥
कहूं झमकैं रथ भांतिन भांति । कहूं फबि फैलि पदातिनु पांति ॥
लसै अति सेन मनो चतुरंग । फबी फहराहिं धजा रंग रंग ॥
बिराजहिं बीर सजी तन त्रान । गहे कोउ शूल कोउ धनु बान ॥
लिए कर पट्टिश तोमर कोय । जिन्हैं लखि कालहु को भय होय ॥

चमकि रही चहुं घां असि नग्न । सकैं कारि पर्वतहूं कहं भग्न ॥
चढ़ो बरजोर भयंकर कोप । करैं छिन माहिं त्रिलोकहि लोप ॥
पढ़ै बिरदावलि बंदि अनत्य । सुनै सहमैं सगरे रिपु जुत्थ ॥
बढ़ै बर ज्वान और उमंग । चढ़ै चित कोटि गुनो रन रंग ॥
लहि रन मत्त भई भट भीर । भयो धुनि है जय श्री रघुबीर ॥

अन्यच्च ।

चले भले कर धर बीर खड्ग को । धरैं न जो कबहुंक पृष्ठ पग्ग को ॥
चहैं सदा निज नृप जीत चित्त ते । डरैं नहीं जम सम हू अमित्र ते ॥
गनैं रहैं तन तृन प्रान देह मैं । सनै रहैं उनमत युद्ध नेह में ॥
करें नहीं धन जन मोह आपने । धरे रहैं कर पर प्रान आपने ॥

इत्यादि ।

पहेली ।

बातें बहुत छोटी है पर समझ जाइए तो जानें ! उत्तर लिख भेजने पर एक पुस्तक भेंट करेंगे नहीं तो दूसरी बार बतला भी देंगे।

आधो सरीता मैं बसै, आधो नृप आधीन ।
अजब मिठाई भी भरो, नाम कहो पर कौन ॥ १ ॥
दिखरावै सब वस्तु पै, करै नैन बेकाम ।
लोगो करि राख्यो सबहिं, चतुर बतावो नाम ॥ २ ॥
एक नैन पर काग नहिं, बिन कवि कहैं नाम ।
घटै बढ़ै ससि सिंधु नहिं, कौन वस्तु बड़ भाग ॥ ३ ॥
सुख बसत पै खग नहीं, जल जुत पै घन नाहिं ।
त्रिनयन पै शंकर नहीं, कहो समुझि मन माहिं ॥ ४ ॥
बकल पिये राक्षस नहीं, बेगि चलै नहिं पौन ।
अंतरध्यामी सिद्ध नहिं, कहो वस्तु वह कौन ॥ ५ ॥

फिर कभी

दैवी शक्ति ।

दैवी शक्ति ईश्वरीय शक्ति महा शक्ति अथवा परम शक्ति वास्तव में कोई दृश्य पदार्थ नहीं है केवल एक ऐसा वांछनीय गुण है कि जिस के बिना हम

तुम तो क्या बड़े २ देवता भी अशक्त रहते हैं उस के प्रादुर्भाव की कथा मा-र्कण्डेय पुराण में इस प्रकार लिखी है कि जब महिषासुर के प्रबल अन्याय से त्रैलोक्य में अत्यंत व्याकुलता फैल गई देवता ऋषि मुनि मनुष्य पशुपक्षी सब उस के हाथों से व्यथित हुए तब देवताओं ने अपने तथा समस्त संसार के दुःख दूर करने के मानस से उस राक्षसेंद्र के साथ युद्ध किया पर उसने एक२ कर के इंद्र वरुण कुबेरादि अखिल सुर नायकों को परास्त कर दिया उस समय सब देव मंडली एकत्रित होके इस के दमन का विचार करने बैठी तो सभों के तेज की एकत्रिता ने मूर्तिमान होकर दर्शन दिया वह मूर्ति ऐसी सुंदर ऐसी तेजस्विनी ऐसी संतोष दायिनी थी कि देवताओं को देखते ही विश्वास हो गया कि बस हमारा उद्धार इसी से होगा और उसी समय सभोंने अपने २ सर्वोत्तम वस्त्र शस्त्रादि उसे अर्पण कर दिए अथ च उसने परम पराक्रमी शत्रु का विनाश कर के चारो ओर सुख संपत्ति प्रकाश कर दी वही भगवती अर्थात् भगवान की आदि शक्ति विष्णु माया महादेवी है जो उपा-सकों की रुचि के अनुसार अनेक नाम अनेक रूप धारण कर के सदा सब कहीं सब के सर्व कार्य सिद्ध करती है प्रतिमा और पुराण के द्वेषी या यों कही उनका तत्व समझने की बुद्धि से रहित लोग ऐसे उपाख्यानों में भांति २ के कुतर्क उठाया करते हैं पर सच्चे विचार शील सज्जन इस कथा से यह गूढ़ार्थ निकाल सकते हैं कि अपना और पराया उपकार चाहने वाले प्रकाशित चेता जिस कठिनतम कार्य को अकेले नहीं सिद्ध कर सकते उस में अपने से स्वभाव वाले अनेक लोगों को एकत्र कर के एक चित्तता के साथ सच्चे जोश तद्विषयक विचार में मग्न हो जाते हैं उस समय उन सब को एक ऐसी अनिर्वचनीय ज्योति दिखाई देती है जो निस्सन्देह परमात्माही की शक्ति है जिसे उस का दर्शन हो जाता है उसे अपनी अभीष्ट सिद्धि का यहां तक पूर्ण विश्वास हो जाता है कि वह अपने पास की सब से अधिक मूल्यवान वस्तु वरंच मान प्राण सर्वस्व उसी की भेंट कर देता है और उस की प्रसन्नता के द्वारा मन माना फल सहज में प्राप्त करलेता है पाठक महाशय विचार के देखिए तो यह वही आदि देवी है जिसे हम अपनी मोटी भाषा में एकता अथवा प्रेम शक्ति वा प्रेम देव की मूर्ति कहते हैं इस के रूप गुण स्वभावादि की महिमा का कहना सुनना समझना हमारी तुम्हारी सामर्थ्य से दूर है पर समझने

वाले कह गए हैं कुछ समझो चाहे न समझो किन्तु इसे अपने प्रेम प्रतिष्ठा का आधार बना के अपना सर्वस्व इसी के चरण पर चढ़ा देव तो स्वयं देख लोगे कि सब प्रकार से सब कुछ इसी की दया से प्राप्त हो जायगा पर इतना स्मरण रक्खो कि यह कपटियों का काम है जो सच्चे अंतःकरण से इस पर लौ लगावैगा वही अपना मनोरथ पावैगा।

आपने यदि किसी बावरी मंत्र में भी सुना हो कि 'मेरी भक्ति गुरु की शक्ति' और इस का अर्थ विचारा हो तो समझ सकते हैं कि परम गुरु परमेश्वर अथवा गौरव विशिष्ट यावत् वस्तु व्यक्ति गुण इत्यादि हैं सब की शक्ति का आविर्भाव हमारी भक्ति अर्थात् सच्चे जी के सरल भाव ही पर निर्भर है यदि हम में भक्ति न होगी तो हमारे लिए किसी की कोई शक्ति कुछ भी अस्तित्व नहीं रखती! प्राचीन सुलेखकों का वाक्य है कि यों तो ईश्वर अनन्त शक्ति सम्पन्न है किन्तु उस की मुख्य शक्ति यह है श्री शक्ति अर्थात् धन ऐश्वर्य, भू शक्ति अर्थात् पृथिवी एवं तत् सम्बन्धी पदार्थों का अधिकार, लीला शक्ति अर्थात् तन मन इत्यादि संबंधी नाना प्रकार के उपभोग, लक्ष्मी अर्थात् शुभ लक्षण, अथवा सम्पत्ति सरस्वती अर्थात् विद्या और दुर्गा अर्थात् वीरता इत्यादि पर बताओ तो कि भारत संतान को आज इन में से कौन सी शक्ति प्राप्त है? जहां पूजनीय देवताओं तक की मूर्ति तथा मंदिर निरापद रहने की शक्ति नहीं रखते वहां मनुष्य किस खेत की मूली है? पर इस अशक्तिता का कारण जानते हो क्या है? सुन रक्खो समझ रक्खो कि सारी शक्ति उसी आदि शक्ति के अंश हैं जिस का हम आरंभ में उल्लेख कर चुके हैं और उस की प्राप्ति का एक मात्र उपाय भक्ति है अथच भक्ति वह गुण है जो अपने आगे तन मन धन लोक परलोक धर्म कर्म विद्या प्रतिष्ठादि किसी को कुछ नहीं समझती बस उसी का अवलम्बन करो उस की यह आज्ञा वेद वाक्य समझो कि प्रेम पात्र के ऊपर सब कुछ वार देना चाहिए फिर देख लोगे कि तुम्हारा जीवन सर्व शक्ति मात्र का विहारस्थल बन जायगा और कभी कहीं कुछ भी तुम्हारे लिए दुर्लभ न रहेगा।

देखिये तो।

(अवश्य आद्योपांत पढ़िए)

यों तो सभी देशों का गौरव वहां के शूर सती और कवियों पर निर्भर होता है किन्तु हमारा भारतवर्ष सदा से इन्हीं पुरुषरत्नों के द्वारा अलंकृत रहा है आजकल इस की जो कुछ दुर्दशा हो रही है उसके विशेष कारणों में से एक यह भी है कि बहुत दिन से ऐसे लोगों का चरित्र सर्व साधारण को भली भांति नहीं विदित होता जिन्होंने बरसों स्कूल में पढ़ कर बड़े २ पद प्राप्त किए हैं वे भी बहुधा नहीं ही जानते कि हमारे देश में कब किस समय कौन २ उत्साही वीर पतिप्राणा स्त्री रत्न एवं रससिद्ध कवीश्वर हुए हैं अथवा हैं और इस प्रकार का ज्ञान न होने से देश में मनुष्यजीवन को सुशोभित करनेवाले सदगुणों का पूर्णरूप से प्रचार होना दुर्घट है इस अभाव के दूर करने की मनसा से देश भक्तों और विद्यारसिकों की सेवा में हमारा सविनय निवेदन है कि जो सज्जन भूतकाल के तथा वर्तमान समय के वीर पुरुषों पतिव्रतास्त्रियों अथच कवियों का बृत्तांत जानते हों वह कृपाकर के हमारे पास लिख भेजें तो भारतवर्ष का बड़ा उपकार होना संभावित है इस देश में ऐसा स्थान बिरलाही होगा जहां सौ पचास वर्ष के इधर उधर किसी न किसी घराने में कोई न कोई जाति और देश को भूषित करने वाले पुरुष अथवा स्त्री ने जन्म न गृहण किया हो ऐसों का चरित्र एकत्रित करने मे प्रचलित गीतों और कविताओं (जो दिहात के स्त्री पुरुष बहुधा गाया करते हैं वा भाट लोग कहते रहते हैं) तथा बृद्ध लोगों से बहुत कुछ सहायता मिलसकती है पर इस प्रकार की बातें संगृह करना एक दो मनुष्यों का काम नहीं हैं इससे सहृदय मात्र को हम पर कृपा कर के देश की कल्याण साधनार्थ परिश्रम करके लिख भेजना चाहिए कि किस ज़िले परगने के किस नगर अथवा ग्राम में किस संवत में किस कुल के मध्य किस साहसी व्यक्ति ने जन्म लिया उस के माता पितादि का नाम क्या था औरकिस २ उद्देश्य से कब २ किस २ के प्रति कहां अपने अलौकिक गुण का प्रकाश किया यों हीं कब कहां किस के गृह में किस के गर्भ से किस पतिव्रता

ने प्रादुर्भाव किया और किस वंश के कौन से बड़भागी के साथ व्याही गई तथा क्योंकर पवित्र प्रेम का परिचय देकर जीवनयात्रा समाप्त की एवं उस का सतीचौरा किस स्थान पर है ? इसी प्रकार कब कहां किस कुल में किस कविवर ने जन्मधारण किया किस राजसभा अथवा किस रीति से निर्वाह किया वा करते हैं कौन २ से ग्रंथ निर्माण किए उन ग्रंथों की पूरी प्रति अथवा कुछ कविता भी लिख भेजनी चाहिए यदि संभव हो तो उन का चित्र वा हस्त लिपि भी भेजने तथा भिजवाने का यत्न कर्तव्य है शिवसिंहसरोज में जिन २ कवियों की कथा लिखी है उस के अतिरिक्त कुछ और विशेष वृत ज्ञात हो वा अन्यान कवियों का चरित्र अवगत हो तो लिखना चाहिए आल्हा, लोरीक, विजयमल्ल, सल्हेस, नयकावनिजरवा, गोपीचंद, भरतरी, अमरसिंह का ख्याल, सतीचंद्रावली का गीत, इत्यादि एवं इसी प्रकार के और २ गीत कवित पंवरा आदि से बहुत कुछ सहायता मिल सकती है जो देशहितैषी ऐसी २ बातों के लिख भेजने का उद्योग करेंगे तथा जो सम्पादक महाशय इस विज्ञापन को अपने पत्र में कुछ दिन स्थान दान करेंगे उन को धन्यवाद तो हम क्या समस्त भारत देहोगा किन्तु एतद्विषयक पुस्तक (वा पुस्तकें) भी उन की सेवा में बिना मूल्य भेजा जायगी बुद्धिमानों को इतनी सूचना बहुत है हां जो २ बातें रह गई हों वह और भी बढ़ा के लिखना उन की कृपा है इसे पढ़ के रख न दीजिए किन्तु ध्यान दीजिए और परिश्रम कीजिए तो बस, सुभाप अहसान करो खलकप अहसां होगा।

विशेष जिस ग्राम में वा प्रांत मे जन्म हो उस का नाम क्यों पड़ा यदि यह मालूम हो तो भी लिखना वा किस वर्ण के कौन विभाग तथा मत मानते हैं यह भी मालूम हो तो लिखना।

हिन्द हिन्दी और हिन्दुस्तानियों का कृतिवर्द्धक

प० प्रताप नारायण मिश्र
ब्राह्मण संपादक कानपुर
अथवा
मनेजर खड्गविलास प्रेस बांकीपुर।

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

शत्रोरपिगुणावाच्यादोपावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 APRIL. 7 H. C. } NO. 9.

खण्ड ७ { कानपुर १५ अप्रेल हरिश्चन्द्र सं० ७। } संख्या ९।

नियमावली।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ⁄) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई ⁄) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथाब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर।

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर।

अवश्य देखिये ।

हमारे कई मित्रों ने ब्राह्मण के बंद हो जाने की सूचना पढ़ के खेद प्रकाश पूर्वक पूछा है कि क्या किसी उपाय से इसे बचा सकते हो? अथवा सात वर्ष के पाले पोसे बच्चे को एक साथही कठोरता धारण करके विसर्जित कर दोगे? इस के उत्तर में हम निवेदन करते हैं कि हमारा हृदय घटी उठाते २ और धोखा खाते २ निस्सन्देह ऐसा हो गया है कि मौखिक आश्वासन से अब इसपर कुछ असर नहीं हो सकता किन्तु बन्द कर देने का जब कि दूसरों को शोक है तो हमें क्यों न होगा जिन्हों ने सैकड़ों ऊंच नींच देख के इतने दिन झेला है! पर करें तो क्या करें जब जी टूट जाता है तब मनसा के विरुद्ध काम करने ही पड़ते हैं हां जो लोग सचमुच इसे जीवित रखना चाहते हों वे निम्न लिखित तीन उपायों में से कोई अवलम्बन कर के रक्षा कर सकते हैं तो करें पहिला उपाय यह है कि कोई सामर्थ्यवान इस की घटी का बोझ उठा ले नफ़ा हो तो उस का हम लेख दे दिया करेंगे दूसरा यह है कि कोई सब प्रबन्ध अपने हाथ में ले ले और ग्राहक बढ़ाने में सदा यत्नवान रहा करे हम भी यथाशक्ति उन्हें साथ देने को प्रस्तुत हैं तीसरे दस (इससे कम नहीं) पुरुष एकत्र हो के एक २ रुपया महीना पेशगी जमा कर दिया करें और आमदनी अपने पास रक्खा करें तो भी काम चला जाने की संभावना है हानि लाभ उद्योग अथवा ईश्वर के आधीन है यदि उचित समझए तो एक भाग हम से भी ले लिया कीजिए बस और हम कुछ न कर सकते हैं न बतला सकते हैं न निरी बातों में आ सकते हैं।

सूचना ।

हिंदी की उन्नति और प्रचार के मानस से हमने यहां साहित्य प्रचारिणी सभा और हिन्दी पुस्तकालय खोला है अत: सम्पादक महाशयों से निवेदन है कि कृपा कर के अपने २ अमूल्य पत्रों को भेज के सहायता करें अथवा आधे मूल्य पर दिया चाहें तो भी हमें सभा की मंजूरी हो जाने पर स्वीकृत है और जो सज्जन अच्छे चिकने मोटे कागज के पूरे तख्ते पर सुंदर २ मोटे २ अक्षरों में—श्रीमान भारतभूषण भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र महोदय—इतना लिख कर भेजेंगे उन्हें लिपि की उत्तमतानुसार कोई उत्तम पुस्तक भेंट की जायगी।

पुरुषोत्तम दास वर्म्मा
साहित्य प्रचारिणी सभा, चौपटिया—लखनऊ।

"एकै सधे सब सधै सब साधे सब जाय"

इस कहावत में दो उपदेश हैं एक तो यह कि यदि सच्चे उत्साह से दृढ़ता-
के साथ एक पुरुष भी किसी काम को कर उठावै तो बहुत कुछ कर सक्ता है
किन्तु आंतरिक चाह के बिना अनेक लोग भी कुछ करना ठानते हैं तो भी कुछ
नहीं कर सक्ते किया भी तो क्या न करने के बराबर? दूसरी शिक्षा यह
है कि एक अथवा अनेक जने मिल के यदि प्रस्तुत कार्यों में से एक के लिए
तन मन धन बचनादि से जुट जायं और जी में यह प्रण कर लें कि जो कुछ
होगा से हैंगे पर इस को पूरा किए बिना कभी न रहेंगे तो उस के पूर्ण होने
में तो सन्देह ही नहीं है जो संदेह करै वह ईश्वर के अखंड मंगल मय नियम
और अनेक बुद्धिमानों के अनुभूत सिद्धांत तथा अपने पुरुषार्थ की विडंबना
करता है। इस से हृदयवान व्यक्ति को मान ही लेना चाहिए कि जिस काम
को अनेक लोग एक होकर करना विचारते हैं यह अवश्य होता है बरंच उस
के साथ साथ दूसरे कर्तव्य भी या तो सिद्ध हो ही रहते हैं अथवा उन में की
पूर्तिवाली कठिनता प्रायः दूर हो जाती है इन में से पहिले सिद्धांत के तो
अनेक उदाहरण हैं श्रीकृष्ण भगवान ने जिस समय गोवर्द्धन उठाया तो अकेले
आपही ने अपनी अंगुली पर उठा लिया क्योंकि वे दृढ़ चित्तता के रूप बरंच
दृढ़ चित्त भक्तों के आराध्य देव हैं किन्तु जब दूसरे गोप गोपियों ने उन्हें बालक
समझ के लकुट और मंथन दंड से सहारा दिया तथा यह देख के भगवान ने
भी हाथ ढीला किया तो गिरिराज गिरने पर उद्यत हो गए इस कथा में एक
यह भी ध्वनि निकलती है कि जो पुरुष सिंह केवल अपने भरोसे किसी काम
में हाथ लगाता है उसे सहारा दीजिए पर यह न समझिए कि हमारे बिना
यह क्या करेगा? यदि वह सच्चा साहसी है तो उसे ईश्वरीय सहायता प्राप्त
है हां बाह्य साहाय्य ही की आवश्यकता होगी तो आपके साथी बहुत रहेंगे
अतः आप का सहमिति प्रदर्शन व्यर्थ बरंच आदि कर्ता के उत्साह भंग द्वारा
कार्य नाश की शंका उपजाने के कारण हानि कारक है। इसी भांति हम
अपने प्राचीन ऋषियों का चरित्र देखते हैं तो अवगत होता है कि यद्यपि
कभी २ कहीं २ पर उन का अट्ठासी २ सहस्र का समूह एकत्र हो जाता था
पर नित्य का लक्षण यही था कि 'एकाकी निष्पृहः शांतः पाणिपात्रो दिगं-
बरः' किन्तु! उन्हीं एकांतवासी निश्चिन्त शांतिमय लोगों ने संसार के लिए

लोक परलोक बनाने वाली वह अखंडनीय युक्तियां निश्चित कर दी हैं कि जिन की अवज्ञा कभी किसी सहृदय की अंतरात्मा से होही नहीं सकती वह सब बहुधा अकेले ही रहते थे और अनेकांश में अपने सहकालीन समुदाय की हां में हां न मिलाते थे पर वास्तव में उन सब का उद्देश्य एक था अर्थात् ईश्वर की महिमा का प्रचार एवं संसारियों के जीवन जन्म का सार्वदेशिक सुधार बस इसी से शास्त्र कह रहा है कि 'नैकोमुनिर्यस्यवचः प्रमाणम्' अर्थात् एक मुनि नहीं है जिस का वाक्य प्रमाण के योग्य हो भावार्थ यह कि सभी मुनि वृन्द के वचन प्रमाण हैं ! इसी प्रकार ईसा मूसा मुहम्मद इत्यादि सभी मान्यपुरुषों ने प्रारंभ में अकेले ही अपने २ उद्देश्य की पूर्ति का अनुष्ठान कर उठाया था पर यावज्जीवन उसी में लगे रहने के कारण यहां तक साफल्य लाभ कर लिया था कि आज तक लाखों अंतःकरण साक्षी देते हैं और सदा देते ही रहने की अधिक सम्भावना है ! इतने प्रमाण पा के हम क्यों न मान लें कि सच्चे जी से मजबूत कमर बांध के यदि एक पुरुष भी खड़ा हो जाय तो अपना मनोर्थ अवश्य पूर्ण कर लेगा। यदि दैव योग से सिद्धि में पूर्णता भी न हो तो भी इस में तो कोई सन्देह ही नहीं है कि जिस मूल को वह आरोपित कर जायगा उस में आज नहीं तो कल कल नहीं तो परसों अवश्यही यथेच्छ फल फलैंगे पर होना चाहिए सच्चाउद्योगी जिसका सुखही नहीं वरंच रोम२ दिन रात या तो काम पूरा करेंगे या यत्न ही करते २ मरेंगे—का मन्त्र जपा करता हो। आज बरसों से हम सैकड़ों युवकों के मुंह भारत का उद्धार देश की उन्नति जाति का सुधार आदि शब्द सुन रहे हैं पर जब आंखें खोल के देखते हैं तो भारत का उद्धार कैसा किसी भारतीय समुदाय का भी उद्धार नहीं देखते देश की उन्नति कैसी देशीय सभी व्यक्ति एवं वस्तु दिन २ अवनत होती जाती हैं जाति का सुधार तो दूर रहा सुधार का गीत गाने वाले ही बहुधा किसी न किसी बिगड़ैलपन में फंसे हुए हैं इन लक्षणों को देख के ऐसा कौन है जो न कह उठे कि हिन्दुस्थान का सच्चा हितैषी इन में से एक भी नहीं है जो अपने को इस नाम से पुकारते हैं उन का भीतरी तत्व देखिए तो कोई नाम के चाहने वाले निकलैंगे कोई दाम के आकांक्षी मिलैंगे सच्चा उद्योगी यदि एक भी होता तो बहुत कुछ कर दिखाता हां प्रारंभ में राजा राम मोहन राय मुंशी कन्हैया लाल अलखधारी बाबू हरिश्चन्द्र भारतेन्दु

स्वामी दयानंद सरस्वती आदि थोड़े से पुरुष रत्न थे जिन्हों ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये निष्कपट भाव से जीवन बितादिया किसी दुःख किसी द्वेषी की कुछ भी अटक न की यद्यपि उन के समय में चारों ओर पूर्ण अंधकार था इस से उन की आयु केवल दीप प्रज्वालन और सुपंथ प्रदर्शन ही में व्यतीत हो गई अब हमारे लिये उन्नति की राहें उन की दया से खुली हुई हैं पर यदि हम में से थोड़े लोग भी सच्ची उमंग के साथ उन मार्गों का अवलम्बन न करेंगे तो चाहे लाख बकें पर उन्नति धाम में कभी न पहुंचेंगे और उपर्युक्त महापुरुषों का वास्तविक तत्व समझ कर सच्चाई के साथ निर्द्वन्द भाव से यदि एक भी उन का अनुसरण करे तो देखिए क्या होता है क्योंकि 'एकै साधे सब सधैं' परंतु यों ऊपर मन से चाहे जितने लोग चाहे जिन बातोंका शोरा मचाते रहैं पर होना हवाना कुछ नहीं वरंच व्यर्थ समय और धन की हानि होगी क्योंकि 'सब साधे सब जाय' इस से हमारे देशोन्नति चाहने वालों को चाहिए कि अपने कर्तव्य के हेतु पहिले भली भांति आत्म-समर्पण में उद्यत हो जांय फिर देखेंगे कि कितने शीघ्र और कैसे आधिक्य से साथ कृतकार्य लब्ध होती है तथा सहायता एवं सहायक आप से आप कितने आ मिलते हैं ?

अब रही दूसरी बात अर्थात एक काम के पूरा करने में पूरा उद्योग करने से अन्य कार्य स्वयं सिद्ध हो रहे हैं अथवा सिद्धि के निकटस्थायी हो जाते हैं उस के लिये बहुत से उदाहरण देना केवल कागज रंगना है प्रत्यक्ष ही देख लीजिए कि यदि कोई किसी वृक्ष को डाल २ पत्ता २ सींचना चाहेगा तो परिश्रम बहुत अधिक होगा एवं जल भी बहुतसा वृथा बहाना पड़ेगा किन्तु फल के स्थान पर वृक्षही सड़ जायगा पर यह न करके केवल मूल का सेच न करने में न उतना श्रम है न जल का व्यय और सिद्धि पूर्ण रूप से प्राप्त हो जायगी बस इसी दृष्टान्त पर दृष्टि रख के विचार कीजिए कि वह एक कौनसा काम है जिस पर जुट जाने से भारत के समस्त दुख शीघ्र और सहज में दूर हो सकते हैं ? हमारी समझ में समाज का उद्धार राजनीति का सुधार और धर्म तथा सद्गुणों का प्रचार सब कुछ तभी हो सकता है जब पेट भरा हो और हेर फेर के सब लोग सब प्रकार के उपाय इसी लिए करते हैं जिसमें यहां का दरिद्र दूर हो और लोगों को अन्न वस्त्र जनित असुविधा जाती रहे

तभी कुछ हो सकेगा और इस का एक मात्र यत्न यही है कि यदि हम बाहर से कुछ लाके घर में न डाल सकें तो घर की पूंजी तो यथा सामर्थ्य बाहर न जाने दें; किन्तु इस के निमित्त विदेश और विदेशियों का आसरा रखना व्यर्थ है यदि सब लोग विलायत जा २ कर अथवा यहीं वैसी शिक्षा पा २ कर भाषा भेष भोजन आचार विचार आदि बदल २ शुद्ध साहब बन बैठें और इस रीति से अपनी सार्वदेशिक उन्नति भी कर लें [यद्यपि ऐ सम्भव नहीं है] तौ भी हिन्दुस्तान और/ हिन्दुस्तानियों का क्या भला होगा हां इंगलिस्तान ही वालों के चेलों की संख्या बढ़ जायगी! इसी प्रकार जो गवर्नम्यंट सर्वदा सर्वभावेन केवल रुपए पर दृष्टि रखती है प्रजा चाहै अकाल के मारे मरजाय चाहै कुरोगके वश प्राण त्यागे परन्तु वह धनके हेतु यहां के मरे जानवरों की हड्डियां तक उठा ले जाने में नहीं चूकती धरती का बल कल नाश होता हो तो होय हो यही लाख हाव २ करो पर स्वार्थ के अनुरोध से मदिरा ऐसे धन बल बुद्धिमान,प्राण नाशक पदार्थ का प्रचार नहीं घटाया चाहती उस से यह आशा करनी कि हमारी प्रार्थनाओं को सुन के हमें उचित अधिकार दान करके अपनी हानि करेगी हम नहीं जानते कहांतक फलवती होसकेगी अरे बाबा अपना भला अपने ही हाथ से हो सकता है अत: सब से पहिले अपना पन समझो अपना पेट अपनी करतूत से पालो अपना तन मन अपने भेष भूषण भाव से अलंकृत करो अपनी कौड़ी नाली में गिर पड़े तौ भी दांत से धरो चाहै जैसा दुख सुख हानि लाभ सहनी पड़े पर अपना रंग ढंग न छोड़ो अपना अर्थ साधन करनें से मुंह न मोड़ो और अपनों को अपना सा बनाने में मन वचन कर्म से अष्ठ प्रहर लगे रहो बस यही एक काम है जिस का साधन करने से और सब बातें आप से आप सिद्ध हो जायंगी क्योंकि अगले लोग कह चुके हैं कि एकै साधे सब सधै और यों न कहीं जाने से कुछ होगा न बातें बनाने से कुछ होगा व्यर्थ की दौड़ धूप और हानि चाहे जितनी कर लीजिए किन्तु फल इतना ही होगा कि सब साधे सूप जाय।

पेट।

इन दो अक्षरों की महिमा भी यदि अपरम्पार न कहिए तौ भी यह तो

मानना ही पड़ेगा कि बहुत बड़ी है जितने प्राणी और अप्राणी नाम रूप
देखने सुनने में आते हैं सब ब्रह्माण्डोदरवर्ती कहलाते हैं और ऐसे २ अनेका-
नेक ब्रह्माण्ड ब्रह्मदेव के उदर में स्थान पाते हैं फिर क्यों न कहिए कि पेट
बड़ा पदार्थ है और बड़े पदार्थ का वर्णन भी बड़ी ही बात है अस्मात पेट की
बात इतनी बड़ी है कि भगवान श्रीकृष्णचन्द्र तक ने अपना नाम दामोदर
प्रगट किया है और इस से सब को यह उपदेश दिया है कि पेट को वह रस्सी
है जिस में बंधे बिना कोई बच नहीं सकता धर्म की दृष्टि से देखिए तो समस्त
मान्य व्यक्तियों में सर्वोपरि अधिकार माता का होता है क्योंकि उस ने हमें नौ
मास पेट में रक्खा है प्राचीन काल के वीर पुरुषों का इतिहास पढ़िए तो जान
पड़ेगा कि अनार्यों (राक्षसों) में महोदर (रावण के यहां का योद्धा) और
आर्यों में वृकोदर (भीमसेन) अपने समय तथा अपने ढंग के एक ही युद्ध
कला कुशल थे इधर देवताओं के दर्शन कीजिए तो सब से पहिले लम्बोदर
[गणेशजी] ही आदि देव के नाम से स्मृत होते हैं मनोवृत्ति में कुछ रसि-
कता की झलक हो तो मनोहारिणी सुंदरियों का अवलोकन कीजिए वे भी
क्षामोदरी कृशोदरी आदि नामों से आदर पाती हैं जब कि ऐसे २ प्रेम प्रति-
ष्ठा के पात्रों की ख्याति उदर से सम्बन्ध रखती है तो साधारणों का तो कहना
ही क्या है सब पेट ही से उत्पन्न होते हैं और यदि आवागमन का सिद्धांत
ठीक हो तो अंत समय पेट ही में चले जाते हैं जो आर्यों की फिलासफी न रुचती
हो तो भी धरती के पेट से अथवा मांसाहारी पशुपक्षी कीट पतंग के पेट
से बचाव नहीं है अब रहा संसार में स्थिति करने का समय उस में तो ऐसा
कोई बालक वृद्ध मूर्ख विद्वान उच्च नीच धनी दरिद्री है ही नहीं जो दिन राति
भांति २ के कर्तव्याकर्तव्य विशेषतः पेट ही की पूर्ति के अर्थ न करता हो यों
हम उन को धन्य कहेंगे जो अपने पेट की चिन्ता न कर के दूसरों के पालन
में सयत्न रहते हैं पर ऐसे लोगों की संख्या सदा सब ठौर बहुत स्वल्प होती है
इस से ऐसों को अष्टम देवताओं की कोटि में रहने दीजिए और उन्हें भी
लंका के सहा राक्षसों में गिन लीजिए जो अपना प्राणी पेट पालने के अनु-
रोध से दूसरों को कुछ भी कष्ट क्यों न हो तनिक ध्यान नहीं देते ऐसे भी
लोगों की संख्या यहां बहुत नहीं है किन्तु दिन दूनी दुर्दशा के बस होके इस
बीस वर्ष में हो जाय तो आश्चर्य नहीं है क्योंकि बिभुक्षितः किम् करोति

पापम्। यही सर्व साधारण वे जो पेट को धोखा देने के लिए बात २ पर बहुत फूंक २ पांव न धर सकें तो कोई विचार शील इन्हें दोष भी नहीं लगा सकता क्योंकि सभी जानते हैं कि पेट की आंच बड़ी कठिन होती है इस का सहन करना हर एक का काम नहीं है इस की प्रचंडता में लोक परलोक धर्म कर्म सभी के विचार भस्मीभूत हो जाते हैं यह ज्वाला को बुझाती यदि उचित खाद्य से स्वल्प परिश्रम के साथ भरती रहे तो तो क्या ही कहना है सभी इंद्रियां पुष्ट मन हृष्ट बुद्धि स्फुरतीली और चित्त वृत्ति सचमुच रसीली बनी रहती है पर यदि चार चुपे किसी न किसी भांति कुछ न कुछ मिलता रहे तो भी सुख स्वच्छन्दता नैरुज्य एवं निश्चिन्तता का तो नाम न लीजिए हां जीवन पहिया जैसे तैसे लुड़कता पुढ़कता चला जायगा किन्तु यदि परमेश्वर न करे कहीं किसी रीति से ठिकाना न हुआ तो बस कहीं ठिकाना न समझिए इसकी अवस्था का नाम ही दोज़ख़ अर्थात् नर्क है फिर इस के हाथों बड़े बड़ों को जीते जी नर्क यातना भोगनी पड़े तो क्या आश्चर्य है ! और परमेश्वर की न जाने क्या इच्छा है कि इन दिनों]बरसों से चारों ओर जन समुदाय की उदर पूर्ति में विघ्न ही विघ्न बढ़ाते हुए देख पड़ते हैं इधर तो करोड़ों देश भाई दिन२ 'नहिं पटकटि नहिं पेट पचारी' का उदाहरण बनते जाते हैं और जिनका पेट भरा है वे इन की ओर से सांसडकार भी नहीं लेते उधर जो हमारे 'कर्तुम कर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ' प्रभु हैं उन्होंने यह सिद्धांत कर रक्खा है कि 'मोर पेट हाहू में ना देहौं काहू' यह लक्षण देख २ के बिचारे भारत भक्त अपनी बाली भर पेट काट २ के भी उद्धार उपाय करते हैं और इधर उधर पानी पहाड़ लांघते हुए पेट पकड़े दौड़े२ फिरते हैं पर जब देखते हैं कि कोई युक्ति नहीं चलती तो विवशत: कोई २ पेट मिसूसा मार के बैठ रहते हैं कोई २ दूसरों की पेट पीड़ा दूर करने के उद्देश्य से उस की भांति चिल्लाया करते हैं जिस के पेट में पीर उठती जहां यह दशा है वहां सब के सभी लोगों को मुंह बाए पेट खलाए पड़ा रहना उचित नहीं है जो चेत् जठराग्नि फैलती रहेगी तो एक न एक दिन सम्भव है कि किसी को जलाए बिना न छोड़े अस्मात् यही मुख्य कर्तव्य है कि सब जने सब को सहोदर भाव से देखें और समझ रक्खें कि पेट सभी का येन केन प्रकारेण पालनीय है चाहे मखमल सा चिकना और मक्खन सा मुलायम हो चाहे कठौती सा कठोर हो चाहे हांडी सा कुढङ्ग

अथवा पुर का विहंगम हो मोटों झोटो खरी खोटो चार रोटी सभो के लिए चाहनो पड़तो है और उन्हीं के प्राप्ति के अलसेठे मिटाना परम कृत्य है यदि दैव ने हमें कुछ सामर्थ्य दो है तो चाहिए कि उसे अपनेहो पेट में न पचा डालें कौरा किनका दूसरों को आत्मा में भी डालें और जो यह बात अपनी पहुंच से दूर हो तो भी केवल मुंह से नहीं वरंच पेट से यह प्रण कर लेना योग्य है कि पेट में पत्थर बांध के परिश्रम करेंगे दुनिया भर के पेट में पांव फैलावेंगे सब के आगे न पेट दिखाते लजाएंगे न पेट चिरवा के भुस भराने में भय खाएंगे पर अपनी और अपनों को पेटागिन बुझाने के यत्न में जबतक पेटसे सांसें आती जाती रहेंगी तबतक लगेहो रहेंगे यों तो पेट की कपेट बहुत भारी है पर आज इस कथा को यहीं तक रहने दिजिए और समझ लोजिए कि इतनी भी पेटपड़े गुणही करेगी।

प्राप्ति स्विकार।

क्षत्रिय प्रकाश अर्थात् खत्रियों की उत्पत्ति—बाबू सरबनलाल टंडन द्वारा लिखित मूल्य ।) मिलने का पता ग्रन्थ कर्ता के पास जनरल ट्राफिक मेनेजर साहब का दफ़तर बौम्बे बरोदा रेलवे बम्बई—पुस्तक तीन भागों में विभक्त है पहिले में अनेक देशी तथा विदेशी प्रमाणों से सिद्ध किया है कि यह जाति शुद्ध क्षत्रियों की संतति है भाषा में क्ष के स्थान पर ख का प्रयोग होने से इस नाम के साथ प्रसिद्ध हो रही है दूसरे भाग में कई गोत्रों का प्रमाण है तथा तीसरे में भगवान परशुराम की दिगविजय का विषय वर्णित है अतः खत्रियों के लिए अत्युपयोगी है यदि इस के द्वारा अपने पूर्वजों की श्रेष्टता का विचार कर के लोग क्षत्रियों चित कर्मों में प्रवृत्त हों तो देश का अहोभाग्य है पर ग्रन्थकार का यह वाक्य देश काल के महा विरुद्ध है तथा झगड़े के अतिरिक्त कोई फल नहीं दे सकता कि "इन के सिवा कोई उत्तम क्षत्रिय नहीं है" यद्यपि भविष्योत्तर पुराण ही में—इतरे मध्यमा स्मृता—लिखा हुआ है किन्तु साथही—त्यक्त क्षत्रिय धर्माणो वणिक वृत्ति समाश्रिता—इस वचन का विचार कर के और इस की पुष्टि में कर्म ही को जातित्व का मुख्य लक्षण हृदय में धार कर के एवं उन क्षत्रियों को प्रत्यक्ष निहार कर के जिन के नाम काम अथच वेशादि सभी बातों में आज भी समयानुकूल क्षत्रियत्व विद्यामान है ऐसी बखेड़े की बातें उदघाटन करना व्यर्थ ही नहीं हानि कारक भी है।

ऋतुतरंग—श्री पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी इंस्पेकटिंग्मिस्त्री सर आई० एम० रेलवे लिखित—मूल्य ।) पता ग्रन्थकार के पास झांसी—इस में संस्कृतो पयोगी वरण वृत्तों में कालिदासादि कवीन्द्रों के षड़्तुविषयक उत्तमोत्तम श्लोकों का भाव वर्णित है अतः भाषा काव्य रसिकों के मनोविनोदार्थ बहुत अच्छो पुस्तक है कविवर केशवदास की रामचंद्रिका के बाद एक इन्हीं की लेखनी ने भाषा में संस्कृत का सा स्वादु देने की चेष्टा की है हमें अपने बैस-वारे के रहने वाले एक सुपठित कान्यकुब्ज भाई की प्रवृत्ति इस ओर देख के बड़ा सन्तोष होता है क्या ही उत्तम होता यदि इस में संधि समास पूर्ण संस्कृत के क्लिष्ट एवं जीमूत (मेघ) आदि कर्ण कटु अथच कैं (किसनै) जैं (जिसने) इत्यादि निरे ग्राम्य शब्द बचा दिए जाते यद्यपि इस दोष से केशव जी भी नहीं बचे पर 'अगले वक्तों के थे वह लोग उन्हें कुछ न कहो' किन्तु दुबे जी से हम विनती किए बिना नहीं मान सकते कि आगे के लिए कवि-समूह के परिस्कृत मार्ग पर विशेष दृष्टि रक्खें और समझे रहें कि भगवान तुलसीदास श्रीमान सूरदास रसिकराज बिहारी लाल आदि के सन्मुख केशवदास का कितना आदर है? यद्यपि ऋतु तरंग सभी से खाली नहीं है पर हमारी सलाह भी आगे को बड़ा ही मज़ा देगी!

महिम्न स्तोत्र का भाषानुवाद—कविवही पता वही दाम वही और उप-र्युक्त दोष भी उतना नहीं ऊपर से श्रीमान भगवान भवानी प्राण वल्लभ का गुण गान और कविवर पुष्पदन्ताचार्य की कविता का आदर्श फिर क्यों न कहिए कि—महादिव्यं महादिव्यं महादिव्यं न संशयः।

वाल्मीकीय रामायण का भाषा छन्दोबद्ध अनुवाद मिलने का पता बाबू श्यामलाल महाशय मनेजर साहित्य सहायिनी सभा प्रयाग मूल्य चार वर्ष अर्थात पूरी पुस्तक का डाकव्यय सहित ८) वार्षिक दाम २॥) अथवा ।≤) प्रति मास भला इसका क्या कहना है श्रीमान पूज्यपाद आदि कविमहर्षि वाल्मी-कि जी का काव्य भगवान रामचन्द्र का अविकल चरित्र आर्य जाति के समुन्नत समय की शुद्ध रीति नीति हमारे लिए लोक परलोक बनाने का एक मात्र अभ्रांत उपाय वैसा ही हमारे महामान्य सुलेखक शिरोमणि पंडितवर राम-प्रसाद जी त्रिपाठी कहोदय कृत अनुवाद यदि ऐसे दिव्य रत्न को भी यथोचित आदर न मिला तो कोई संदेह नहीं है कि हिन्दू जाति अभी सैकड़ों वर्ष दुर्दशा

की जातें खोती रहेगी ! अंगरेज़ों को न राम से कोई ममत्व है न रामायण की कोई ममता है पर उन्हों ने केवल निज भाषा एवं भ्रातृ भाव के अनुरोध से ग्रिफिथ साहब कर्तृक अनुवाद को सहस्रों प्रति बातकी बातमें खरीद कों और संसार को रामकथा की आदरणीयता दिखला दी यदि हमारे हिन्दू भाई इतनेपर भी (॥) महिने का मुंह देखें तो जनेऊ पहिनने चुटिया रखाने और जन्ममरण सुख दुःखादि के समय रामनाम मुखपर लाने को धिक्कार है ! इस रामायण के गद्य तथा पद्य में अनुवाद कई एक हुए हैं पर यह उत्तमता इसी में है कि महात्मा आदिकवि के एक शब्द का भी अर्थ न छूटने पाया है न और का और बनाया गया है अभीतक दो अंक प्रकाशित हुए है दश अध्याय का अनुवाद हो चुका है उन्हें मंगा देखिए तो आप खुल जायगा कि हमारा कथन कहांतक सत्य है हां दो बातों के लिये हमें विवशतः अपने पूज्यवर अनुवाद कर्तमहोदय से प्रार्थना करनी है एक तो यह कि शिखरिणी अथच बसंत तिलकादि छन्दों में अनुप्रासन होना भाषा के कवियों की परिपाटी नहीं है दूसरे दो एक ठौर "बनाना" "सागर से" "अंशों को" "अंशी को" आदि शब्द आगए हैं वह भाषारसिकों के कान में खटकते हैं कवित्ता का माधुर्य "बनैबो" अथवा "बनावन" "सागर तें" और "अंसन कों" ही में विशेष पाया जाता है यह हम जानते हैं कि तिवारी जी ने बहुत बड़ा काम उठाया है उस में ऐसी छोटी २ बातों का ध्यान रखने से एक व्यर्थ की उलझन पड़ना संभव है पर किया क्या जाय एक तो द्वेष बुद्धि रखनेवाले 'क्रिटिसाइज़र' लोगों के डर से दूसरे भविष्यत काव्यलेखकों को एक आर्ष प्रयोग के भरोसे मार्गत्याग की शंका से (क्योंकि आजकल लहू लगा के शहिदों में मिलने वाले कवियों की सृष्टि का आरंभ हो गया है वे दो एक भी ऐसे नमूने देखपावेंगें तो वृथा कविता का स्वादु और सदुपदेश कों का समय नष्ट करेंगें) हमें यह अनधिकार धृष्टता करनी पड़ी है किन्तु हम 'बालदोषगुण गनहिं न साधू' के आधार पर क्षमाक्षमा का नाम न लेकर अनुरोध ही करेंगे कि मिसरी के कूजे से बांसका तिनका भी निकाल फेंकिए !

सेमिनेरी पंचांग (सम्वत १९४८ का) मूल्य डाकव्यय सहित ।)॥ मिलने का पता—मास्टर हनुमान प्रसाद बनारस सेमिनेरी चौक बनारस—जो लोग संस्कृत के अक्षर ही मात्र जानते हैं उन के बड़े सुभीते का है क्योंकि प्रण

और मुहूर्तादि बतलाने विधि भाषा में लिखी गई है इस के सिवा डाकव्ययादि के नियम मुद्रित होने से व्यापारियों के भी बड़े काम है इस से प्रत्येक दुकानदार और कर्मकांडी को इस का संग्रह बहुतेरे तिथि पत्रों की अपेक्षा उत्तम है पर दाम अधिक जान पड़ते हैं ।

प्रयाग समाचार ।

इस नाम का साप्ताहिक पत्र प्रयाग में १० वर्ष से मुद्रित होता है इस के ग्राहक प्रथम बहुत थे बीच में उत्तम कागज़ अक्षर न होने से बहुत कम हो गये हैं इस के मालिक पं० देवकीनन्दन त्रिपाठी थे पहली जनवरी सन् ८१ से इस का अधिकार पं जगन्नाथ शर्म्मा वैद्य ने लेलिया है और रंग ढङ्ग सब नया कर दिया ५०० सौ ग्राहक हो जाने पर कलेवर भी दूना कर दिया जायगा यह पत्र किसी का विरोधी और मिथ्या प्रज्ञापक नहीं है वेही विषय छपते हैं जो शारीरक मानसिक और समाज एवं देश के उद्धारक हैं और खबर भी वैसीही छपती हैं जो बिलकुल सच्ची हैं वैद्यक सम्बन्धी लेख भी रहता है जो रोज मर्रह के उपयोगी और लाभ दायक है इस के ग्राहकों को जो लाभ होगा बयान नहीं कर सक्ते वह पढ़ने ही से मालूम हो सक्ता है मूल्य भी सिर्फ १॥) डेढ़ ही रुपया साल में डाक महसूल है नागरी के रसिकों, आरोग्यता चाहने वालों और देश हितकारियों को चाहिये की इसके ग्राहक कि अवश्य बनें क्योंकि इस के ग्राहकों को जो प्रति दिन लाभ होगा वह लाखों रुपिये खर्च करने वाले सेठ शाहू कारों को दुर्लभ है जिन को विश्वास न पड़े ६ मास अथवा तीनही महीना पत्र मंगा के देख लें परन्तु बिना अग्रिम मूल्य पाये किसी को नहीं भेजा जायगा एक वर्ष तक मगाने वाले को १॥) और छः महीने मगानेवाले को ॥।) का मनीआर्डर पेशगीभेजना होगा और तीनही महीना तक मगाने की इच्छा हो तो सिर्फ ।≈) का टीकट भेज दो जब लाभ देखोगे तो आप ही हमेशा मगाओगे ।

पं० हरिवंशदत्त पाठक

सं० प्रयाग समाचार

धार्म्मिक प्रेस

प्रयाग ।

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ ।

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWPORE, 15 MARCH. 7 H. C. } O. 8.
खण्ड ७ { कानपुर १५ मार्च हरिश्चन्द्र सं० ७ } संख्या ८।

नियमावली।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ≠) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई ≠) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर।

सहवास बिल पर श्री महाराजा साहिब बहादुर दर्भंगा की

सम्मति ।

चार महिने की बात है कि मैंने दिल्ली के भारतधर्म्ममहामण्डल की सभा में अपने प्रतिनिधियों के द्वारा इस प्रतिज्ञा को उपस्थित किया था कि इस देश के सनातनधर्म्म के अनुयायी हिन्दू लोग नहीं चाहते हैं कि हमारे विवाहादि संस्कार और व्यवहार में किसी तरह का हस्तक्षेप गवर्नमेण्ट की तरफ से होवे। धर्म्ममहामण्डल ने अतिशय कृपापूर्व्वक हमारी प्रार्थना को स्वीकार किया।

इन दिनों सम्पूर्ण भारतवर्ष में इसी विषय की चर्चा फैल रही है। बंग देश में विशेषतः कलकत्ते में मासाभ्यन्तर कई एक सभाओं ने उक्त विषय का विचार किया है। देखा चाहिये इन विचारों का फल क्या होता है।

(२) ब्राह्ममतावलम्बी और उन के साथ थोड़े गोमांस भक्षक जो अपने को निरर्थक हिन्दू कहते हैं और थोड़े सामान्य हिन्दू जो लोग अपनी थोड़ी सी अंग्रेज़ी के जोश में वर्षा काल के मण्डूक के समान फूले नहीं समाते और जिन लोगों की जिह्वा बकने से नहीं थकती यह चाहते हैं कि हमारी प्राचीन विवाह की रीति बिलकुल बदल दी जाय। अपने पिता ने जिस वर को दान दिया हो उस को छोड़कर अपने युवाऽवस्था में कन्या जिस से चाहे उस से विवाह करे और विवाह काल सोलह वर्ष (अर्थात् जब स्त्री रजस्वला हो जाय) नियत किया जाय।

(३) इसी बीच में हरिमोहन का दुष्कर्म्म प्रकाश होकर उस ने अपना यथार्थ दण्ड पाया। इस पर उक्त महाशयों ने इस देश में और इङ्गल्याण्ड में भी इतना शोर गुल किया कि गवर्नमेण्ट को भी एक बिल (अर्थात् कानून का मसौदा) कौंसल में प्रस्तुत करना पड़ा।

(४) हमलोग जो पंजाब और पश्चिमोत्तर देश तथा बिहार के रहने वाले हैं थोड़े से व्यक्तियों को छोड़ विशेषतः मन्वादि स्मृति के अनुसार आठ

से बारह वर्ष उत्तम विवाह का काल मानते हैं और सम्भोग का काल स्त्री के रजस्वला होने के बाद । और हमारे बंगदेशीय भाई भी विवाह के काल में हमलोगों से मत का भेद नहीं रखते ; परन्तु सम्भोग में कुछ काल का नियम नहीं चाहते। मास धर्म्म के पूर्व भी सम्भोग करने में दोष नहीं मानते। दक्षिणी लोग भी पश्चिमोत्तरदेशीय और पंजाबियों के मतावलम्बी हैं और इन लोगों में यह और एक विशेषत: है कि इन दिनों केवल इन्हीं के देश में यथार्थ शास्त्रानुसार गर्भाधान का संस्कार होता है। और सब देशों में किसी २ जगह स्त्री लोग गोप्य रीति से उत्सव मात्र करती हैं और श्रीगौरी-शंकर जी का पूजन करती हैं।

(५) अब मैं अपने देशीय भाइयों से यह प्रार्थना करता हूं कि गफलत की निद्रा को खोलें और इस विषय में कटिबद्ध होकर यत्न करना प्रारम्भ करें और जो बिल अभी कौंशल में पेश है उस से इन लोगों को क्या लाभ और क्या हानि है और आगे के निमित्त क्या कर्तव्य है इस का बिचार अभी से प्रारम्भ करें।

(६) हमारी सामान्य बुद्धि में यह बिल किसी तरह से सर्वथा निर्दुष्ट नहीं है। दो तीन तरह से रद्द व बदल इसमें अत्यन्त आवश्यक हैं। और हमको सर्वथा यह आशा है कि बिना रद्द व बदल किये यह बिल कभी कानून नहीं होगा गवर्नमेण्ट ने केवल देशी लोगों की इच्छा बूझने के लिये इतनी देरी की है।

(७) इस बिल के बिना परिवर्तन के पास होने से सब से बड़ा भय यह है कि पुलिस महाशयों का भाग्य खुलेगा। इन लोगों की ईमान्दारी व सन्तोष का सुयश दिगन्तव्याप्त है। और यह बात भी अच्छी तरह से ख्यात है कि इस देश में एक चाल के लोग ऐसे हैं जो निरर्थक मिथ्यापवाद लगाकर नालिश की धमकी देकर व किसी २ स्थान पर नालिश भी करके अच्छे व्यक्तियों से द्रव्य लेकर अपना निर्वाह किया करते हैं। इस चाल के बदमाश अच्छे घरों की स्त्रियों को अप्रतिष्ठा देने के लिये और अपने लाभार्थ पुलिस के मेल से नालिश करके बहुत से निर्दुष्ट निरपराधी मनुष्यों को प्राणान्तिक

कष्ट देंगे इसलिये इस का उपाय आवश्यक है। और हमारी क्षुद्र बुद्धि में इस विषय का एक यही उपाय है कि इस चाल के नालिशों में पुलिस को किसी प्रकार का हस्तक्षेप का अधिकार न दिया जाय। ऐसे नालिशों में मजिस्ट्रेट खुद तहकीकात करें।

(८) इस बिल में जो दण्ड का नियम किया गया है वह भी इस अपराध के लिये बहुत ही अधिक है। बलात् सुशीला स्त्रियों के धर्म्म लेने का जो दण्ड है वही दण्ड अपनी पत्नी से समय सम्भोग करने वालों का होना हमारी बुद्धि में इन्साफ से बाहर है।

(९) बङ्गदेश में यह व्यवहार प्रसिद्ध है कि अल्प अवस्था के लड़के लोगों को उन के गुरु लोग अल्प अवस्था के बालिकाओं से विवाह कराते और एक शय्या पर सोने की आज्ञा देते हैं। इन लोगों का अपराध और वे लोग बलात् सुशीला स्त्रियों का धर्म्म नष्ट करते हैं अथवा केवल अपने सौख्यार्थ कस्बिन वेश्याओं से सहवास करते हैं उन का अपराध समान कदापि नहीं हो सकता। अल्प अवस्था के बालकों को अपने गुरू लोगों की आज्ञा मानना धर्म्म है और उन लोगों की आज्ञा से एक रहस्य स्थान में शयन करने पर इन्द्रियनिग्रह करना असम्भव है इसलिये इन लोगों पर थोड़ी सी मेहरबानी अत्यन्त आवश्यक है।

(१०) इस बिल के बिना रद्द वा बदल के पास होने से जो कुछ हानि सम्भव है वह मैंने लिखा अब यह द्रष्टव्य है कि इस बिल का वसूल बिल के प्रतिपक्षियों के मतानुसार सनातन हिन्दू धर्म्म का विरुद्ध है या नहीं। और आइन्दे के लिये हमलोगों को क्या कर्तव्य है।

(११) ऋतुकाल में दार निषेवण समस्त शास्त्र का मत है। ऋतुकाल प्राप्त होने से पत्नी का संग नहीं करना भी पापों में गिना जाता है परन्तु ऋतुकाल से पूर्व स्त्रीसंग करना एक बड़ापाप है। शास्त्र की आज्ञा यही है कि जब तक स्त्री प्रजोत्पादन योग्या नहीं होवे तब तक उस से संग कदापि नहीं करना। इस बिल का भी यही वसूल है। इस लिये मैं भी इस बिल के वसूल के बर्खिलाफ कभी नहीं हो सकता।

[१२] वङ्गदेश में जो धूम मच रही है कि दस वर्ष के उत्तर स्त्री के रजस्वला होने के बिना भी संग करना अपराधों में नहीं गिना जाय इस मत का अवलम्बी मैं कदापि नहीं हूं ।

[१३] बिल में द्वादश वर्षकाल का नियम किया गया है। यह हमारे धर्म्म से विरुद्ध नहीं है । मनु भगवान् ने आठ से बारह वर्ष कन्याओं के विवाहार्थ उत्तम काल नियम किया है और सुश्रुत जी वैद्यशास्त्र के आदि ऋषि हैं उन्हों ने भी यही लिखा है कि द्वादश वर्ष के उत्तर स्त्री लोग रजस्वला होती हैं। आज कल यद्यपि किसी जगह और विशेषतः बंगदेश में यह देखा जाता है कि द्वादश वर्ष में स्त्री लोग प्रजोत्पादनयोग्या होती हैं परन्तु तथापि हम अपने ऋषियों को मिथ्यावादी नहीं समझ सकते। डाक्टर लोगों की यह राय है कि पुरुष के साथ शयन से और कृत्रिम उपायों से स्त्री लोग अस-मय में भी रजस्वला होती हैं अतएव बङ्गदेश में और वेश्याओं के यहां स्त्री रजस्वला अति शीघ्र होती हैं क्योंकि इन लोगों में सहवास काल का कुछ नियम नहीं है ।

(१४) इन कारणों से इस बिल को वसूल के विरुद्ध मैं नहीं हो सक्ता। हरि मोहन के मुकद्दमे के उत्तर इङ्गलैण्ड व इस देश में जो लोगों ने घोर पुकार किया इस लिये गवर्नमेंट को कुछ उपाय करना आवश्यक हुआ और हमारे क्षुद्र बुद्धि में जो उपाय गवर्नमेंट ने ठहराया है उससे कोई दूसरा उपाय नहीं है हम लोगों के प्रतिपक्षी यह चाहते हैं कि बालिकाओं का विवाह बन्दकर दिया जाय और कन्या अपना वर अपनी खोज ले। इस विषय में पिता को कुछ भी अधिकार न रहे। इस प्रकार के उपाय से जो कुछ हानि देश को होगा सो स्पष्ट ही है । इस विषय में हमारा विशेष पूर्वक लिखनाही व्यर्थ है। गवर्नमेंट ने जो उपाय सोचा है वह इस से कहीं अच्छा है और यदि हरिमोहन के सदृश अपराधियों को यथार्थ दण्ड देना उचित है तो इस का कोई उपाय [illegible] नहीं है ।

(१५) उक्त महाशय लोग इस बिल के पास होने पर भी सन्तुष्ट नहीं होंगे । अपने यथाशक्ति इसी उपाय में लगे रहेंगे जिस से यूरोप के मतानु-

सार इस देश में भी विवाह व्यवहार होवे । इन लोगों में युरोपी विद्या बहुत विशेष है। लण्डन में इन लोगों की कमेटी बड़ी बलवाली है। इस कमेटी में इङ्गल्याण्ड के बहुत प्रधान लोग मेम्बर हैं । इङ्गल्याण्ड जाने का भी रास्ता इन लोगों का खुला है और इङ्गल्याण्ड में इस कारण से उन लोगों की कार्य्य करना अत्यन्त सुलभ है ।

(१६) इस लिये मैं अपने देशी भाइयों से यह प्रार्थना करता हूं कि बिल पास होने के उत्तर भी निद्रित नहीं हो जाय। हम हिन्दुओं की उचित है कि यति शीघ्र अपने देश का विवाहादि धर्म्म रक्षार्थ भारतधर्म्ममहामण्डल की सम्मति ले एक बलवती सभा स्थापित करें। इस सभा का यही कार्य्य होगा जो सर्वदा आंख खोल के अपने प्रतिपक्षियों का इस देश वो इङ्गल्याण्ड का कार्य्य देखकर समय पर अपने देशी लोगों को यथार्थ अपना सनातन धर्म्म का मार्ग दिखलाकर धर्म्म रक्षा किया करें ।

[१७] यदि उक्त रीति की सभा नियत की जाय तो मैं अतिशय उत्साह से इसमें कार्य्य करना स्वीकार करूंगा ।

देव मंदिरों के प्रति हमारा कर्तव्य ।

संसार सागर का सर्वोत्तम रत्न मनुष्य मंडली का सर्वोत्तम गुण ईश्वर का सर्वोत्तम महा प्रसाद ममता है यह न होती तो सृष्टि ही रचने का क्या प्रयोजन था और यह न हुई तो हमारे इष्ट मित्र बन्धु बांधवादि का होना न होना बराबर है वही महात्मा कबीर की कहावत आ जायगी कि 'न हम काहू के कोउ न हमारा' यही नहीं ममता न हो तो ईश्वर ही क्या है ? केवल एक शब्द मात्र ! धर्म ही क्या है ? वे शिर पैर की व्यर्थ बातें ! नहीं बतलाइए तो जिन्हें आप अपने लोक परलोक का सहायक कहते हैं उन्हों ने कब आप के शिर से तिनका भी उतारा है ? जिसे आप बड़ी २ पोथियों और पोथा धारियों के द्वारा सिद्ध किया करते हैं उस से आप का निज का कौन कार्य सिद्ध होता है ? ऐसे २ प्रश्नों का यथार्थ और अखंडनीय उत्तर इतना ही हो सकेगा कि हमें अपने ईश्वर अपने धर्म अपने शरीरादि के साथ ममत्व है इसी से दृढ़ विश्वास हो रहा है कि वही हमारे सर्वस्व हैं उन्हीं से हमारा त्रिकाल और त्रिलोक में हित है ! हां यह सत्य है और इस के साथ

यह भी झूठ नहीं है कि आप का हृदयस्थ ममत्व केवल आपही के लिए हितकारक नहीं है वरंच उन व्यक्तियों और वस्तुओं के लिए भी बड़े ही उपकार का साधन है जिन पर आप अपना ममत्व स्थापन कर रहे हैं जगत के लोग न मानें तो ईश्वर अपनी महिमा लिए अदृश्य धाम में बैठे रहै धर्म अपनी पोथियों में पड़ा रहै उस की हृदय हारिणी जयध्वनि का कहीं नाम भी न सुनाई दे! इस से सिद्ध हो गया कि सब के लिए सर्व रीति से ममता ही सब कुछ है इस सिद्धांत को सामने रख के विचारिए तो जान जाइगा कि हमारे देव मंदिर देव प्रतिमा मसजिद गिरजा सब यों तो ईंट पत्थर मट्टी चूना के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है पर हम उन्हें अपना समझते हैं इसी लिए उन के निर्माण में अपनी पूंजी का बड़ा भाग लगा देते हैं और उन की महिमा बढ़ाने के लिए ईश्वर को सर्वव्यापक मान के भी उस की स्तुति प्रार्थनादि करने के लिए उन्हीं में जाते हैं इस रीति से हमारा यह हित होता है कि यदि हमारी मनोवृत्ति नितांत राक्षसी न हो गई हो तो उन के भीतर हम उन कामों के करने से अवश्य हिचकेंगे जिन्हें हमारी तथा अनेक सहृदयों की अंतरात्मा ने अनुचित समझ रक्खा है वहां जाके थोड़ा बहुत ईश्वर का स्मरण भी होगा धर्म और धर्मात्मा पुरुषों का ध्यान भी आवैगा इस के अतिरिक्त हमारे सहधर्मीमात्र को देश, जाति, धर्म, व्यवहार आदि के सुधार का विचार तथा अदूषित आमोद प्रमोद लाभ करने के लिए बड़ा भारी सुभीता रहेगा इस प्रकार के सब कामों के लिए सदा सर्वथा स्थान ढूंढने का झगड़ा नहीं स्वच्छता संपादन की चिंता नहीं जब जिस व्यक्ति अथवा समुदाय को काम लगा जा बैठे इसी लिए हमारे दूर दर्शी पूर्वजों ने इस प्रकार के मंदिर बनाने की प्रथा चलाई थी जिस में देश और जाति के भगवद्भक्त जगहितैषी गुणी और दरिद्रियों को सहायता मिले जो लोग ऐसे मंदिरों को किसी एक जन अथवा कुटुम्ब का स्वाम्य समझते हैं वे न्याय के गले पर छुरी फेरते हैं और प्राचीन मान्यपुरुषों के सद्विचार की विडंबना करते हैं शास्त्रों में नवीन देवालय बनवाने की अपेक्षा प्राचीन मंदिर के जीर्णोद्धार का अधिक फल यही भाव दर्शित करने के हेतु लिखा गया है कि वह किसी एक का नहीं किन्तु सर्वसाधारण का है यों तो ईश्वर समस्त संसार का स्वामी है इस न्याय से ईश्वर सम्बन्धी यावत वस्तु पर सारे संसार का अधिकार है और वह संसारी मात्र के ममत्व का आधार है पर यतः जगत में जहां शांति है वहां विघ्न भी

है तहां सुख है वहां दुःख भी हैं इस से ऐसी आशा करना व्यर्थ है कि सदा सब कहीं सत्य ही अवलम्ब न किया जायगा और सभी लोग सचमुच सब को जगत पिता के नाते अपना सहोदर तथा सब के स्वत्व को अपना सा समझेंगे तथापि यह तो अवश्य ही होना चाहिए कि प्रत्येक समुदाय के यावत् व्यक्ति वस्तु एवं स्थान मात्र को उस समूह के सब के सब लोग अपना समझें यदि ऐसा न हो तो किसी जाति का निर्वाह न हो और सारी सृष्टि बहुत शीघ्र नष्ट हो जाय इसी विचार से जिन देशों और समुदायों में ईश्वर की दया है उन के सब लोग अपने यहां के सब प्राणी अप्राणियों को अपना समझते हैं पर अभाग्य वशतः हिन्दुओं के कपाल में मस्तिष्क और वक्षस्थल में हृदय जब से नहीं रहा तब से अन्यान्य सद्गुणों के साथ ममता का भी अभाव हो गया है इन्हें न अपने देश की ममता न अपनी जाति का ममत्व न अपने आत्मीयों की मया न अपने गौरव का मोह बस इसी से यह निंबरे कै ज्वैया सब कै सरहज का जीवित उदाहरण बन गए हैं जो जिस के जी में आता है वही इन के साथ मन माना बर्ताव कर उठाता है और यह मुंह बाए रह जाते हैं अथवा फुसला दिए जाते हैं नहीं तो जिस राज राजेश्वरी विजयिनि के राज्य की परम शोभा और रुचे अहंकार का स्थल यही है कि प्रजामात्र निर्विघ्नरूप से अपने धर्म का सेवन कर सकें कोई किसी के ईश्वर सम्बन्धी कार्य में हस्तक्षेप न कर सके उसी भारतेश्वरी की छाया का आश्रय लिए हुए हिन्दुओं की देव मूर्तियां और देव मन्दिर तोड़ते समय स्वयं राज कर्मचारियों को संकोच न आवै! यह क्या बात है? यही कि जिस जाति को अपनी आप ममता नहीं उस पर दूसरों को क्या ममत्व! वस्तुतः देव मंदिर वा देव प्रतिमा पाषाण धातु दार्वादि का विकार है और जिन वेद मंत्रों से उन में प्राण प्रतिष्ठा होती है वे भी केवल शब्द हैं जिन के अर्थों में सदा से झगड़ा चला आया है और चला जायगा उन की महिमा केवल हमारे स्नेह की महिमा है और उन की सामर्थ्य केवल हमारे ममत्व की सामर्थ्य है पर जब से हमारे दिन गिर रहे हैं तब से हमारे हृदयों में अपने देवताओं और उन की मूर्तिमंदिरादि कि भक्ति नहीं रहीं रही तभी से उन में भी हमारे धार्मिकस्वत्व तथा अपने अस्तित्व के संरक्षण की शक्ति नहीं रही जिन दिनों अलाउद्दीन और औरंगजेब आदि मनमौजी महीपों ने अयोध्या मथुरादि में इस प्रकार का दुराचार किया था उन दिनों भी हमें कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिला कि हिन्दुओं

ने प्रसन्नता पूर्वक इस प्रकार के वज्र प्रहार को सहन कर लिया हो पर
करते क्या इधर तो देश वासियों में पारस्परिक ममत्व नहीं राम कृष्णादि की
भी कथन मात्र के लिए पर देश भाइयों के द्वेष उनके प्रति उपेक्षा स्वार्थ परता
आदि में ऐसी कुचली हुई कि उकसना असम्भो और उधर राजा स्वयं सताने
में कटिबद्ध रोवें तो किस के आगे इन दिनों परमेश्वर की इतनी तो
दया है कि राजा को प्रजापीड़न में आनन्द नहीं आता कोई २ राजा कर्म
चारी हो कभी २ अपने अधिकार को कलंकित तथा श्रीमती की प्रतिज्ञा की
अवज्ञा कर उठाते हैं सो भी बहुत से बहाने गढ़ के किन्तु हमे वही बने हैं
अस्मात ऐसे सुराज्य में भी वैसा ही दुःख भोगते हैं जिन जातियों में धर्म की
ममता है आपस की एकता है चित्त की दृढ़ता उन के पवित्र स्थानों का भी
कोई ऐसा अपमान कर सकता है जैसा हमारों का? गतवर्ष दरभंगा में
महावीर जी का मंदिर तोड़ के हमारे हृदय पर घाव किया गया और बहुत
रोने चिल्लाने हाय २ मचाने पर आंसू पोंछ दिए गए सो भी प्रजावात्सल्य के
अंचल से नहीं किन्तु पालिसी के कल्पन से इस घटना को बरस दिन नहीं
बीता कि अब काशी जी में राममंदिर पर दांत लगाया गया है और भग-
वान जानकी बल्लभ हमारे विचार को झूठा करें लक्षण अच्छे नहीं देख पड़ते
क्योंकि इधर तो वाराणसी के अतिरिक्त और किसी नगर में इस आने वाली
घोर विपत्ति की चर्चा भी ऐसी सुन पड़ती है कि नहीं के बराबर मानो अन्य
स्थानीय हिन्दुओं का उस मंदिर से कुछ सम्बन्ध ही नहीं है और उधर लेफ्-
टिनेंट गवर्नर और चीफ कमिश्नर साहब की आज्ञानुसार यह विषय म्युनि-
सिपल बोर्ड के माथे छोड़ दिए जाने पर और उपर्युक्त दोनों माननीय अधि-
कारियों के द्वारा हमें यह आश्वासन मिलने पर कि – घबराओ नहीं मुकद्दमा
तुम्हारे ही सजातियों के हाथ है – भी वहां के कलक्टर साहब म्यु, निसिपैलटी
के निर्णय को निर्णय ही नहीं समझते जज साहब से प्रार्थना की कि 'दाम-
दिलवा दिया जाय और मंदिर तोड़ डाला जाय' मानो देवमंदिर भी साधा-
रण घर है! और सुनिए जज साहब ने भी विज्ञापन दे दिया कि—जिसे कुछ
उज्र करना हो चौदह मार्च तक करले—इस अंधेर का ऐसे राज्य में इतना
साहस देख के ऐसा कौन है जो आश्चर्य और शोक न करे पर जो इस के कर्ता
धर्ता हैं वे पर साल देख चुके हैं कि इस मृत जाति से होना ही क्या है हाय
हिंदुओं! अब तुम्हारे देव मंदिर टूटने के लिए बिकने लगे यदि अब भी उपेक्षा

करोगे तो कल को परमेश्वर न करे विश्वनाथ और जगन्नाथ बदरीनाथ के मंदिर भी कोई किसी सड़क अथवा आफिस के लिए मोल लेके साफ कर दिए जायेंगे इस से चाहिए कि धर्म रक्षा के लिए उन्मत्त हो जाओ और नगर नगर में बड़ी से बड़ी सभाएं कर के गवर्नमेंट को अपना दुःख प्रकाश करो काशी वालों की सहायता के लिए रुपया भेजो और यहां से विलायत तक उद्योग कर के यह मंदिर हो न बचाओ वरंच आगे के लिए ऐसी आज्ञा मंगा लो कि कभी कोई ऐसा कर न सके जिन लोगों को मूर्ति पूजन में श्रद्धा नहीं है उन्हें भी जातीय गौरव के अनुरोध से साथ देना चाहिए जैनियों को भी सम्मीलित होना चाहिए क्योंकि वे भी मूर्ति पूजक हैं और हिन्दू हैं वरंच मुसल्मानों को भी समझना चाहिए कि मसजिदें भी उसी भांति के ईश्वरीय भवन हैं जो प्रजा कहलाती है तभी काम चलेगा नहीं अब कुशल नहीं है इस से जो लोग धर्म को सर्वोपरि समझते हैं और रामचन्द्र को राजेश्वर मानते हैं उन्हें तन मन धन प्राण पन से सन्नद्ध हो जाना उचित है और तब तक चुप होना अनुचित है जब तक इस का अच्छा प्रबंध न हो जाय इस में किसी का भय संकोच वा अपना स्वार्थ अथवा मानापमान का विचार अकर्तव्य है क्योंकि तीर्थेश्वरी काशी और देवेश्वर रामचंद्र का काम है यदि इस में कुछ भी आगा पीछा किया गया तो आगे के लिए कुछ भी भलाई नहीं है जब धर्म नहीं तो कुछ भी नहीं

होरी

(स्यामा स्याम सों होरी खेलत आज नई) की धुन।

प्यारे, आज तौ इक बार गरे लगि जाहु। होरिहि के मिस दूरि करौ कछु या छतिया को दाहु॥ तरसत बीति गए दिन केते नेक तरस तौ खाहु। हाहा अब कब लौं हम रोकैं जिय को मिलन उछाहु। बरस दिना को दिन है प्रीतम सबै मिलत सब काहु। लहन देहु किन प्रेम दास कहं निज जीवन को लाहु॥ १॥

(रंगो मैं तो रंग तिहारे, और रंग जिन डारो) वाली धुन।

बहुत दिन जिय तरसायो, अब न मानिहौं आज। जिय भरि तुमहिं भेंटिहौं प्यारे परौ लाज पै गाज। हंसि के कहा करैंगे मेरो गुरुजन सखी समाज। सकुच किए होरि हु के अवसर बूड़ै धरम जहाज॥ सुख चूमिहौं गुलाल लगैहौं रंगिहौं सब तन साज। प्रेम दास मेरे जीवन धन भाजत हो किन काज॥२॥

रंगभीने बांके यार आज सब दिन की कसर निकारौ ना। होरी में डर पखो कौन को, भांति रखो संसार, सबैं निधरक ह्वै रंग पसारौ ना। सब की आंखिन धूर डारि कै ह्वै मेरे हिय हार हहा काहें तन ताप निवारौ ना। मुख चूमौ गुलाल मलि गालन मुफत करौ त्यौहार मोहिं अपने संग क्यौं रंगि डारौ ना॥ प्रेम दास मेरे अपने गुन गाओ बीच बजार सकुच जिय में काहु की धारौ ना॥ ३॥

काहूं दूरहिं सौं कतराए जात। ऐसो चाहिए न आंख चुराए जात। होरिहु के दिनन यह लाज हाय हमैं दरसन बिन तरसाए जात। मुख फेरि तनक इत हेरि देहु या मैं का कुल कानि नसाए जात। जिय धरि धरै कैसे प्रेमदास तुम्हैं देखि घुंघट लटकाए जात॥ ४॥

✓मति बदन छिपाए जाव आज तौ होरी है। तनिक दया करि प्रान पियारी दरस दिखाए जाव आज तौ होरी है। कब के राह तकैं हम ठाढ़े यौं न बराए जाव आज०। बरस २ के दिन इक छिन तौ जिय जुड़वाए जाव आज तौ०॥ लगै जु लाज अबिर लगवावत रंगहि डराए जाव आज तौ होरी०। दूरहि तें कछु प्रेमदास की हौंस पुजाए जाव आज तौ होरी है॥ ५॥

आज फगुआ नो डो लै छैल। रंग राते रसिया के मारे चलि न सकै कोउ गैल॥ जैसो आप सखा संग तैसे काहू को न टवैल। आवत लखि कै कुल जुवतिन कों लगै भचावन फैल॥ तकि २ गात हनै पिचकारी निधरक निलज अरैल। गावत निपट कुफारी गारी लावत नहिं मन मैल॥ सब को लाज लैन मैं दैया गिनै सधारन सैल। प्रेम दास धौंकाह करैगो अनुमति को बिगरैल॥ ६॥

पायं परौं कर छोड़ी दै ब्रजराज दुलारे। आवत जात लखैगो कोई मारग में मति लाज लै ब्रजराज दुलारे। हौं तौ लाल सदा तेरो हौं होरिहि को कछु नेग है ब्रजराज दुलारे। गारी बकत कहारस निकसै राखि न बात इकंत पै ब्रजराज दुलारे। परब मनाय सकैं सबसौं सब दूरिहु सो रंग डारि कै ब्रजराज दुलारे। प्रेमदास ऐसो क्यौं कीजे बुरी लगै जो काहुवै ब्रजराज दुलारे॥ ७॥

ठाढ़ो रहै किन लाल आज तोहिं देखौंगो कैसो है बीर। बहुतदिना मेरी सखियन कै हरत फिखो चित चीर। काल्हि अचानक भागि बच्यो हो सो

मुख मीड़ि अबीर। या की बदलो देख बाढ़ै है एरे ढीठ अहीर। तब सांचो जब मारि भगाऊं तव संगिन की भीर। तो कों गहि गुपचाय भली विधि बोरौं केसरि नीर। लैजैहौं कसि बांधि भुजन सों श्रीराधा के तीर। प्रेमदास तब हौं छोड़ौं जब वै बकसैं तकसीर॥ ८॥

कैसी होरी कहां की होरी। धन बिन काम चलैं नहिं जग कै सो नहिं नेक रह्योरी। सब चुंगी चंदा टिक्कस बस सागर पार गयोरी। बच्यो सोउ जात चल्योरी॥ खेती बनिआई सेवकाई सब को मार नस्योरी। जामें हाथ डार कै देखो या सौं मेहनत कोरो। लाभ सपनें न लख्यो री॥ धरती को सब नाम करैं नित रैल नहर चढ़ल्योरी। तापै अन बरसे अति बरसे अन्न उपज भई थोरी। रहै दुरभिच्छ बन्योरी॥ खात कहा घृत दूध अन्न की काठहु मोल बिक्योरी॥ पेट भरैं कै परब मनावैं कठिन निबाह भयोरी। सबैं ऐसो बिगर्‍योरी॥ कौन परसपर छिड़कन को चित सकै केसर हि घोरी। टेसू फूल मिलें औषद से अब वह रंग संचर्‍योरी। जहर जिहि बीच मिल्योरी। दुख दरिद्र दुबिधा को घर २ है प्रताप पगर्‍योरी॥ अब भारत में कहा देख कै चित हुलसै सब कोरो। लगै त्योहार भलोरी॥ ९।

फाग [रथमो निरखत जात लटाई] की चाल॥

अब तौ चेत करौ रे भाई। जय सरबसु कढ़ि गयो हाथ ते तब न उचित हहराई॥ उपज घटे धरती को दिन २ नाज नितहि महंगाई। कहा खाय त्योहार मनावैं भूखे लोग लुगाई॥ सब धन ढोयो जात बिलायत रह्यो दलिद्दर छाई। अन्न वस्त्र कहं सब जन तरसैं होरी कहां सुहाई॥ बन कटिगए लकरियां मंहगी तहूं टिकस अधिकाई। जहं ईंधन को आफत है तहं सबै को ढेर जराई॥ केसरि को है कौन कथा जहं टेसू फूल दवाई। रंग मजीठा जेहि पर डरिहौ तेहि चढ़ि है मत वाई। जो तुम्हरे घर होय लच्छिमी तौ सब देहु लुटाई॥ सबहि सुखित लखि फाग मचावौ नाहित निरलज ताई॥ देस दुरदसा हरन समरथो कोउ न पुरुष दिखाई। बसैं मेहरियां हिंद भरे में सोउ जग रहीं हंसाई॥ गाढ़ो प्यारो कौन आदि को जिहि कहं देखि जुड़ाई। फिर होरी दसहरा दिवारी एकहु नहिं सुखदाई। पहिले सबहि बनाओ अपनो सांचो ठानि मिताई। फिर तन मन दै हरौ देस दुख नहिं जीवन जरि जाई॥ जब सब कोऊ सदा बजावै घर २ अनंद बधाई॥ तब नित होरी नितै दिवारी नहिं प्रताप भंडिहाई॥ १०॥

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास" प्रेस बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ठं
निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा ।
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 FEBRUARY. 7 H. C. } NO. 7.
खण्ड ७ { कानपुर १५ फरवरी हरिश्चन्द्र सं० ७ } संख्या ७।

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ⅃) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई ⅃) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर।

सहवास बिल अवश्य पास होगा ।

कहीं मुंह की फूंक से पहाड़ नहीं उड़ २ जाते अखबारों का चायं २ करना अथवा लोगों का छोटी २ बड़ी२ सभाएं करके उस के विरुद्ध मेमोरियल भेजना 'नक्कारखाने में तूती की आवाज' मात्र है यह बातें उस देश में प्रभाव शालिनी हो सकती हैं जहां की समाज में कुछ जीव हो जहां के समुदाय की तत्वस्थ राजपरिकर कुछ समझता हो पर भारत के भाग्य से अभी यह सौभाग्य की कोस दूर है हमें ऐसी किसी हृदय घटना का स्मरण नहीं है जिस में प्रजा की पुकारने "राजा करै सो न्याव" वाले सिद्धांत को रोक रक्खा हो फिर क्योंकर मान लें कि Consent Bill न पास होगा हमने माना कि इस के द्वारा हमारे गर्भाधान संस्कार (जो हमारे परम माननीय वेदों के अनुसार सब से पहिला संस्कार है) पर हस्तक्षेप होता है और किसी के धर्म पर हस्तक्षेप होना महारानी विक्टोरिया की प्रतिज्ञा के विरुद्ध है पर इस से क्या होना है गोवध भी तो हमारे धर्म के सदा २ विरुद्ध है पर क्या वह लाख हाय २ करने पर भी रुक गया ? अरे भाई यह बिल तो हमारे ही चिरसिंचित पाप वृक्ष की कलिया है फिर क्यों न पकेगी ? अपूर्ण यौवना स्त्री के साथ पुरुष का संपर्क वेद शास्त्र पुराण तो क्या अल्हा तक में अनुमोदित नहीं है बाल्य विवाह के लतियों ने श्री काशीनाथ भट्टाचार्य कृत शीघ्र बोध के 'अष्ट वर्षा भवेद गौरी' इत्यादि दो श्लोकों का आश्रय ले रक्खा है पर उन के किसी अक्षर में उक्त अवस्था के विवाह की आज्ञा कैसी ध्वनि भी नहीं पाई जाती यदि—कन्यादान—शब्द से दशशर्षिकीही का अर्थ लीजिए (यद्यपि युक्ति और प्रमाणों से यह भी दूर है क्योंकि स्त्री चाहे जितनी बड़ी हो माता पिता की कन्या ही है) तौ भी उस का पतिग्रह गमन सात वर्ष पांच वर्ष वा न्यूनाद्य न तीन वर्ष के पूर्व न शास्त्र रीति से कर्तव्य है न लोक रीतिसे इस प्रकार तेरह वर्ष से पहिले पति सहवास का उसे अवसर ही न मिलना चाहिए पर जो लोग धर्म ग्रन्थोंका तिरस्कार एवं लोक लज्जाको अस्वीकार करके जगदम्बा शिवप्रियागौरी अथवा श्रीबलदेव दाऊ की माता रोहिणी अथवा विश्व कन्या के पति अथवा उपपति बन के कामान्धता के वशपशुत्व का व्यवहार कर उठाते हैं वा उस में सहायता देते हैं उन्हें सरकार की कौन कहे परमेश्वर भी लोक पर-

लोक के काम का नहीं रखता और इसी विचार से सैकड़ों मस्तिष्कमान देश
भक्त लोग बरसों से चिल्लाते २ थक गए कि अपना भला चाहो तो बाल विवाह
की रीति उठाओ दूध के बच्चों का बल वीर्य मट्टी में न मिलाओ पर किसी के
कान में चींवटी न रेंगी ! रेंगी कैसे जिस देश की दुर्दशा अभी पराकाष्टा को
नहीं पहुंची वहां अपने हितैषियों की बात कब सुनी जाती है लातों के देवता
कहीं बातों से माने हैं वहीं जब मिस्टर मालाबारी ने विलायत तक धूम म-
चाई और एतद्विषयक कानून बनने की नौबत आई तब कान खड़े हुए हैं कि
यदि उपर्युक्त बिलपास हो गया तो हमारे घरऊ व्यवहार भी दूसरों के हाथ
जा पड़ेंगे और जिन स्त्रियों की परदादारी को भारत बासी सदा से प्राणों से
अधिक रक्षणीय समझते आए हैं " धन दै कै जिय राखिए जिय दै रखिए
लाज "की कहावत प्रसिद्ध है रामायण और महाभारत ऐसे प्रसिद्ध धर्म ग्रन्थों
में राक्षस कुल और कौरव वंश के सर्व नाश का कारण सूर्पनखा की नाक का
काटना सीता जी का हर जाना और द्रौपदी जी का केशाकर्षण मात्र लिखा
है इस महा अवनति की शताब्दी में भी जितने लोग फांसी चढ़ाए जाते हैं
उन में से अधिकों के अपराध का मूल पता लगा के देखिए तो स्त्रियों की अ-
प्रतिष्टाही पाई जायगी उस परदादारी की जड़ में मानो दिन रात कुठार
रक्खी रहैगी जहां किसी द्वेषी अथवा दुराचारी ने किसी रीति से लोकेल गव-
र्मेंट के कानों तक झूठ सच यह बात पहुंचादी कि अमुक के यहां बारहवर्ष
से स्वल्प अवस्था वाली स्त्री के साथ अनुचित व्यवहार हुआ है वहीं विचारी
पर्दे में रहनेवाली बहू बेटीयों का डाक्टरके सामने अपमानित और कचहरी
में आकर्षितहोना असिट हो जायगा बड़े २ प्रतिष्ठितों का लाख का घर खाक
हो जायगा पुरुषों की नाक पर छुरी फिर जायगी पानी दार लोग यदि डूब न
मरेंगे अथवा विषादि के द्वारा आत्मघात न करेंगे तौभी किसीको मुंह दिखाने
के योग्य तो अवश्य ही न रह जायंगे फिर सच्चे अपराधी अथवा मिथ्या कलंक
लगानेवाले उपाधी को दंड तो जब मिलैगा तब मिलैगा इसी से लाखों
हृदयवान लोगों का कलेजा कांप रहा है समाचार पत्रों और सभाओं में
हाहाकार मच रही है चारों ओर से बड़े लाट साहब की सेवा मे निवेदन
जा रहे हैं कि इस विषय में शीघ्रता न की जाय बहुत सोच समझ से काम
लिया जाय पर विचार शक्ति को निश्चय नहीं है कि इन विनय पत्रोंपर कुछ

भी ध्यान न दिया जायगा लक्षण कुलक्षण ही देख पड़ते हैं इधर तो बिल के विरोधियों की संख्या यद्यपि अधिक है किन्तु समर्थक लोग बड़े बड़े हैं और उधर हमारे गवर्नरजनरल महोदय ने उक्त विषयक विचार के लिए केवल पांच सप्ताह का समय दिया है भला इतने अल्प काल में इतनी बड़ी बात का निर्णय क्या होना है हमारे धर्म प्रतिष्ठा और समाज का महा अपमान होना निश्चित है पर जो लोग इस विषय के कर्ता धर्ता हैं उन्हें हमारे मर्मान्तिक आघात का बोध भी नहीं है उलटा यह विश्वास है कि यह नियम बन जाने से स्त्री जाति की रक्षा होगी फिर हम क्यों कर कहैं कि सहवास बिल न पास होगा जो अपने बचाव का उपाय करने में चूकना हृदयवान पुरुषोंको उचित नहीं है इस से हमारे पाठकों को चाहिये कि आलस्य छोड़ के सारे संसार का संकोच छोड़ के जिस प्रकार हो सके बहुत शीघ्र यथा संभव बहुत बड़ी सभाएं जोड़ के निवेदन पत्रों के द्वारा हाथ जोड़ के सर्कार को समझावें कि इस विषय को हमारेही हाथ में रहनेदे इधर देश भाइयों को भी पूर्ण उद्योग के साथ चितावें कि अब लड़के लड़कियों के ब्याह को गुड़िया गुड्डे का ब्याह समझना ठीक नहीं है बस इतना ही भर हमारा कर्तव्य है इसे करना ही परम धर्म है पर होगा क्या यह परमेश्वर जानता है शायद हमारी अबला बालाओं पर दया कर के वह लोगों की मति पलट दे किन्तु वर्तमान अलंकार यही निश्चय दिखाते हैं कि सहवास बिल अवश्य पास होगा और उस के द्वारा सहस्रों घर वाहि २ करेंगे ।

हा हन्त हा हन्त हा हन्त

हाय आज काहू विधि धीरज धरत बनै ना । फूटि बह्यो हिय रकत रुकत रोके नहिं नैना । हाय २ हम कहा सूझत सब जग अंधियारो । बिछुरि गयो हा उरपुर आस प्रकास न हारो । हाय विधाता फाटि पर्‍यो यह बज्र कहां ते । उमड़ि उठ्यो हा दैव सोक सागर चहुंघां ते । अरे काल चंडाल तरस तोहिं नेक न आयो । निरबल बूढ़े रोग ग्रसित पर दांत लगायो । हाय अभागो हिंद भाग तेरे ऐसे हो । बेगिहि भ्रात बिछाय हाय तब सकल सनेही । दयानंद हरिचंद अछत धारी केशव कर । दुख सह्यो हो ज्यों त्यों करि छाती धरि पाथर । तब लगि हा

दुर देव ! और इक घाव लगायो । रह्यो सह्यो अवलम्ब अंकुर हू काटि
गिरायो । हाय हमारे दुख कहं निज दुख समझन हारे । प्यारे मिस्टर
चार्ल्स ब्रैडला कहां सिधारे । हाय ब्रिटिश वाटिका कलप तरु जगहित
कारी । कहं ढूढ़ैं दुखिया भारत सुत छांह तिहारी । को अब तुम बिन
इंगलिश पुर की बड़ी सभा महं । दृढ़ मन धरि करि २ पर चरि है हमरे
दुख कहं । को बिन स्वारथ दुखियन धीरज दान करन हित । कुलसज्जा
ते उठि ऐहै सागर नांघत इत । को हम हित अपने आदन को सकुचन
करि है । निहचल निष्कलङ्क निडर नीति पथ को पग धरि है । यों तो
हमरे हितू बनहिं बहुधा बहुतेरे । पै निज पापी पेट भरन बिषयन चेरे ।
तनिक विघन लखि होहिं और के औरहि छिन में । कहा आस
विस्वास करै धारन कोउ तिन में । पर उपकारक तुमहिं रहे सतवृत
जगमाहीं । जिनहिं न्याय पथ चलत ईस्वरहु कर डर नाहीं । हाय हाय
रे हाय दिखाय न कोउ अब ऐसो । दीन लोग देखीन लखे निज कुटुम
सरिस जो । हाय राम ! तुम अबहूं दया सागर कहवावत ! दया न
आई नेक हमहिं या सों बिछुरावत । जाके इक २ सुगुन सुमिरि फाटति
है छाती । हाय ब्रैडला ! हाय हिन्द के सत्य संघाती । भली आस दै
भली रीति सों प्रीति निबाही । भयो अचानक तुमहं दुःख दै हरिपुर
राही । तेरे बिन हाहन्त कतहुं कछु नहिं सुहायरे । हाय हाय रे हाय
हाय रे हाय हाय रे । कहां जायं का करैं कौन बिधि जिय समझावैं ।
हम कोउ रिषि मुनि नाहिं क्यों न फिर ध्यान लगावैं ? जो जनस्यो
सो अवसि मरैगो हमहूं जानैं । पै ऐसो दुख देखि थिर नहिं रहत
ठिकाने । कबहुं काहु बिन कछु जग कारज रहत न अटके । पै ऐसे धन
नहिं मानत मन बिन सिर पटके । याते रहि २ कहि २ आवत उरतें
एही । हाय ब्रैडला ! हाय सत्य के सहज सनेही ॥ असित पंचमी माघ
को हरि शशि संवत मात । स्वर्ग सिधारे ब्रैडला तजि सिवन बिख्यात ।

तृप्यन्ताम ।

[प्रकाशितस्याग्रे]

काहु न सिखायो हमहिं हाय तुम अविधि बनायो उदर गुलाम ।
धन मिस व्याह अनवसर करि कै सब सुविधा करि दई हराम ।
का मुख लहि केहि श्रद्धा सों हम कहैं पिता जू तृप्यन्ताम ॥६९॥
सूधी चाल सरल बरताओ समरथ भीतर ही सब काम ।
रहे सदा तुम हमहि गुनन सों पुलकित मुदित आदृत सब ठाम ।
पै हम काल कर्म कुदसा बस सब लच्छन सों रहित निकाम ।
हम में कहा देखि कै ह्वैहो अहो पितामह तृप्यन्ताम ॥७०॥
मन मौजी महिपतिहु विवस तुम सुख सों बितवत हे वसुजाम ।
भोजन वस्त्र शस्त्र में बाधा कबहुं न रही कौन हू ठाम ।
पै सुराज हू माहिं बसत हम दिन काटहिं कहि २ 'हाराम!'।
ऐसे भाग हीन अरिकन लखि किमि प्रपितामह तृप्यन्ताम ॥७१॥
जनम दान लालन पालन लहि हम तौ भए बिन दाम गुलाम ।
पै हमरो बिवाह ही तुमहित अनरथ मूल कलह को धाम ।
लखि अब बात २ पर खीझौ लरौ मरौ शिर धुनौ मुदाम ।
वचन वज्र संचारि बहू संग जननि देवि भव तृप्यन्ताम ॥७२॥
विद्या बिनहिं, अध्यसित तुम कछु निज कुल रीति नीति गृह काम ।
हम पढ़ि मरें तहुं अपि जानैं उदर भरन बनि विश्व गुलाम ।
मरेहु पूजिबे जोग अहो तुम हम जियतहु निंदित सब ठाम ।
फिर किन गुनन कहैं केहि मुख सों दादी देवी तृप्यन्ताम ॥७३॥
जानै बिन छल छंद जगत के तुम सुख जीवन लह्यो मुदाम ।
हम हैं कोटि कपट पटु तौ हूं दुरगति में दिन भरैं तमाम ।
मरेहु खाहु तुम खीर खांड हम जियहिं छुधा लगि निपट निकाम ।
कौन भांति कहि सकैं अहे प्यारी परदादी तृप्यन्ताम ॥७४॥
धर्म ग्रंथ अनुसार अहो तुम पूजनीय परतिष्ठा धाम ।
पै अब कलि प्रभाव गारी सम समझ्यो जात तिहारो नाम ।
ताहू पर तव घर पलि कै हम भए अशिष्ट विदित सब ठाम ।
याते डरत २ कहियत है अहो नाना तृप्यन्ताम ॥७५॥
अवसर परे लुटाय दियो घर बिन स्वारथ खोई न छदाम ।
धन बल धरम मान मरजादा उलंघि कियो नहिं एकौ काम ।

याते तब कर थित मुख जीवन मरन अनंतर अचल अराम ।
पोत कहा जु कहैं हम नाहिंहु परमातामह तृप्यन्ताम ॥७६॥
भोजन भाषा भेष भाव जो तुम कहं भावत रहे सुदाम ।
तिन सब ते प्रतिकूल भवे विधि हम व्यवहरत रहैं बसुजाम ।
याते तुम्हरी तुष्टि करन महं काहं समरथ हम सम अघधाम ।
हव प्रमातामह अब केवल स्वधा शब्द सुनि तृप्यन्ताम ॥७७॥
हमरे जनम समय तुम मन महं मान्यो अति अनंद अभिराम ।
पै किशोर पन के लच्छन लखि रह्यौ न ह्वैहैं वाको नाम ।
अब तौ पौरहु नष्ट भ्रष्ट ह्वै भोगहिं हम निज कृति परिणाम ।
कौन आसरो हम ते ह्वै जो हे माता महि तृप्यन्ताम ॥७८॥
तुम जब रहीं रह्यौ तब सतजुग सुखित सुछंद साधु नर बाम ।
पूजत रहे सब पितर पुरोहित गंगा तुलसी सालिकराम ।
पै अब सुख सुचाल सरधा दलि कलि महिमा पूरित सब ठाम ।
हम ते करहु न आस काहन की परनानी जी तृप्यन्ताम ॥७९॥
काज कर्म सब बुरे चाल में निभैं न देव पितर के काम ।
हम निज पापी पेट भरैं कै करैं श्राध तरपन इतमाम ।
यों जिमि तमकै स्वधा भाषि कै धूते पूरब पुरुष तमाम ।
त्योंही तस्यैस्वधा सही बढ़ि परमातामहि तृप्यन्ताम ॥८०॥
जब लग जग कीं संक सकुच आलस अनेकता तजि बसु नाम ।
करत न रहि हौ तन मन धन दै निज उद्धार हेतु भल काम ।
तब लग जीवत को हम भाखैं मरन अनंतर जानैं राम ।
हमरे कहा कहे ब्रह्महु के बस्सु न ह्वै हौ तृप्यन्ताम ॥८१॥
निज दुख सुख सम सब कर सुख दुख अनुभव करत रहो बसुजाम ।
सकल सृष्टि ते उत्तम जानो निज कुल जात पुरुष अरु बाम ।
भल अनभल सपनेहु न विचारो इन हित हेतु लचै जो काम ।
तौ नित राम कृपा ते रहिहौ जाति बंधु गन तृप्यन्ताम ॥८२॥
जानै हम न रहे तुम कैसे किए कौन भल अनभल काम ।
मरत जियत तब दसा रही किमि दुख सुख कहा दिखायो राम ।
फिर केहि विधि सरधा सनेह जुत अंजलि देहिं लेहिं का नाम ।

इतर जन्म के बन्धु वर्ग हां लोक रीति बस तृप्यन्ताम ।।८३।।
सुर ऋषि पितरन हौ कहं तरपत मन न रह्यौ थिर पाव छदाम ।
कबहूं पर धन हरन बिचार्यो कबहूं तको पराई बाम ।
तुम कहं तरपहिं तेहि सरधा सों जिन कर जानहिं नाम न काम ।
भूले बिसरे नात गोत गन बचन मात्र सों तृप्यन्ताम ।। ८४ ।।
देश जाति उद्धार जतन महं जो तव कुटुम गयो सुरधाम ।
तो सु पवित्र राम नामी सों छन्यो गंग जल लेहु ललाम ।
और जु निज दुरबिसन बिबस ह्वै पितृवंश बारि दियो तमाम ।
तो यह मलिन अंगोछा निचुरत लुस पिंड गन तृप्यन्ताम ।।८५।।
हा दुर दैव ! आज हमरे पापी पेटहु की तृपति हमार ।
कित सों कहा लाय किमि पालैं छोटे सिसु अरु अबलनु बाम ।
वे दिन कबहूं फेर फिरैंगे ? कहं गौं गए सावरे राम ।
जब हम कहत रहे निज बूते सकल सृष्टि सों तृप्यन्ताम ।।८६।।
पितर देवता सब ते बढ़ि कै माननीय तव पद अभिराम ।
कुपथ सुपथ के भेद बताए तुमही हमैं चिन्हाए राम ।
तुम ते उरिन न ह्वै हैं जो हम वारि देहिं तन मन धन धाम ।
सरल सनेह निहारि हमारो हूजै गुरुवर तृप्यन्ताम ।।८७।।
जगहितैषिता धर्म निष्टता बिपुल बीरता के करि काम ।
सुत उपजाए बिना लह्यौ तुम न्यायनि जगत पितामह नाम ।
हरि निज प्रन तजि तव प्रन राख्यो भाख्यो जिन्हैं श्रुतिन सति धाम ।
श्रद्धा सरित सलिल सों हमरेहु गंग तनय जू तृप्यन्ताम ।।८८।।
सदा सकल जग भ्रमत रहत हौ करत प्रकाश ठाम ही ठाम ।
सांची कहौ कहूं देख्यो है देस हिंद सम अचरज धाम ? ।।
निज भाषा हू ते निरास जहं बसहिं लोग हत भाग तमाम ।
होहु भानु भगवान देखि यह अदभुत कौतुक तृप्यन्ताम ।।८९।।
हरि अभि बतसर छह अचित, आश्विन मास ललाम ।
जगहित मिश्र प्रताप सुख, निरख्यौ तृप्यन्ताम ।।९०।।

लीजिए तर्पण समाप्त हो गया जिन पाठकों का जी महीनों से बार २ तृप्यन्ताम २ बांचते २ ऊब उठा हो उन्हें प्रसन्न होना चाहिए कि यह

राम रसरा समाप्त हो गया और जिन्हें ब्राह्मण का जीवन न रुचता हो
वे भी पांच महीने और राम २ कर के काट दें फिर देख लेंगे कि हर
महीने ऊट पटांग लेख और हर साल सोलह आने का तकाजा समाप्त हो
गया क्योंकि जब हम सात वर्ष से देख रहे हैं कि सहायता के नाते
बाजे २ बड़े बड़े लखपतियों से असली दाम भी नहीं मिलते जो कुछ
सहारा देते हैं वह केवल सुख से जिन से कुछ आसरा करो वे और कुछ
लेके रहते हैं जो सचमुच सहायक हैं वे गिनती में दस भी नहीं इसी से
कई एक उत्तमोत्तम पत्र बंद हो गए कई एक आज हैं तो कल नहीं
कल हैं तो परसों नहीं कई एक ज्यों त्यों चले जाते हैं तो केवल चलाने
वाले के माथे ! पर अपने राम में अब सामर्थ्य नहीं रही बरसों से
झेलते २ हिम्मत हार गई फिर क्या भरोसा करें कि इस वर्ष के अंत में
यह न सुनने में आवैगा कि कानपुर का एक मात्र हिन्दी पत्र अपने ढंग
का एक मात्र ब्राह्मण पत्र समाप्त हो गया ।

न जाने क्या होना है ।

हमारे पाठकों में से ऐसे बहुत थोड़े होंगे जिन्हों ने स्त्रियों की गीतों में—
कंचन थार—सोने का गड़ुवा—मानिक दियना (चिराग)—इत्यादि शब्द
न सुने हों अथवा होलियों में—कंचन कलश—कंचन पिचकारी—केशर रंग—
इत्यादि पद स्वयं न गाते हों और यह बाते केवल कवियों का बढ़ावा नहीं है
कई एक इतिहास ग्रंथों में बड़े पुष्ट प्रमाणों के साथ लिखा हुआ है कि अभी
दो सौ वर्ष भी नहीं बीते कि भारत में यह रीति थी कि जिस गृहस्थ के यहां
ब्राह्मणों अथवा सजातियों का निमंत्रण होता था उस के यहां सोने चांदी के
बर्तन निकलते थे बरंच कहीं २ इन पात्रों का बाहुल्य ही प्रतिष्ठा का लक्षण
समझा जाता था पर आज तो बतलाइए कि फी सैकड़ा कितने गृहस्थों के
यहां आप सोने की सम्पुटी (बहुत छोटी कटोरी) भी दिखला सकते हैं ?
और सुनिए कई एक जातियों में यह प्रथा है कि जो कोई अपनी कन्या का
विवाह कुलीन वर के साथ किया चाहता है उसे वर के कुल की उच्चता के
अनुसार सैकड़ों बरंच सहस्रों रुपया केवल कन्या दान की दक्षिणा में देना
पड़ता है यद्यपि इस समय की सभ्यता के प्रेमी इसे हानि कारक निरर्थक
और महात्याज्य समझते हैं और समय के प्रभाव से है भी यों ही लोक और
वेद दोनों के विरुद्ध है तथा त्यागे बिना अब निर्वाह नहीं दिखता पर इस

प्रकार की रीतियों से यह तो भले प्रकार प्रदर्शित होता है कि अभी बहुत
काल नहीं बीता कि हमारे देश भाई अवसर पड़ने पर अपने बन्धु बान्धवादि
की प्रसन्नता सम्पादन करने के निमित्त सैकड़ों सहस्रों रुपया उठा देने की
सामर्थ्य रखते थे और इस रूप से व्यय करना आज काल गिरे दिनों के लिए
अनुपयुक्त चाहे कहलीजिए पर वास्तव में बुरा नहीं कहा जा सकता अपने
भैया चारों नातेदारों आश्रितों तथा देश के गुणियों की सहायता मिलती है
उन की उत्साह वृद्धि से समय २ पर दूरस्थ आत्मीयों का समागम होता रह-
ता है स्वदेशीय शिल्प की उन्नति होती रहती है फिर भला कन्या जामातृ
सम्बन्धी तथा पुरोहितादि का तो कहना ही क्या है बरंच फुलवारी आतश-
बाजी मिठाई आदि के बनाने वाले तथा नाचने गाने वालों तक को देने में
क्या बुराई है ? यह आप का रुपया लेके कहीं चले तो जावेंगे नहीं देश का
देश ही में रहैगा जिसे अनेक मार्गों से फेर लेने सकते हैं पर अब रुपया है
कहां जो किसी अपनी अथवा अपने देशवाले की उत्साह पूर्वक दिया जाय
और दूसरे समय दूसरी रीति पर लौटा पाने का भरोसा कियाजाय नोचेत
उस के द्वारा स्वजनों को सुख पाते देख के यों हीं सुख का अनुभव कर लिया
जाय आज तो रोटियों के लाले पड़े हैं लाखों लोग लोन खाने को तरसते हैं
सहस्रों खेत वस्त्रधारी ऐसी रीति से दिन काटते हैं कि सहृदय पुरुष उन का
भीतरी हाल सुन समझ के आंसू बहाए बिना रही नहीं सकता परमेश्वर न
करे ऐसी दशा में कोई राजनैतिक अथवा सामाजिक आपत्ति आपड़े तो मुंदी
भलमंसी का बचना भी दुस्साध्य हो जाता है इसी निर्धनता के मारे हमारे
तन का ऐसा पतन होता चला जाता है कि जिन लोगों को पाठशाला छोड़े
हुए अभी दश ही पंद्रह वर्ष बीते हैं उन्हों ने अपने सहपाठियों में जो क्रांति
जो स्फूर्ति जो उत्साह जो मस्तिष्क शक्ति देखी है उस का इहकालिक विद्या-
र्थियों में कहीं लेश भी नहीं पाया जाता चाहे लाख क्रिकेट [अंगरेजी ढंग
की कन्दुक क्रीड़ा] दिखलाइए कोटि कसरत कराइए पर वह बात सपने में
न देख पड़ेगी जो उन के बड़े भाई अथवा चचा इत्यादि में थी कारण क्या है
कि दिन दूनी उन्नति करते हुए दरिद्र के हाथों इन बेचारों को निश्चिन्तता
के साथ उत्तम भोजन नहीं मिलता इन दिनों के लोग इस निस्तेजता का
हेतु बाल्य विवाह को समझे बैठे हैं पर अभी सैकड़ों लोग जीते हैं जिन को
अवस्था साठ सत्तर वर्ष के लग भग है पर चेहरे पर एक प्रकार की दीप्ति दीख
हो रही है शीत काल में नंगे सिर नंगे पांव केवल रामनामी ओढ़ के गंगास्नान

कर आते हैं और घर में आके आध सेर ढाई पाव मट्ठा तथा घुइयां वा शकर कंद पेट भर के खा लेते हैं पर श्लेषमा अनपच का नाम भी नहीं जानते ग्रीष्म ऋतु में तेल के भूने हुए पंद्रह २ करेले उड़ा जाते हैं पर यह कभी नहीं कहते कि औगुन किया दो चार दिन के ज्वर जूड़ी अथवा दस पांच कोस चलने की थकाहट से कातर होने का नाम भी नहीं लेते और पता लगाइए तो व्याह इन का भी इसी अवस्था में हुआ था जिस में अब होता है और चरित्र इनके भी ऋषियों मुनियों के से न थे न घर में कोई भांड़ा गड़ा था पर हां खाने को इन्हें थोड़े दामों पर थोड़े परिश्रम के साथ अच्छे शुद्ध और पुष्टिकारक पदार्थ मिलते रहे हैं इसी से यह साठा सो पाठा वाली कहावत का जीवित उदाहरण बने बैठे हैं । पर इन के युवक संतान से यह बात कोसों दूर है यह नाम मात्र के युवा पुरुष थोड़ी सी सरदी गरमी भी नहीं सह सकते तनिक सा कुपथ्य कर लें तो दस पांच दिन तक शारीरिक शिकायत के बिना नहीं रह सकते इन्हें जब रोग आता है तब महीनों ही के लिए आता है और बिना अच्छी भली रोकड़ लिए नहीं जाता यह क्यों ? केवल इसी से कि इन के लिए कृषि वाणिज्य शिल्प सेवा इत्यादि आय के सभी द्वारबन्द हैं जिस काम में हाथ लगाते हैं उसी को विघ्न विह्व पाते हैं परमेश्वर झूठ न बुलावै सौ कुटुम्ब में अस्सी ऐसे ही मिलेंगे जिन में छोटे बड़े सभी यथा साध्य कुछ न कुछ उद्योग करते हैं पर ऐसा कोई वर्ष नहीं हो आता जिस में खाने पहिनने के व्यय से कुछ रख छोड़ने भर को भी बचता हो ऊपर टिकस चन्दा विदेशी व्यापार की वह भर मार कि दिनादिन निवाह कठिन इज्जत बचना दुश्वार लेने वालों को आय व्यय से कुछ प्रयोजन नहीं घर का काम क्योंकर चलता है सामर्थ्य कितनी है उन की बला से पेट पालने के उपाय का नाम लेते हो फिर इस का प्रायश्चित क्यों न करोगे ? विश्वास दमड़ी भर नहीं एक दिन पिछलने न पावे हां उजुरदारी करना हो तो उस को भी मांगिता सही पर दान पहिले हो जाना चाहिए इस के साथही दमड़ी की सूई अंग ढाकने को कपड़ा कहां तक चाहिए शरीर रक्षा के लिए औषधि तक विदेश से आवै एक २ के ठौर पर चार २ उठवावै और जो कुछ पास की पूंजी ले जावै वह सीधे सात समुद्र पार हो पहुंचावै और वहां से सौ जन्म तक फिर भारत का मुंह न देखने पावै जहां आमदनी का यह हाल और खर्च की यह गति हो वहां किसी का चित्त ठिकाने रहै तो कैसे रहै ? प्राचीन अनुभव शीलों का वचन है कि—चिता चिंता समाख्याता किन्तु चिन्ता गरीयसी। चिता दहति निर्जीवं चिंता जीवयुतं तनं ॥—वह चिंता यहां अनेक

रूप से शिरही पर चढ़ी रहती है पेट की चिंता लड़के बालों की चिंता बाहर वालों की दृष्टि में संभ्रम बनाए रखने चिंता घर बैठे किसी से कुछ वास्ता न रखने पर भी इज्जत की चिंता क्योंकि निश्चिन्तता तो तभी होती है जब घर में अधिक नहीं तो निर्वाह भर को तो सुभीता हो पर पता लगाइए तो जान जाइएगा कि ऐसे कितने लोग हैं जो शुद्ध रीति से बेफिकरी के साथ खा पड़ते हों ऐसी दशा में क्षीहत और निस्तेज हुए बिना कौन रह सकता है? इस के ऊपर तुर्रा यह है कि खाने के पदार्थ दिन २ महंगे होते जाते हैं धरती की उत्पादन शक्ति नहरों की बालू में दबती और जल में डूबती रहती है इस देश की जल वायु के अनुकूल उत्तम भोजन घी दूध हैं वह हरसाल अलभ्य नहीं तो दुर्लभ होते जाते हैं जिन्हें ज्यों त्यों प्राप्त भी होते हैं तो शुद्ध नहीं फिर भला जिन को घी के स्थान पर गुल्लू का तेल और दूध के ठौर पानी मिलता है वह क्या खा के पुष्ट रह सकते हैं? यदि परिश्रम कर के आंखों के आगे दुहाइए अथवा तपाइए तौभी यह निश्चय होना महा कठिन है कि उन पशुओं को पेट भर उचित खाद्य मिलता होगा क्योंकि जहां मनुष्यों ही को पेट भरने में सैकड़ों झलसेठें हैं वहां पशु बिचारों की क्या कथा? फिर उन के घृत दुग्ध मांस में वह गुण कहां से आवैं जो वैद्य बतलाते हैं और अभी तीस वर्ष पहिले यथावत विद्यमान थे! हाय ऐसी अड़चलों से जिनका दूर होना महा दुष्कर है हम निस्तेज और हत वीर्य होते जाते हैं हमारी संतति हम से भी गई बीती उत्पन्न होती है उस का पालन और भी कठिन देख पड़ता है इसी से हम पर यह लोकोक्ति सार्थक हो रही है कि—करवा के जनमल तुतुही तुतुही के जनमल अतुही—जो बल वीर्य पराक्रम बाबा में था उस का चतुर्थांश भी पिता में न था और जो पिता में था उस का हम में शतांश भी नहीं है जो हमारे आगे उपजते हैं उन में हमारे ओज तेज की भी गंध तक नहीं आती यह लक्षण देख २ के विचारमान व्यक्ति यही सोचते रहते हैं कि न जाने क्या होना है न जाने किस जन्म के किन २ पापों का फल परमेश्वर ने भारत संतान ही के लिए संचित कर रक्खा है इस के निराकरण का उपाय यद्यपि कष्टसाध्य है पर है सही किन्तु उस के अवलंबन करने वाले तो क्या समझने वाले भी पचीस कोटि देश वासियों में पचीस सहस्र भी हों तो बड़ी बात है इसी से रह २ कर हृदय में दुःख और दुराशा से कुचाल हुआ यही प्रश्न उठता रहता है कि न जाने क्या होना है।

श्री पण्डितप्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास" प्रेस बांकीपुर में मुद्रित हुआ।
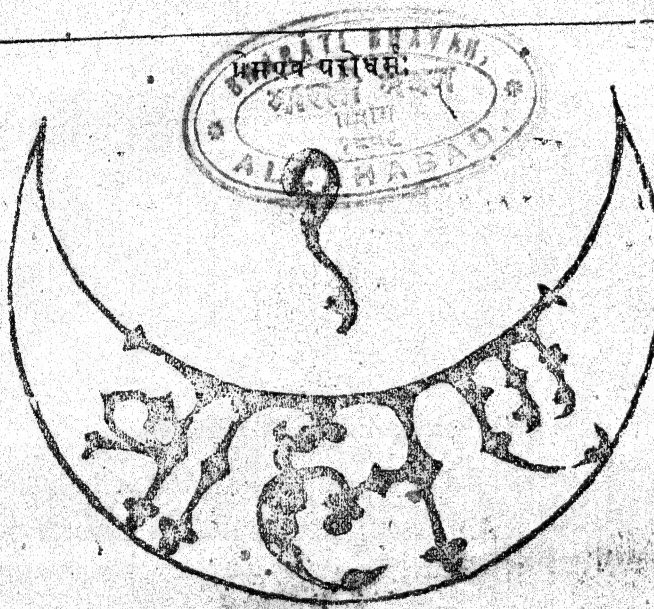
शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWPORE, 15 JANUARY. 7 H. C. } NO. 6.

खण्ड ७ { कानपुर १५ जनवरी हरिश्चन्द्र सं० ७ } संख्या ६।

नियमावली।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर।

विज्ञापन ॥

जरा पढ़ लीजिये !

कई मास से ब्राह्मण में श्रीहरिश्चन्द्र सम्वत ५ छप रहा है पर चाहिए था ६ किन्तु इस मास (जनवरी) से ७ आरम्भ हुआ है अतः जो सज्जन ब्राह्मण की जिल्द बंधवा के रखते हैं उन्हें सुधार लेना चाहिए पर जो रद्दियों में फेंक देते हैं उन की बला से जैसे ५ वैसे ६ वैसे ७ । छः मास इस वर्ष के भी बीत गए कहिए दक्षिणा अब भी भेजिएगा कि यों ही झिंखाते रहिएगा ? इस में कोई संदेह नहीं है बनावट न समझिएगा कि अब इस पत्र के ग्राहक इतने थोड़े हैं कि यदि सब से मूल्य प्राप्त भी होजाय तो भी इस वर्ष ५०) रु० से कम घाटा पड़ना सम्भव नहीं है यद्यपि घाटा हर साल पड़ता रहा है पर कभी बनावटी दोस्तों (साझियों) के आसरे भुगत लिया कभी यह समझ के झेल डाला कि आगामि वर्ष प्रबंध ठीक रक्खेंगे और ग्राहक बढ़ाने का यतन करते रहेंगे तो सब घटी पूरी हो जायगी और इसी विचार पर गत छः वर्ष में पांच सौ से ऊपर रुपया केवल अपनी गांठ से दिया भी पर अब मिहनत करके रुपया लगा के भी अपनी सरस्वती की विडम्बना असह्य है इस से इरादा तो इसी मास में बन्द कर देने का था पर करें क्या पांच सात सहृदयों को इस पत्र का एका एकी अंत हो जाना अत्यन्त कष्ट दायक होगा इस से कुछ हो इस साल तो जैसे तैसे चलाते हैं पर जहां यह वर्ष समाप्त हुआ वहीं ब्राह्मण के जीवन की समाप्ति में संदेह न समझिए हां जिन्हें इस से सचमुच ममत्व है वे ग्राहक बढ़ा के जीवित रख सकते हैं पर हम में अब हौसिला नहीं रहा ।

बाबू राधामोहन साहब कार्यवशतः बाहर चले गए हैं अतः ब्राह्मण संबंधी धन वा पत्रादि अन्य विज्ञापन न निकलने तक इस पते से भेजिएगा ।

प्रतापनारायण मिश्र

ब्राह्मण आफिस

कानपुर ।

व्योपारी वा सौदागर।

इश्तहार देने वाले महाशयों से आप लोगों को इश्तहार वा विज्ञापन देने का लाभ मालूम ही है। बीचम साहेब और हालवे साहब २४ लाख हर साल सिर्फ अपनी दवा के इश्तहार छपाने में खर्च करते हैं जिससे यहां तक लाभ हुआ है कि हालवे साहब ने २५ करोड़ रुपये से निस्वार्थ एक कालेज बनवा दिया है।

ऐसे लाभकारी विज्ञापन का देना परम आवश्यक है और फिर भी उन पत्रों में जो अधिक बटती हैं विद्याधर्मदीपिका,, हिन्दू समाज के सुधार के लिये बिना दाम, ही बटती है इसी से इस को चलती आप लोग समझ सकते हैं। विज्ञापन देने से कुछ खर्च तो होगा अर्थात् प्रति पंक्ति ॥) दो आना लगेगा और एक पेज का ३॥।) पौने चार रुपये, परन्तु इससे जो लाभ होगा उस की अपेक्षा खर्चा होने पर भी लूट के समान लाभ होगा। अंगरेजी पल्टन और नेपाल में पत्रिका के बहुत से ग्राहक हैं।

म्यनेजर विद्या धर्म्मदीपिका
रामनगर (चम्पारण)

ग्रामों के साथ हमाराकर्तव्य।

इधर पंद्रह बीस वर्ष से भारतवर्ष में देश को दशा के सुधार की धूम मच रही है धर्म संबंधिनी समाज संशोधिनी राजनीति विषयिणी छोटी बड़ी एक जातीय तथा बहु जातीय सभाओं उपदेशकों और समाचारपत्रों का प्रादुर्भाव इसी उद्देश्य से हुआ है और इस यतनों से यद्यपि अभी बहुत ही थोड़ी सफलता प्राप्त हुई है अथच जैसी चाहिए वैसी सफलता के लक्षण अभी दूर दिखलाई पड़ते हैं पर इस में संदेह नहीं है कि एक न एक दिन कुछ न कुछ होगा अवश्य, जब जहां के लोगों की चित्त वृत्ति पुराने ढर्रे से फिर के किसी नवीन पथ की ओर झुकना आरम्भ करती है तब कुछ दिन में वहां या तो पूर्ण उन्नति अथवा नितांत अवनति अवश्य मेव सुखदिखलाती है इस न्याय को सामने रख कर विचारने बैठिए तो आशा देवी यही कहती है कि जो देश सैकड़ों वर्ष से अवनत हो रहा है वह उन्नत न होगा तो क्या होगा यह प्राकृतिक नियम है कि एक दशा का अपनी परा काष्टा को पहुंच जाना ही

दूसरी (उस के विरुद्ध) दशा के प्रारंभ का लक्षण है इसके अनुसार सब इसी उन्नति ही की आशा करनी चाहिए एवं बहु सम्मति के अनुसार सभा इत्यादि का संस्थापन भावी उन्नति ही के साधन हैं पर इन साधनों का प्रभाव बिचार कर देखिए तो अभी केवल बड़े २ नगरों ही में सीमा बद्ध हो रहा है ग्रामों में यदि कुछ पहुंचा भी है तो इतना जितने को न पहुचना कहें तो अयुक्त न होगा बंगाल बम्बई मद्रासादि सविज्ञ प्रांतों के ग्रामों की ठीक २ दशा हम नहीं जानते क्या है कदाचित उन में नगरवासियों की भांति ग्रामस्थ जन भी अपने स्वत्व और कर्तव्य को जानते हों पर हमारा पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध जो सभी बातों में सब से नीचे पड़ा है जहां नगरों में भी लाख हाय २ करो पर कृतकार्यता के समय ढाक के तीन ही पात देख पड़ते हैं वहां के ग्रामों की दशा ऐसी शोचनीय हो रही है कि यदि हमारे देश भक्त गण शीघ्र उन की ओर दृष्टि पात न करेंगे तो शहरों का सब करना धरना इसी कहावत का उदाहरण हो जायगा कि रात भर पीसा औ चलनी में उठाया क्योंकि जिस देश को आप सुधारा चाहते हैं वह थोड़े से बड़े २ नगरों ही में विभक्त नहीं है बरंच एक २ नगर के आस पास अनेक छोटे बड़े गांव ऐसे विद्यमान हैं जिन की लोक संख्या नगर के जन समुदाय से कहीं अधिक है किसी प्राचीन से प्राचीन नगर के लोगों का पता लगाइए तो ऐसे कुटुंब बहुत थोड़े पाइएगा जिन के पूर्व पुरुष सदा से वहीं के रहने वाले हों बहुत से लोग वही हैं जिन के पिता अथवा पितामह या उन से दो ही एक पीढ़ी पहिले के लोग किसी गांव में रहा करते थे और वर्तमान पीढ़ी का आज भी उस ग्राम अथवा उस के निकटस्थ किसी स्थान से सम्बन्ध बना हुवा है जब बहुलोक पूर्ण नगरों का यह हाल है तो हमारे इस कहने में क्या संदेह कीजिएगा कि प्रत्येक बड़े से बड़े नगर की लोक संख्या से उस के प्रांतस्थ गावों की लोक संख्या अधिक है न मानिए आने वाली मरदुम सुमारी के द्वारा निश्चय कर लीजिएगा कि नगरों में बहुत लोगों की बस्ती है कि ग्रामों में ? पर खेद है कि जहां थोड़े लोग बसते हैं जहां सब प्रकार के समयोपयोगी साधनों के अवयव सुगमता से प्राप्त हो सकते हैं जहां का समुदाय स्वयं अथच परम्परा द्वारा सब भाषाओं के सब भाव समझ सकता है वहां के सुख सुविधा साधन और भविष्यत के लिये सुमार्ग एवं सुदशा के संस्थापनार्थ तो सब

प्रकार के उपाय किए जाते हैं पर जहां की जन संख्या बहुत ही अधिक वरंच तीन चौथाई से भी बहुत है और जहां अभी नवीन परिस्कृत रीतियों का समाचार भी बहुत ही स्वल्प पहुंचा है वहां को और देशोद्धारकों का ध्यान ही नहीं है! वहां के लोगों को उपदेश करने कभी जाते भी हैं तो पादरी साहबों के पारिषद जिन का मुख्य उद्देश्य भारतीय धर्म एवं जातित्व का नष्ट कर देना है क्या देश और जाति का मंगल चाहने वालों का इतना ही मात्र कर्तव्य है कि कपड़े बदल लिए और एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले अथवा रेल पर बैठ के एक नगर से दूसरे नगर में चलेगए और अंगरेजी अथवा अरबी मिश्रित उरदू में लेकचर दे २ कर तालो पिटवा आए और घर आ बैठे? इस रीति से यदि कुछ प्रभाव होता भी है तो केवल उसी स्वल्प समुदाय पर जो आपकी बतलाईहुई बातों से पहिले भी अभिज्ञान था पर इस प्रभाव को हम क्या आप भी देश पर प्रभाव पड़ना नहीं कह सकते क्योंकि जितनों को आप सुधारने का यत्न करते हैं अथवा कुछ सुधार भी लिया है उतना तो देश का चतुर्थांश भी नहीं है है भी तो पहिले ही से कुछ सुधर रहा था फिर आप देश की सेवा करते हैं वा केवल अपने सदृश लोगों के द्वारा प्रशंसा संचय करते हैं? शहर में आप भी समाचार पत्र निकालिए सहस्र समाजें स्थापित कीजिए लाख पुस्तकें प्रचरित कीजिए करोड़ लेकचर दीजिए पर देश भर का भला नहीं कर सकते देश का सच्चा आशीर्वाद नहीं लाभ कर सकते जब तक उन के उद्धार का प्रयत्न न कीजिए जो जानते भी नहीं है कि उद्धार किस चिड़िया का नाम है देश भक्ति अथवा जाति हितैषिता किस खेत की मूली है मानव जाति का कर्तव्य क्या है देश की भूत दशा क्या थी वर्तमान दशा कैसी है और भविष्यत के लिये इस के निमित्त किस २ रीति से क्या २ करना चाहिए हम जिस प्रकार से आज जीवन व्यतीत कर रहे हैं वैसेही हमारी संतान भी सदा दिन काटती रहेगी अथवा कुछ परिवर्तन भी होगा इस प्रकार के ज्ञान का प्रचार जिन के लिये आवश्यक है वे यद्यपि अनेकांश में धनी विद्वान विचारशील प्रतिष्ठित एवं समर्थ नहीं हैं पर मनुष्य वह भी हैं और यदि कोई उन के समझने योग्य भाषा में समझा दे तो समझ सब कुछ सकते हैं एवं यह कहना भी अत्युक्ति न समझिएगा कि उन्हीं के बनने बिगड़ने का नाम देश का बनना बिगड़ना है पर क्या कीजिए जो लोग देश के सुधार का

बाना बांधे हैं वे आज तक इन के सुधारने का नाम ही नहीं लेते नहीं तो यह लोग वे हैं जो नगर निवासियों की अपेक्षा अधिक निष्कपट अतिशय क्षतघ्न बड़े सहिष्णु और महा दृढ चित्त होते हैं जिस बात को अच्छा समझ लेते हैं जिस व्यक्ति वा समूह को अपना समझ लेते हैं जिस कार्य को करणीय समझ लेते हैं उस के लिये जब तक धोखा न खायं तन मन धन से उपस्थित रहते हैं बरंच अनेकश: प्राण तक दे देने को प्रस्तुत रहते हैं इस के अतिरिक्त यह तो एक साधारण बात है कि शीत ऊष्ण वर्षा सहने में दिन भर में दस पन्द्रह कोस पांव २ चले जाने में किसी को लज्जा भय संकोच से निश्चिन्त रहने में काम पड़ने पर कटु वाक्य एवं अयोग्य बर्ताव की उपेक्षा कर जाने में नगर वालों से कहीं उत्तम होते हैं और यही 'गुण हैं' जिन से प्रत्येक कार्य की सिद्धि संभावित होती है पर कार्य क्या है यह इन को समझ में क्या बड़े बड़ों की समझ में आप से आप नहीं आ सकता विशेषत: इन दिनों जब कि देश में चारो ओर दरिद्र के प्राबल्य से पेट की चिंता के मारे हमारो विचार शक्ति उकसने ही नहीं पाती ऐसे अवसर में वे लोग आप से आप क्या समझ सकते हैं जिन्हों ने स्कूल तथा कालेज का कभी मुंह नहीं देखा सुवक्ताओं के बचन कभी स्वप्न में नहीं सुने राजनीतिज्ञों समाज संस्कारकों समय की चाल के ज्ञाताओं के द्वार पर भी पहुंचने की क्षमता नहीं रखते! हां यदि आप शहर की गलियों के परिभ्रमण का मोह चट कटार कपड़े वाले मित्रों के संलाप का सुख आहर सुन के 'पुलक प्रफुल्लित पूरित गाता' हो जाने की लत हिन्दी शब्दों को मुख पर एवं कान तक आने देने से घृणा परित्याग कर के कभी २ अवकाश पाने पर उन की ओर चला जाना और अपनी ओर से उन की झिझक मिटाना तथा स्नेह पूर्ण सरल बातों में उन्हें अपना तत्व उन का स्वत्व मानवीय कर्तव्य का महत्व समझाना स्वीकार कीजिए तो थोड़े ही दिनों में देखिएगा कि आप के विचारों की पूर्ति का संतोषदायक सूत्र पात होता है कि नहीं धन और जन के द्वारा जितनी सहायता आप के सदनुष्टानों में आज मिलती है उस से दूनी सहायता मिलने का हम बीमा लेते हैं देहात के पुराने गृहस्थ यद्यपि मोटे और मैले वस्त्र पहिने रहते हैं पर उदारता और उत्साह में आप के कुरता कोट छकलियो धारी सहकारियों से चढ़े ही बढ़े निकलेंगे इस के अतिरिक्त उन का साथ देने

वाले भी आपके साथियों से अधिक संख्या और सच्चाई रखते हैं पर कसर इतनी ही है कि वे नए जमाने के रंग ढंग से बहुधा अज्ञात हैं यदि आप उन्हें समझा देंगे कि थानेदार साहब बादशाह नहीं हैं कि तनिक२ सी बात पर तुम्हें धमका के मनमाना बर्ताव कर सकें उनके ऊपर भी कोई हाकिम है जो विनय सुनने और प्रमाण पाने पर न्याय के द्वारा तुम्हारा काल्पनिक भय मिटा सकता है हाकिम लोग हौआ नहीं हैं कि तुम उन से अपना दुःख भी न सुना सको जब तुम नहर के जल से खेत सींचने के लिए राजस्व दे चुके अथवा अदालत का उचित खर्चा अदा कर चुके तब फिर किसी को कुछ देना न्यायानुमोदित नहीं है ऐसी दशा में उच्चाधिकारियों से निवेदन कर देना कोई पाप नहीं है तुम्हारे घर की स्त्रियां बकरी भेंड़ नहीं हैं उनका भी सब बातों में उतना ही अधिकार है जितना तुम्हारा है अतः उन को आनादृत रखना लोक परलोक दोनों में विडम्बन का कारण होगा घर में कन्या का जन्म होना वस्तुतः अभाग्य का चिन्ह नहीं है बराबर के कुल में उसे ब्याह देना कोई पाप नहीं है केवल भ्रम के कारण घबरा उठना व्यर्थ है ऐसी२ अनेक बातें हैं जिन्हें वे समझते भी हैं तो न समझने के बराबर हां कोई समझाते रहने का बीड़ा उठावे तो वे उस का अवश्य बड़ा ही उपकार मानेंगे और अपने निर्मूल दुःखों से बच के बड़े उत्साह के साथ प्रत्येक सदनुष्टान में योग देंगे जिन२ ग्रामों में श्री स्वामी दयानन्द जी की शिक्षा ने प्रवेश पाया है वहां के लोगों ने यह बात प्रत्यक्ष दिखला दी है कि वे उद्योग उत्साह और दृढ़ता में किसी से कम नहीं हैं फिर हम नहीं जानते कि हमारे सामाजिक और राजनैतिक उपदेशकर्ता क्यों उन की ओर अपना प्रभाव नहीं फैलाते ? क्या मैदानों की साफ ताजी हवा शुद्ध घी दूध प्रकृति के स्वाभाविक दृश्य सीधे सादे देश भाइयों का समागम और उनके उद्धार का यत्न तथा उनके द्वारा अपने कामों में साहाय लाभ करना थोड़े विनोद का हेतु है ग्रामों से हमारा प्रयोजन उन उन स्थानों से है जो रेल कचहरी और पक्की सड़क से दस बारह कोस दूर हैं वहां ईश्वर की ओर से सतयुग का एक चरण अब भी विद्यमान है पर इधर उधर के मनुष्यों की ओर से कभी२ नव्वाबी का आविर्भाव हो जाया करता है यदि हमारे देश वत्सलगण वहां जा जा कर अपना कर्तव्य निर्वाह किया करें तो उन का तथा अपना भी बड़ा उपकार कर सकते हैं क्या बड़ी२ सभाओं के बड़े २ व्याख्यान दाता इस बात का स्वयं भी विचार करेंगे ?

8 हृष्यन्ताम (छपे से आगे)

अब हाथ जोड़ना शिर झुकाना नहीं है तो मुख से 'नमः' कहना भी न सही पानो उलीचने के साथ पूर्व से 'हृष्यन्ताम' कहते आए हैं वही क्यों न कहे जायं? अरे बावा! नमस्कार भी तो हर्ष ही के लिए की जाती है।

जयन्त्य भरत प्रजा पीड़क सुत निज कर बधि पठए तव धाम ।
तब तब तोष जनक हमरे सुख सोहत रह्यो न्याय को नाम ॥
अब तो प्रजा बधिक सुख सोवहिं राज जाति बनि अभय मुदाम ।
यहि गति मइं किमि कहिय अहो जम! तुमहिं नमस्कृति हृष्यन्ताम॥५५॥
जहां बड़े बारिस्टर हू जानें न मुकदिमा को परिणाम ।
काढ़त रहत आईन अर्थ सों हाकिम इच्छा अनुगत काम ॥
जहं निज दुखहु न रोय सकत है प्रजा खरीदे बिन इसटाम ।
तहं तव हित हे धर्मराज जू कहा नमस्ते हृष्यन्ताम ॥५६॥
लैसन इनकम चुंगी चन्दा पुलिस अदालत बरसा घाम ।
सब के हाथन असन बसन जीवन संसय मय रहत मुदाम ॥
जो इनहू ते प्रान बचै तो गोली बोलति आय धड़ाम ।
मृत्यु देवता! नमस्कार तुम सब प्रकार बस हृष्यन्ताम ॥५७॥
भारत सुख सम्पति अंत करि कियो सारथक अपनो नाम ।
अब दुख दुरगति अंतकरन महं देखिय तव पुरुसारथ छाम ॥
याते विश्वामहि बिन कहियत कुल परम्परा बस बसु जाम ।
नौमि अहो आधी अन्तक जू यहि अंजुलि सों हृष्यन्ताम ॥५८॥
तलब चुकावहु चित्रगुपित की दूरि करहु बरि दूत तमाम ।
चित्ता तजहु नरक भरिबे की छाड़हु नाहक के इतमाम ॥
अब दरिद्र बम सब भारत सुत आपहि आय २ तव धाम ।
कहि हैं नमामिति वैवस्वत! करहु कुशकुलि हृष्यन्ताम ॥५९॥
सिर ते टरत अकाल न कबहूं दुरबस देखि परहिं नर बाम ।
करै कौन सुख उन्नति आसा काल काटिबो कठिन मुदाम ॥
का लच्छन इन पर प्रसोजिहैं जिन कहं प्रापत भोग तमाम ।
फिर है काल नमस्तुभ्यं बसि होइ सबहि भरि हृष्यन्ताम ॥६०॥
दिन २ दूनो दीन दसा सों दलित रहत व्याकुल नर बाम ।

सुधि करि २ बीते दिवसन की जीवन जचत वृथा बसु जाम ॥
तरसि २ क्यों मरैं विचारे करहु न कस सारथ निज नाम ।
नमः सर्व भूतक्षय कारक एक साथ ही तृप्यन्ताम ॥६१॥
गूलरि फल सम सब जग समुझहि तव सुख महं लहि सकत अराम ।
फिर भारत कहं लोह चणक इव कहा समुझि बैठे बल धाम ॥
क्यों नहिं मेटि देत सब झंझट जेहि जीवन ह्वै रह्यो हराम ।
नमामहे हे देव उदुम्बर ! होहु वेगि बसि तृप्यन्ताम ॥६२॥
तिनहिं देस चिन्ता नहिं तनको जिनहिं दई कछु समरथि राम ।
जे सुधार हित जतन करहिं ते लहहिं छदाम न पाव बदाम ॥
राजा निज स्वारथ महं मात्यो प्रजा न चितवत निज परिणाम ।
जहं यह गति तहं नमो दधन प्रभु होहु न काहे तृप्यन्ताम ॥६३॥
घने लोग तव बीज बनिज बस सहज खोय बैठहिं धन धाम ।
तुम्हरे रंग के पट धारिन सों भए भ्रष्ट कानून तमाम ॥
तिलक तिहारे सों कांपत हैं छोटे बड़े पुरुष अरु बाम ।
नमोस्तुते प्रसुनील ! करै कोउ तुम्हैं कौन विधि तृप्यन्ताम ॥६४॥
तव भगिनी जमुना जग मैया चलन न देत रहीं तव काम ।
निज दरसन परसन मज्जन सों पावहिं पठवत हौ हरि धाम ॥
पै अब के अति अधम अघी जन काढ़त दांत उनहु के नाम ।
याते निधरक परम इष्टि जू नमस्कुर्मं हे तृप्यन्ताम ॥६५॥
कुगति कीच के बीच परे सुख फूले मांस खाद्य के नाम ।
घास पात ही सों रुचि राखत ह्वै निचिंत नुचवावत चाम ॥
ऐसे अमित महिषि नंदन हैं तव समवारी हित सब ठाम ।
नमस्करोमि वृकोदर विभु का अबहूं न ह्वै हौ तृप्यन्ताम ॥६६॥
तुम सों अविदित नाहिं नेकहू परगट गुपित हमारे काम ।
उदर हेत जो करत रहैं हम निज बस परबस ह्वै बसु जाम ॥
सरवसुह अकोर मैं दै के सुकृति आस नहिं पाव बदाम ।
या गति मैं नति विनति करैं किमि तुमहिं चित्र जू तृप्यन्ताम ॥६७॥
देख तुम्हारे फरज़न्दों का तौरो तरीक़े तुआमो कयाम ।
ख़िदमत क्यों कर करूं तुम्हारी अक़्ल नहीं करती कुछ काम ॥

पावे गंग नज़्र गुज़रानूं या किस ए गुमगूं का ज़ाम ।
मुंशी चितरगुपत साहब! तसलीम कहूं या तिरपनलाम* ॥६८॥
शनैः शनैः ।

कविवर गुरु दयाल जी की कविता

(खं० ५ सं ११ के आगे)

अष्टगन्ध जोरे करि कष्ट अन्ध ओरे निसि अष्टरंध मोरे जहां घोर २ खट के। मंत्रन जगाए जीते तंत्रन में पाए लिखि जंत्र हू बनाए पी चढाए जीव झटके। भजन न भाए गुरदयाल जो बताए ब्रह्म बेहद न गाए कोटि जन्मन के भटके। पापन में अटे करि कर्म खट पटे रिद्धि सिद्धिन में नटे भए घाट के न घटके ॥ ७ ॥ पढ़ि कै मुतंत्र यंत्र साधि कीमा तोमा लगि नाना तरु लेखनी बनाई रचि २ कै। थापि थाप कापि जाप नापि नाप दिन राति तापे ताप बानर की नाईं नचि २ कै ॥ भांति २ माला किए बैठि मृग छाला किए मकरी को ऐसो जाला कीन्यो जचि २ कै ॥ भजन न कीन्हो गुरदयाल मत दीन्हो जौन बेहद न चीन्हो कहा कीन्हो पचि २ कै ॥ ८ ॥ पढ़ि कै साहित्य नेह नित्य सों न कीन्ह्यो चित्त छान्यो बात पित्त जे निमित्त वित जस के। गही कर नाटिका बराटिका के लालच को सो तो व्योम बाटिका तमासे दिन दस के ॥ जंत्रन सुधाख्यो बहु आसव उताख्यो पुष्ट मत ना सवाख्यो जानि रोग नस २ के। ज्ञान सम भूंकि बिना बेहद गुरु के सब्द राम रस चूके जो तो फूके कहा रस के ॥ ९ ॥ जोगिन में जोग मज्ञा भोगिन में भोग बिख रोगिन में रोग मानो जिय को जबाल है। जागिन में जाग अनुरागिन में अनुराग त्यागिन में त्याग वर ख्यालिन में ख्याल है ॥ तारन में तार अवतारन में अवतार मारन में मार वृज ग्वारन में ग्वाल है। कालन में काल त्यों दयालन में अति दयाल पालन में पाल ऐसो बेहद कमाल है ॥ १० ॥ जाख्यो कहा काम जो न रामनाम अनुभाख्यो जाख्यो कहा क्रोध जो मुबोध उर धाख्यो ना। जाख्यो कहा लोभ जु न कीन्ह्यो छोभ आपन को जाख्यो कहा मोह बद टोह जो निहाख्यो ना ॥ जाख्यो कहा मद जो न लागि ओ बेहद पद जाख्यो कहा मान सर्ज गर्ज सो गुमाख्यो ना। खट राग जाख्यो पैमवांख्यो न गुरु दयाल वृथा तन धाख्यो जग एको काज साख्यो ना ॥ ११ ॥ (फिर कभी २)

---

* और बतलाइये उरदू में तस्लीम क्यों कर लिखा पढ़ा जाता ?।

प्राप्तिस्वीकार ।

श्री जगन्नाथ भारतीय (दिल्लीनिवासी) कृत भारतीय भूषण—इस का मूल्य ग्रन्थकार की लोक हितैषिता मात्र है—आशय यह है कि सब मत विश्वास के आधारे हैं चाहे जिसे मानो पर उस के लिए दूसरों से झगड़ा ठान के विरोध बढ़ाना बुरा है—भला ऐसे लेख को कट्टर मतवादी के सिवा कौन न कहेगा कि उत्तम उपयोगी है देश के सौभाग्य का यंत्र है ।

गोविनय (आल्हा) श्री गदाधर प्रसाद जी मिश्र मुहर्रिर औवल सरिश्ते तालीम सुलतानपुर (अवध) लिखित गो भक्तों और आल्हारसिकों के लिये उत्तम है पर कहीं२ शुद्ध संस्कृत शब्दों ने आल्हा का मजा बिगाड़ दिया है ।

अपभ्रंश ।

यह महात्मा जिस शब्द पर दांत लगाते हैं उसे तोड़ मरोड़ के ऐसा बना देते हैं कि शीघ्रता से उस का शुद्ध रूप समझ में आना कठिन हो जाता है बरंच कभी २ तो ऐसी सूरत पलट देते हैं कि यह भी नहीं जान पड़ता कि यह शब्द है किस भाषा का दिहातों में कच्ची दीवारों पर भूसा और मट्टी एक में सान के लगाई जाती है उस का नाम वहां के हिन्दू मुसलमान पढ़े बिन पढ़े जिस से पूछिए कहगिलि बतलावैगा पर यह कोई नहीं बतलाता कि वह शब्द किस भाषा का है बिचारने से जान पड़ेगा कि फारसी में काह अथवा कह घास को और गिल मिट्टी को कहते हैं यही दोनों मिल के काहो गिल, काहगिल, कहिगिल, अथवा कहगिलि का रूप धारण कर लेते हैं और 'नवेदद्यावनी भाषां' का सिद्धांत रखने वाले पंडितों तक को ग्राम भाषा होने का धोखा देते हैं ऐसे ही 'लप्प लप्प' (जीभ लप्प लप्प होती है) फारसी के लब ब लब अर्थात् एक होंठ से दूसरे होंठ को आना अथवा उसी अर्थ के वाचक लबा लब का अपभ्रंश है इस अपभ्रंश की दया से दूसरी भाषा के शब्द दूसरी भाषा में ऐसे घुल मिल जाते हैं कि उन को असलियत जानना कठिन हो जाता है हमने गत वर्ष युवराज कुमार स्वागत में लिखा था कि 'जीवहिं सब पितु मातु कका काकी अरु आजी' इस पर बहुतेरे मित्रों ने जिह्वा और लेखनी द्वारा विदित किया था कि 'काकों का

गंवारी शब्द ला रक्खा है' पर वह विचारते तो जान जाते कि बाबा (पितामह) आजी (वरंच संबोधन में अरी आजी=आर्य्याजी) ऐया और अजी ऐजी तथा जी एवं मद्रासी ऐयर (कुलीन ब्राह्मण) सब आर्य शब्द को रंग बदलौअल है वरंच हिन्दी की सृष्टि ही संस्कृत शब्दों के अपभ्रंश से हुई है अक्षि (आंख) कर्ण (कान) मुख (मुंह) इत्यादि लाखों शब्द यदि शुद्ध रूप में प्रयोग किए जायं तो निरी संस्कृत ही बोलना पड़े इस से अपभ्रंश का त्याग करना भी भाषा का अंगभंग करना है क्योंकि उस के बिना निर्वाह ही नहीं प्रकृति का नियम ही है कि संस्कृत के 'यत्' शब्द को बंगाल में ले जाकर 'जतो' और 'जे' तथा बिलायत में पहुंचाकर झट that के रूप में जैसे ला डाला है वैसे ही अनेक भाषाओं के अनेक शब्दों के अनेक रूपांतर करके भाषांतर तथा अर्थांतर की छटा दिखाता रहता है फिर हम नहीं जानते खड़ी बोली की कविता के पक्षपाती ब्रज भाषा से क्यों चिटकते हैं और श्रीगोस्वामी तुलसीदास तथा बिहारीलाल इत्यादि सत कवियों के बचनामृत को सुधारने की नीयत से क्यों शक्कर को बालू बनाते हैं क्या इतना नहीं समझते कि अंगरेजी 'जियोग्राफी' अरबी 'जुग़राफ़िया' और फारसी 'जायगाह' जागाह' 'जागह' 'जगह' 'जाय' और 'जा' सब संस्कृत वाले 'जगत्' अथवा 'जग' के रूपांतर हैं पर यदि कोई हठतः उलट फेर के किसी शब्द की किसी भाषा के साथ रजिस्टरी किया चाहे तो हंसी कराने के सिवा कुछ लाभ न उठावैगा फिर यदि कवियों के प्रेम प्रतिष्टा की आधार स्वरूपा बृजभाषा ने आप के 'आया' 'गया' इत्यादि को माधुर्य के अनुरोध से 'आयो' 'गयो इत्यादि बना लिया तो क्या बिगाड़ हो गया एक शब्द का दूसरी प्रकार से उच्चारण करना तो सदा से होता ही आया है इस में किसी को हस्तक्षेप का इरादा करना निरी बौखलाहट है

श्री पण्डित प्रतापनारायणमिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ।
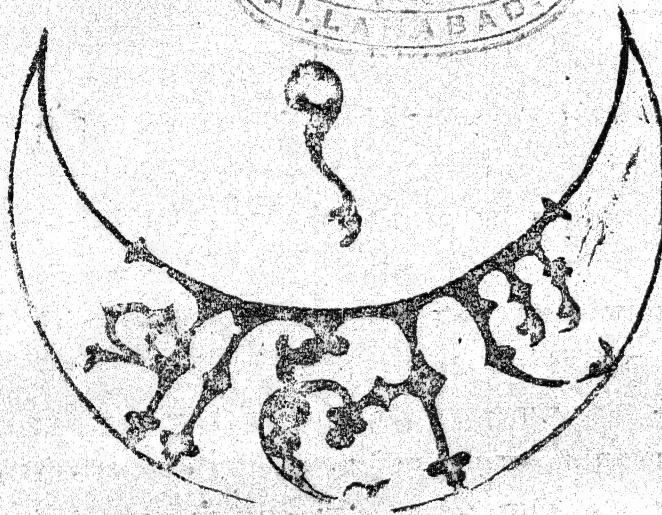
प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 DECEMBER. 5 H. C. } NO. 5.
खण्ड ७ { कानपुर १५ दिसम्बर हरिश्चन्द्र सं० ५ } संख्या ५।

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ۶) है नमूना भी संत न भेजा जायगा ।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ।

३—विज्ञापन की छपाई ۶) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा ।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा ।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर ।

कांग्रेस की जय ।

जय जयति राज प्रबन्ध शोधन हेतु वर वपु धारिनी ।
जय जयति भारत की प्रजा उर एकता संचारिनी ॥
जय जयति सागर पार लौं निज रूप गुन विसतारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ १ ॥

उतपत्ति पालन प्रलय आदिक अति अकथ लीला सबै ।
सब शक्ति सों सब ठौर सब बिधि जो करै सब जो फबै ॥
नित एक रूप अनेक गुन बनि ब्रह्म विश्व विहारिनी ।
जय जयति भगवति कांग्रेस असेस मंगल कारिनी ॥ २ ॥

जल पौन औनि अकास अग्नि इकत्र ह्वै परमानु लौं ।
अगनित अमित नित दीसहीं अति तुच्छ तन ते भानु लौं ॥
भल अभल आदि अनेक गुन मय एक जग वपु धारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ३ ॥

नव कोटि मूरति आछतहु जब देखिए तब एक है ।
जिन मह सबै सुर वृन्द तेज मिलै इकत्र अनेक हैं ॥
इमि देवि दुर्गा रूप सों जग को बिपति निवारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ४ ॥

जब सृष्टि के जिहि अंग में दुख दोख बहु बढ़ि जात है ।
तब ताहि टारन हित सुजन चित रूप तब प्रगटात है ॥
बहु भांति के बहु लोग लै इक सुखद पंथ सुधारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ५ ॥

जोरति अठासी सहस रिषि कहुं धर्म के परचार को ।
कहुं जोरि सब सुर हरति त्रिभुवन त्रिपुर जनित विकार को ॥
कहुं करि इकत्रित भालु बानर भूमि भार उतारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ६ ॥

जेहि काल इंग्लिश राज में सुविधा सबै विधि दीसहीं ।
तब हूं दरिद्र दुभाग सों दुचितो प्रजा कहं पीसहीं ॥
यह दोख दूरि बहाय जस विसतार हित अवतारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ७ ॥

सब सतन के सतिमान हिन्दुसतान इंगलिसतान में ।
तजि मोह तन धन को सदा माते रहैं जिहि ध्यान में ॥
सब के निमित सब भांति सों सब काम संसय हारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ८ ॥
जस गाय परि २ पायं जाचैं हमहिं यह बर दीजिए ।
निज विमुख वृन्द कुबुद्धि हरि कै सुपथ सनमुख कीजिए ॥
हे राज श्री दृढ़ थापिनी परजा विपत्ति विदारिनी ।
जय जयति भगवति कांगरेस असेस मंगल कारिनी ॥ ९ ॥

लेजिसलेटिव कौंसिल के मेम्बरों की नियुक्ति का प्रबन्ध ।

इस देश में ऐसे लोग बहुत ही थोड़े (कदाचित दो ही एक) होंगे जो देश भक्ति का तत्व कुछ भी समझते हों तथा अपनी मातृभाषा की तनिक भी ममता रखते हों और हमारे एवं हमारी मातृभूमि के परम हितैषी लंदन निवासी आदरणीय मिस्टर फ्रेडरिक पिन्काट महोदय को न जानते हों यह सज्जन सदा भरतखंड की भलाई का एक न एक परिस्कृत मार्ग निकालते ही रहते हैं सम्प्रति उपर्युक्त विषय का एक प्रबन्ध प्रकाशित किया है जिस का अनुवाद यहां पर मुद्रित कर के हम आशा रखते हैं कि हमारी माननीया गवर्मेंट अथच एतद्देशीय सद्व्यक्ति विचार पूर्वक काम में लावेंगे तो एक बड़ीभारी अलरुठ जो वर्षों से सहस्रों हृदयों में उलझन उपजा रही है बहुत सहज में दूर हो जायगी इस रीति के अवलम्बन में न कोई बड़ा भारी व्यय है न विशेष परिश्रम और फल तो सभी विचार शील जानते हैं कि प्रजा के संतोष अथच राजा की सतकीर्ति का बड़ा भारी अंश इसी पर निर्भर है क्या हमारे अन्यान्य सहयोगी भी इसके लिए अपनी लेखनी को थोड़ा सा कष्ट देंगे ? देख लीजिए विचार लीजिए प्रयोजनीय समझिए तो आंदोलन कीजिए प्रबंध (तजवीज़) यह है :—

श्रीमान मिस्टर पिनकाट द्वारा कल्पित हिन्दुस्तान के लिये सम्मति प्रदान का निर्णीत स्थान ।

हिन्दुस्तान की व्यवस्था प्रचारिणी सभाओं के लिए प्रतिनिधि संस्थापनार्थ जितने प्रबन्ध आज तक कल्पित किए गए हैं उन सब पर एक न एक आक्षे-

किया गया इस (वर करण प्रणाली पर आक्षेप किए जाने) का कारण यह है कि इस विचार को वर्ताव में लाने के लिए कोई अदूषणीय विधि नहीं प्रस्तुत हुई अत: मि० फ्रेडरिक पिन्काट महाशय यह कठिनता दूर करने के उद्देश्य से निम्न लिखित प्रबन्ध उपस्थित करते हैं ।

१ ब्रिटिश जाति द्वारा शासित समस्त भारतदेश का एक भूचित्र बनाया जाय उस में वरकरण प्रांत (ज़िले) निर्दिष्ट हों और आवश्यकता के अनुसार प्रत्येक प्रांत के लिए एक २ अथवा दो दो स्थान विभक्त कर दिए जायं ।

२ विश्वविद्यालय, म्युनिसिपल बोर्ड, व्यापार सम्बन्धिनी सभा, वाणिज्य सभा, हिन्दू और मुसलमानों की मुख्य २ सभा, कृषक समाज और ऐसे ही अन्यान्य समाज जो उस वर करण प्रांत में हों और जिन्हें श्रीमान वाइसराय महोदय निर्दिष्ट करें वे उस (प्रांत) के सम्मति प्रदायक निर्णीत स्थान समझे जायेंगे ।

३ वर करण काल के कुछ दिन पहिले प्रत्येक प्रांत के लिए दो निरीक्षक नियत किए जायं उन में से एक सर्कारी कर्मचारी हो दूसरा सर्कारी न हो (यह नियुक्ति उस प्रांत वाले प्रदेश के राज्य शासक अर्थात गवरनर इनकौंसिल ही के द्वारा होनी चाहिए न ?)

४ उन निरीक्षकों का कर्तव्य यह होगा कि जो लोग प्रांत के वर करण कार्य की अभिलाषा प्रकाश करें और जन समुदाय में कोई निर्धारित क्षमता विशेष रखते हों उन सब के नाम लिख लें और वर करण के एक मास पूर्व रजिस्टरी चिट्ठी द्वारा उन सब अभिलाषियों की छपीहुई नामावली उस प्रदेश के प्रत्येक निर्णीत स्थान वाले नित्यक अथवा नैमित्तिक सभापति (प्रेसीडेंट वा चेयरम्यन) के पास भेज दें ।

५ उस समय सभापति इत्यादि का कर्तव्य यह है कि अपनी २ सभा वा समाज के सभ्यों को एकत्रित कर के सम्मति संग्रह करें और जिन अभिलाषियों को सभासद गण वर कर्ता ठहराया चाहते हों उन के नाम (अथवा नामों) पर (सभापति उपर्युक्त नामावली में) चिन्ह करते जायं फिर इस सम्मति पत्र पर अपने हस्ताक्षर कर के (उचित समझें तो दूसरे के भी) रजिस्टरी चिट्ठी की भांति निरीक्षकों के पास लौटा दें ।

६ अब दोनों निरीक्षक (एक दूसरे के समक्ष में) उन सम्मति पत्रों में से

एक २ को खोल के प्रत्येक सम्मति प्रधान नामावली में अंकित करेंगे और जिन अभिलाषियों के नाम पर सब से अधिक सम्मति संख्या पाई जाय वही नियमानुकूल चुने हुए कार्यकर्ता निश्चित किए जायंगे।

७ सब प्रांतों के चुने हुए कार्यकर्ताओं का पहिला काम यह होगा कि किसी सुविधा पूर्ण स्थल पर एकत्रित हो कर सर्व प्रधान कौंसिल में संयोजित होने के लिए कार्यकर्त्ता निर्णीत करें इस बरकरण समाज में प्रत्येक कार्यकारी की सम्मति (सर्व प्रधान कौंसिल के प्रत्येक स्थान की पूर्ति के लिए) केवल एक सम्मति समझी जायगी यह बरकरण को कार्यवाही नामावली द्वारा (जैसे कि पहिले हुई थी) होगी अथवा जिस रीति से सुभीता देख पड़े वैसे सही परन्तु किसी कार्यकर्ता को एक अभिलाषी के लिए एक से अधिक सम्मति देने की क्षमता न रहेगी सुप्रीम कौंसिल में स्थान प्राप्ति के अभिलाषकों के निमित्त यह बंधन न होगा जो प्रादेशिक कौंसिल के लिये चुने हुए प्रतिनिधियों के हेतु है उन में दूसरे लोग भी सम्मिलित किए जायंगे पर मुख्य निर्धारित नियमों के अनुसार।

इस उपर्युक्त रीति में यह उत्तमता है कि एतद्द्वारा उन लोगों को बहुत ही सीमाबद्ध अधिकार मिलेगा जो (लोग) उचित रीति से सर्वसाधारण समुदाय के बड़े चतुर सावधान और सर्व प्रिय सहकारी समझे जा सकते हैं वह ऐसे लोग हैं जो इस समय भी सर्व साधारण सम्बन्धी कर्तव्यों के पूर्ण करने में थोड़ा बहुत उद्योग किया ही करते हैं और इस प्रकार की सेवा के लिए कटिबद्ध हैं तथा इन के कारण वर्तमान प्रबंध में तनिक भी अनियम होने की सम्भावना नहीं है बर करण के निमित्त इस रीति का अवलम्बन करने से कोई नई गढंत भी न करनी पड़ेगी केवल इस स्थल की अभिलाषा रखने वाले समुदायों (जो इस समय विद्यमान हैं) पर दो २ अथवा तीन२ वर्ष के उपरांत राज्य प्रबन्ध के विषय में सम्मति देने का भार पड़ा करेगा।

यह भी छिपा नहीं है कि बरकरण के इस प्रकार की कार्यवाही में उत्कोच (रिशवत) और अनुचित दबाव का बर्ताव असंभव है क्योंकि ऐसे अयोग्य काम उसी दशा में हो सकते हैं जब इन को पहुंच सम्मतिदायक मेम्बरों के उस बृहत समूह तक हो जो उन नियत की हुई भिन्न२ समुदायों से सम्बद्ध है जो (समुदाय) बड़े२ प्रांतों में फैली हुई है पर फिर भी वे मेम्बर वहां के

लोगों का मनोरथ केवल इतना पूर्ण कर सकते हैं कि वह सम्मति प्रदान कर दें किन्तु उसके लिए कोई उत्तरदाता नहीं हो सकता अस्मात् अनुचित कार्य-वाही का व्यर्थ होना सिद्ध है। फिर किसी म्युनिसिपलबोर्ड के अनिच्छा उपजाने योग्य कार्यकर्ता के बरकरण से कोई अयुक्त परिमाण नहीं उपज सकता क्योंकि सम्मति प्रदान के अंतिम परिणाम की उत्तरदायिनी किसी प्रांत की कोई विशेष समुदाय नहीं हो सकती इस के आकृत वह कार्यकारी अपने समुदाय का पूरा उत्तरदाता रहेगा क्योंकि उस प्रांत को यह अधिकार रहेगा कि भविष्यत बरकरण में उसे निकाल डालें।

स्वल्प व्ययिता की दृष्टि से भी यह पद्धति सर्वथा स्वीकार्य है गवर्नमेन्ट पर केवल इतना ही व्यय भार पड़ेगा कि दोनों निरीक्षकों को उचित वेतन और नामावली की छपाई तथा रजिस्टरी की फीस दे दे और सम्मति दायक समूह को निरीक्षकों के पास सम्मति पत्र लौटा लेते समय केवल रजिस्टरी का फीस देना पड़ेगा जो प्राप्त होने वाले अधिकार के आगे कुछ भी नहीं है अभिलाषक गण अपनी अभिलाषा प्रकाश करने का व्यय आप उठा लेंगे।

प्रत्येक सम्मतिदायक को उचित होगा कि अपने सम्मति पत्र की एक प्रतिलिपि अपने पास रक्खे और मुख्य सम्मति के कागज एक उचित समय तक जांच करने वालों के संख्या पत्र के साथ रक्खे रहें इस से यह फल प्राप्त होगा कि सम्मति पत्रों में यदि कोई हस्तक्षेप करेगा तो पता लग जायगा और दंड दिया जा सकेगा।

सच्चा सदनुष्ठान।

अब की बार दिल्ली में भारतधर्ममहामंडल का अधिवेशन बड़ी भारी धूमधाम से हुआ जिस का वृत्तान्त कई समाचारपत्रों के द्वारा प्रकाशित होने से अनेक सहृदयों को बड़ी भारी आशा और संतोष होने की दृढ़सम्भा-वना है पर हमारी समझ में यों तो उसके सभी विचार उत्तम और उपयोगी हैं किन्तु उनके अंतर्गत संस्कृत कालेज स्थापन करने का विचार ऐसा हुआ है जिस की इस समय बड़ी ही आवश्यकता थी हमें यह पढ़ के बड़ा आनंद हुआ कि कई उत्साही पुरुषों ने उसी समय चंदा भी जी खोल के दिया अर्थात् पंद्रह सहस्र रु० के लिए हस्ताक्षर हो गए और आशा है कि शीघ्र ही इस

का प्रबंध होने की चेष्टा की जायगी पर कोई हम से पूछे तो यही कहेंगे कि और सब काम कुछ दिन के लिए उठा रक्खे जांय पर इस के लिए जैसे बने वैसे शीघ्रही उद्योग करना चाहिए देश के सच्चे नीतिज्ञ शुभचिंतकों का परम धर्म है कि चाहे झोली बांध के पैसा दुकान मांगना हो क्यों न पड़े चाहे घर के कपड़े बर्तन बेंचने हो क्यों न पड़े चाहे झूठे वादों पर बरसों टालम-टोल करने के नियम पर ऋण ही क्यों न काढ़ना पड़े पर साम दाम निर्ल-ज्जता खुशामद इत्यादि सब कुछ करके किसी न किसी तरह इतना रुपया अवश्य ही एकत्रित कर लेना चाहिए जिस से उक्त कालेज की धन सम्बन्धी अड़चलें मिट जाने की पूर्ण आशा हो जाय क्योंकि यह एक ऐसा सच्चा सद-नुष्ठान है कि यदि परमेश्वर सचमुच धर्म से प्रसन्न होता है और देश का हित करना सचमुच धर्म है तो इस अनुष्ठान के लिए जैसी चाल चलनी पड़े सब धर्म ही है और ईश्वर को प्रिय ही है यद्यपि उचित तो यह है कि प्रत्येक बड़े नगर में एक २ संस्कृत और हिन्दी की सभा पाठशाला स्थापित करने के लिये पूर्ण उद्योग किया जाय और इस काम के लिए भारत माता आज इस मंडल ही का मुंह देख रही है पर यतः दिल्ली में इस की चर्चा छिड़ गई है और कुछ आशा की भी नींव पड़ गई है इस से सब से पहिले वो काम छोड़ के वहां इस का ढचर पड़ हो जाना चाहिए फिर धीरे २ सब हो रहेगा खरबूजे को देख के खरबूजा रंग पड़ता है हम नहीं समझते कि मंडल के उत्साही धर्म-वीर यह समझ लें कि बस दिल्ली में कृतकार्यता प्राप्त हो गई अब हमें कोई इति कर्तव्य बाकी ही नहीं रहा अथवा देश हजार निर्धन आलसी निरु-त्साह है तो भी यह संभव नहीं है कि जिस बात के लिए हावहाव की जाय उस में कुछ भी साफल्य न लब्ध हो पर जो काम सामने है पहिले वह पूरा होना चाहिए। आज हमारी पठन पाठन व्यवस्था ऐसी सत्यानाश हो रही है कि स्त्रियां जो निरक्षरा होती हैं वे तो अपने कुल की सनातन रीति नीति का कुछ अभिमान भी रखती हैं धर्म के उन अंगों पर जिन का उन्हें काम पड़ता है कुछ श्रद्धा भी करती हैं अनेकांश में अपने धन और मान की हानि लाभ का विचार भी रखती हैं रसोई पानी सीने परोने आदि में अधिकतः कुशल ही नहीं वरंच कशीदा इत्यादि के द्वारा अपने हाथ से अपना निर्वाह करने भर की बंद भी नहीं हैं पर हमारे बाबू साहब सिवाय नौकरी कर के

(सो भी बड़ी २ सिफारिश खुशामद स्वातंत्र्य त्याग करने पर दस पंद्रह बहुत बीस) पेट भर लेने के और किसी काम ही की नहीं है क्योंकि उन्हें स्कूल में आत्मगौरव कुलाचार कुलधर्म सुनीति सुखनिर्वाह उद्योग उत्साह आदि की शिक्षा ही नहीं दी गई तमाम हिस्ट्री रटे बैठे हैं पर इतना नहीं जानते कि हिन्दुओं में भी कोई सच्चा धार्मिक वीर उत्साही अपने भरोसे सब कुछ करने का इरादा रखनेवाला केवल थोड़े से साथियों के बलपर बड़े बूढ़ों के दांत खट्टे कर देने में साहसी हुवा है अथवा नहीं ? मिशन स्कूलों में तो खैर देवता पितर तीर्थ व्रत गऊ ब्राह्मण तुलसी ठाकुर गंगा भवानी आदि की ओर से अश्रद्धा उपजाने की चेष्टा की ही जाती है पर अन्य स्कूलों तथा कालेजों में भी हम नहीं देखते कि जातित्व संरक्षण की शिक्षा मिलती हो हां आप अपनी चतुरता से दूसरों की देखादेखी अपने देश जाति गृह कुटुंब आदि का ममत्व भले ही सीख लें पर वहां यही सिखलाया जाता है कि आर्य लोग हिन्दुस्तान के कदीम बाशिन्दे न थे कहीं बाहर से आकर यहां बसे थे धन्य है ! जातित्व नष्ट कर देने की क्या अच्छी युक्ति है पर निर्मूल ! नहीं तो भला आर्यों की सी समुन्नत जाति और पूर्ण उत्थान के समय किसी ग्रंथ में अपने पूर्व निवासस्थान का नाम भी न लिखती ? मुख्य मातृभूमि की ममता न कर के 'दुर्लभं भारते जन्म' इत्यादि के राग गाती ? पर समझै कौन समझे तो विदेशी शब्द ही रटते २ थक जाती है ! ऊपर से प्रयाग यूनीवर्सिटी ने हिन्दी (और अपना कलंक मिटाने मात्र को उर्दू भी पर झूठमूठ ; नहीं तो फारसी के विद्वान उर्दू में अधिकतः दक्ष होते हैं किन्तु संस्कृत के पंडित हिन्दी में बिरले ही चतुर होंगे इसी से अनेक सहृदयों का सिद्धांत है कि हिन्दी के साथ फारसी की तुलना हो सकती है न कि उर्दू ऐसी कच्ची भाषा की) का अपमान कर के यह और भी कोढ़ में खाज बढ़ा दी है कि जिन कोमल प्रकृति बालकों की बुद्धि एक ही विदेशी भाषा के मारे प्रस्फुटित न होने पाती थी वे अब दो २ दूर देशी भाषा पढ़े और स्वास्थ्य की की तिलांजली दे के बुद्धि संचालन का समय ही न पा के लड़कपन यों व्यर्थ बितावें फिर यौवन और वार्धक्य तो परमेश्वर ही ने व्यर्थ किया है हम सैकड़ों बी॰ ए॰ एम॰ ए॰ दिखला सकते हैं जिन में अंगरेज़ी बोल लेने के अतिरिक्त सदाचार सुशीलत्व देश भक्ति आदि विद्या के फल की गंध भी नहीं हैं

क्योंकि उन्हें कभी शिक्षा ही नहीं दी गई ! यदि स्कूल की अनैठा से घबरा के लड़के को मौलवी साहब के यहां भेजिए तो हिसाब का नाम न जानेगा भूगोल खगोल रेखागणित बीजगणित का स्वप्न न देखेगा अपने पूर्वजों को यह भी न समझेगा कि किस खेत में पैदा होते थे हां बड़े बूढ़ों के सामने नम्रता और बराबर वालों से शिष्टता में अभ्यस्त हो जायगा अंगरेजी वालों में इस का भी अकाल नहीं तो मंहगी अवश्य है) पर सीखने को जन्म भर में आशिक माशूक गुल बुलबुल जुल्फ़ अब्रू और बस ! तथा इस का फल केवल इतना कि खाते पीते घर का हो तो तरहदारी को नहीं तो अमीरों की खुशामद में जीवन बिता दे मनुष्य जन्म का कर्तव्य जानना घर से सौ कोस दूर है रहे हमारे पंडित राज उन के यहां आठ दस वर्ष केवल कौमुदी रटने में लगते हैं दूसरे शास्त्र पढ़ने हों तो ब्रह्मा जी की आयुर्दाय चाहिए क्योंकि व्याकरण केवल दूसरे शास्त्रों के समझने के लिए पढ़ी जाती है सो यहां दतून हीं करते दुपहर पर चार बजते हैं नहाना खाना कैसा ? इस के साथ हिन्दी में अभ्यास करना तो दूर रहा भाषाया: क्रियमाणं ? संस्कृत भी ऐसी ही रहती है कि एक श्लोक रख दीजिए पहर भर तक पदच्छेद सुन लीजिए पर भावार्थ पूछिए तो एक वृक्ष समारूढ़ा नाना वर्णा विहंगमा: एक जो है वृक्ष तेहि विखे नाना वर्णा के जो विहंगम कहें चिरई है ते सम्यक प्रकार करि के आरूढ़ हैं बस समझो भाड़ चूल्हे में जाय और जो कहीं संस्कृत में एक चिट्ठी लिखनी पड़े तो सत्रह दिन चाहिए बस राम राम सीता राम पर इस के साथ रूक्षता अभिमान और अरसिकता थर्मामीटर का पारा सदा एक सौ बारह नम्बर पर रहता है सभा में बैठे तो शांति रक्षा के लिए पुलिस बुलाना पड़े देश की क्या दशा है जाति का कैसा रंग है उस के सुधार के लिए क्या कर्तव्य है इन बातों का कदाचित स्वप्न में भी ज्ञान नहीं ऐसी दशा में हम नहीं कह सकते कि द्वेषी लोग संस्कृत को मृत भाषा और हिन्दी को निरी निरर्थक क्यों न कहें ? जिस संस्कृत में आज भी वह २ बातें विद्यमान हैं जो दूसरी भाषाओं को सैकड़ों वर्ष मिलनी कठिन हैं जिस हिंदी के बिना हिन्दू जाति का गौरव ही नहीं रह सकता उस की यह दशा और देश भाइयों की उस के विषय यह उपेक्षा तथा गवर्नमेंट की ऐसी क्रूर दृष्टि देख के किसी परिणामदर्शी को भविष्यत के लिए दुर्दैव की एक अकथनीय कराल मूर्ति न देख पड़ती होगी इस भयानक मूर्ति के खंडित कर देने की आशा

श्री दयानंद स्वामी के एङ्लोवैदिक स्कूल से भी की जा सकती है पर उस के पक्ष तो पंजाब में होने के कारण जितना सहारा संस्कृत को मिलता है उतना हिन्दी को मिल नहीं सकता और हिन्दी के बिना इस काल में संस्कृत को ऐसा ही समझना चाहिए जैसे बिना शस्त्र का योद्धा दूसरे अभाग्य वशतः वहां पुराणों का आदर ही नहीं है जो सहृदयता का मूल है इस से वहां के विद्यार्थी साक्षर चाहे जैसे हो जायं देशहितैषी और उद्योगी अवश्य होंगे पर रहेंगे शुष्कवादी और सर्वसाधारण का स्नेह लाभ करने में अक्षम ऐसे अवसर पर भा० ध० म० मं० का उपर्युक्त विचार ऐसा हुवा है जैसे सूखती हुई खेती के पक्ष में मेघमाला का दर्शन परमेश्वर करे यह कालेज स्थापित हो जाय तो आशा है कि वेद शास्त्र पुराण काव्य नीति इतिहास सभीको आश्रय मिलैगा और साथ ही नागरी देवी भी बड़ा भारी सहारा पावैंगी तथा किसी सम्प्रदाय हिन्दुओं को इस से चौंकने की भी सम्भावना नहीं है हम यह भी नहीं सोचते कि इस के अधिकारी लोग बालकों के स्वास्थ्य और सदाचरण पर भी उतना ही ध्यान न देंगे जितना शिक्षा के लिए दातव्य है इस रीति से कोई संदेह नहीं है कि दस ही पांच वर्ष में व्यवहार कुशल धर्म्माभिमानी देश भक्त जाति हितैषी उद्योग शील और कार्यदक्ष नवयुवकों का एक समूह उत्थित हो के हमारे संतोष का कारण होगा इसी से कहते हैं कि इस सदनुष्टान में बिलम्ब करना ठीक नहीं जैसे बने तैसे शीघ्र ही उठाना चाहिए।

प्राप्ति स्वीकार ।

दिल्ली निवासी श्री जगन्नाथ भारतीय रचित भारतीय विचार निश्चय इस काल में ऐसी पुस्तकें जितनी अधिक प्रकाशित हों उतना ही देश का सौभाग्य समझना चाहिए इस में मत वाद छुड़ा के देश हित लगाने की अच्छी रीति से चेष्टा की गई है ।

वाद निवारण—इस में भी भारत धर्म महामंडल तथा आर्य समाज के अभिभावुकों का वैमनस्य मिटाने का उद्योग किया गया है इन दोनों ग्रंथों के देखने से हमें यह विचार बड़ा ही आनंद देता है कि अब हमारे आर्य ग्रंथकारों की रुचि मतवाले झगड़ों के मिटाने से पूर्णरूप से बढ़ती जाती है और यही हमारा मुख्य उद्देश्य है भारतीय विचार का यह वचन कि—कोई बात किसी को निरर्थक नहीं है—और वाद निवारण का यह वाक्य कि मत वही अच्छा है जिस में शांति हो हमारे प्रेम सिद्धांत के मूल मंत्र हैं भारतीय

विलास अर्थात् परम धर्म यह भी चौकठे में जड़वाकर प्रत्येक देश भक्त और धर्मभावुक को अपने बैठकखाने में लगाना चाहिए और जिनको सच्चे जी से भला चाहते हों उन्हें नित्य एक बार दिखाना चाहिए पर भारतीय महाशय को भी यह पत्र अच्छे चिकने कागज पर खूबसूरती के साथ छपवाना चाहिए जिस में खाहमखाह सब की दृष्टि पड़े क्योंकि यह लोक परलोक बनानेवाली बातें हैं।

नवीन वेदांत नाटक—नाटक तो इसे हम कह नहीं सकते पर पुस्तक निस्संदेह उपकारिणी है "ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव केवलं" वाले सत्यानाशी सिद्धांत से अरुचि उपजाने का इस में अच्छा ढंग है।

दिल्ली दर्पण—इस में दिल्ली के मुख्य २ स्थानों का वर्णन है अतः वहां की सैर करने के अभिलाषियों के बड़े काम की है इन पुस्तकों के दाम भी बहुत थोड़े अर्थात पाव २ आध २ आने हैं और दाम ही क्या उक्त महाशय यों भी तो मांगने पर भेज ही देते हैं क्योंकि इन की पुस्तकें केवल देशोपकार के लिए होती हैं न कि पैसा कमाने को।

साहाय्य प्राप्ति ।

इन्द्रप्रस्थवासी श्री जगन्नाथ भार्तीयद्वारा प्रेरित छः रु० की सहायता हम सादर स्वीकार करते हैं यद्यपि खुशामद कर के किसी से कुछ एंठ लेना हमारी शान के बईद है पर प्रेम पूर्वक जो सज्जन कुछ दान करें वह अंगीकार न करना भी रुखता है तथा ऐसे लोगों का धन्य वाद न करना महा कृतघ्नता है विशेषत: जो पत्र ग्राहकों की स्वल्पानादिहंदों को अधिता और कपटी मित्रों की तो ताचश्मी (नहीं ले मारो भी) के कारण जो दिन चलता है तई दिन पहुत हैं ऐसे की सहायता करने वालों को कौन न धन्य वाद देगा।

तृप्यन्ताम ।

(मुद्रित से आगे)।

दिन दिन नाशैं उपज अन्नकी कबहूं अति वर्षा कहुं घाम ।
तहूं नृपति कर करत रहत है हरपुर निरखत बैल गोलाम ॥
जब तिल तंदुल नित नित महंगें उद्यम बिन घर में न छदाम ।

कित सों कहा जाय किमि कहिए काव्य बाउजू तृप्यंताम ॥ ४७ ॥
जंह माहिन जल रोग जनक तहं न्यायन कौन तिहारो काम ।
पै निरबस निरधन परजाकर घर बोरहु करि सो इतमाम ।
जबरदस्त को बीसो बिसुवा खरचहु चारि एक के ठाम ।
हमरो छाती गड़हु लौहमय है जम के नम तृप्यन्ताम ॥ ४८ ॥
एको गुनकर लेस न हम में सोम रविस सब हित सुख धाम ।
हां औगुन सब देखि लेहु निसिचर कलंकयुत छिन छिन छाम ॥
याही नाते बिदित हमारो सोमवंश रविवंशज नाम ।
सोम नाम धर पितर ! होहुगी का हमरेकार तृप्यन्ताम ॥ ४९ ॥
तुम कहंन्यायरुचत है हम कहं मिलत न कछु खरचे बिन दाम ।
अरु दासन को कहां जोग जहं कृषि बाणिज सेवाहु निकाम ॥
संजम नियमहु भूलि रहे हम तुमहि रिझावैं केहि इतमाम ।
केवल जीभ हिलाय कहो कहि देहिं अहो यम तृप्यन्ताम ॥ ५० ॥
उत्तम गुन द्विजरिषि नृपरिषिगन लेइ गए निज संग सुरधाम ।
अबतो भारत जाति दशा पर हांसी होति सदा सब ठाम ॥
जो इनहीं के पितर होहु तुम तौ जग आय न सहो कुनाम ।
सुख सों पितर लोक में बैठे अहो अर्यमा तृप्यन्ताम ॥ ५१ ॥
ब्रह्म अग्नि बुझि गइ बरहन ते जठर अग्नि जन जरैं तमाम ।
अग्निहोत्र यज्ञ आतशबाजी फूंकि रहे जिन घर कछु दाम ॥
अग्नि शस्त्र संचालक [illegible] लागि भागि में आगि सुदाम ।
जनम जले जक दै किमि बिनवैं अग्निष्वाता तृप्यन्ताम ॥ ५२ ॥
रूप न चीन्हैं गुन नहिं जानैं केवल सुन्यो नाम ही नाम ।
लावैं सोमलता केहि दिशि सों जंगल तो कटि गए तमाम ॥
बिना तासु रस तृपति तिहारी कैसे करैं कहो मति धाम ।
सोमपान यज्ञ सामपीन जो ऋचै सोमपा तृप्यन्ताम ॥ ५३ ॥
त्रिय बर पद प्रसाद ते तुम कहँ दर्भ मूल हू बसत अराम ।
हम चिंता बस घरहूं बैठि कै दुख सों काटत हैं बसु जाम ॥
चित्त न रहै ठिकाने तौ किमिनिब है देव पितर के काम ।
यहि गति माहिं वृथा कहिबो है अहो बर्हिषद तृप्यन्ताम ॥ ५४ ॥

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ ।

प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ठ
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 खण्ड ७ — CAWNPORE, 15 NOVEMBER. 5 H.C. • कानपुर १५ नवेम्बर हरिश्चन्द्र सं॰ ५ — NO. 4, संख्या ४

नियमावली।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ✓) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु॰ लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई ✓) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथाब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मेनेजर ब्राह्मण
कानपुर।

मूर्ति पूजकों की महौषध ।

यों चाहे जो कहा करे कि मूर्तिपूजा वेद विरुद्ध होने के कारण हानिकारिणी है पर जिन महात्माओं का सिद्धान्त है कि 'धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्य मूल मुत्तमं' उन के वचनानुसार हम कह सकते हैं कि जिन्हें इस काम में पूर्ण श्रद्धा न भी हो वे भी केवल नित्य नियमानुसार दर्शन और चरणामृत पानपात्र से शारीरिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं प्रत्याह सूर्योदय के पहिले गंगा स्नान निभ सके तो तो कहना ही क्या है प्रातःकाल की स्वच्छ वायु का सेवन सो भी पावर घण्टे के वैद्य डाक्टर हकीम सभी के मत में महागुणदायक है ऊपर से उस समय जिस देवमंदिर में जाइए बहुधा फूलों तथा धूप कर्पूर से महकता हुआ पाइएगा यह मस्तिष्क के लिए अमृत ही है परमेश्वर ने चाहा तो हैजा और इनफ़्लुयंजा तो कभी पास न आवैंगे यदि इतना भी न हो सके तो चरणामृत ही का नेम कर लीजिए उस की भी यह महिमा झूठ नहीं है कि 'अकालमृत्यु हरणं सर्वव्याधि विनाशनं' जो व्याधि हरेगा वह अकालमृत्यु को अवश्य ही निकट न आने देगा सो सभी पदार्थ उस में विद्यमान हैं गंगाजल को सभी जानते हैं सारे संसार की नदियों से अधिक शुद्ध है बरसों रख छोड़ो न स्वादु बदलेगा न दुर्गंधि आवेगी न कीड़े पड़ेंगे ऐसा उत्तम जल उस में भी सर्वज्वरघ्न तुलसी के दल ऊपर से महातापहारक चंदन (ज्वर अजीर्ण और दाह में वैद्यों के यहां तुलसी तथा हकीमों के यहां संदली सुफ़ैद आगे चलते हैं') सो भी जाड़े के दिनों सुगंधि प्रसारक एवं पुष्टिकारक केशर से मिला हुआ जिसे नित्य निहार मुंह सेवन करने को मिलेगा उसे भला शीतोष्ण जनित व्याधि क्यों सताने लगीं विशेषतः भारत ऐसे उष्णता प्रधान देश में ? उपर्युक्त तीनों पदार्थों का गुण चाहे जिस वैद्यविद्या विशारद से पूछिए उत्तम ही बतलावेंगे फिर हम क्यों न मान लें कि भगवान का चरणोदक इस देश वालों के लिये बिन पैसा कौड़ी की सर्व व्याधि विनाशिनी महौषध है हां यदि नए नेमियों को उस के सेवन से श्लेष्मा हो जाय तो केवल दो ही तीन दिन का काया कष्ट है जान जोखों नहीं है जब अभ्यास पड़ जायगा तब प्रत्यक्ष गुण देख पड़ेगा यदि हमारे कहने से जी न भरे तो चरणामृत के ऊपर से दो चार बालभोग के बताशे अथवा भिगोई हुई चने की दाल (कच्ची) थोड़ी सी पा जाइए तो वह डर भी जाता रहेगा और सुनिए

श्री शालिग्राम अथवा नर्मदेश्वर जी को स्नान करा के आंखों पर स्पर्श की-
जिए तो वह ठंढक आती है कि क्या ही कहना है आश्चर्य नहीं जो ऋषीयों
ने प्राणायाम जनित उष्मा की निवृत्तिही के लिए यह रीति निकाली हो
कई मित्रों का अनुभव है कि नेत्र विकार के लिए यह अत्युत्तम उपाय है
यदि ऐसी ही ऐसी बातें वेद विरुद्ध हैं तो वेद भगवान को दूर ही से प्रणाम
है जो श्रद्धालुओं के तन मन और आत्मा के लिए सुखद और केवल नियम
पालकों के लिए शरीर स्वस्थ रखने वाले मूर्तिपूजन का निषेध करते हों।

श्री भारतधर्म महामंडल।

जिन विदेशी इतिहास लेखकों का यह मत है कि 'आर्यजाति यहां की सनातन निवासिनी नहीं है वरंच आदि में ईरान अथवा अन्य किसी देश से आके और यहां के प्राचीन निवासियों को हरा के अपना प्रभुत्व जमाया तथा घर बनाया था' उन का कथन तो हमारी समझ में नहीं आता क्योंकि उन्हीं के वचनानुसार सृष्टि को बने हुए अनुमान छः सहस्र वर्ष बीते हैं और इतने थोड़े दिनों का पता लगाना खोजी के लिए दुस्साध्य चाहे जितना हो असाध्य नहीं है फिर आज तक किसी ने क्यों न बतलायाकि आर्यों के आने से पहिले इस देश का क्या नाम था? भीलस्थान कोलस्थान गोंडस्थान अथवा और किसी असभ्य जाति का स्थान? यदि कोई महात्मा कुछ अनुमान कर करा के कोई नाम नियत भी कर देंगे तो हमें यह पूछने का ठौर बना रहेगा कि भिल्ल कोलादि तो आर्यों ही की भाषा के शब्द हैं तथा स्थान अफगानिस्तान और सितां इत्यादि भी संस्कृत ही के स्थान से बिगड़ बिगड़ा के बन-गए हैं और जो जाति यहां आर्यों से पहिले रहती थीं वह भी संस्कृत ही बोलती थीं इस का क्या प्रमाण है? इस का उत्तर आप के पास आज केवल इतना ही है कि आगे क्या था यह कोई जानता नहीं है हां अनुमान से ऐसा ही जान पड़ता है (जैसा विदेशी इतिहास लेखकों का मत है) पर स्मरण रखिए कि आप का यह अनुमान ठीक नहीं है क्योंकि यदि आप ईश्वर को मानते हैं तो उसे अनादि सर्वशक्तिमान और सृष्टिकर्ता भी अवश्य कहते होंगे तथा यह तीनों गुण तभी रह सकते हैं जब सृष्टि का आदि अंत न ठहराइए नहीं तो बतलाइए तो छः सहस्र वर्ष पहिले (जब सृष्टि न बनी

थी) तब ईश्वर क्या कर रहा था ? यदि कुछ न करता था कहिए तो उसका सर्वशक्तिमानत्व और सृष्टिकर्तृत्व अनादि नहीं रहने का अर्थ ईश्वर का अस्तित्व ही व्यर्थ हो जायगा ! यदि ईश्वर को न मानिए तौभी कृपा कर के यह बतलाइए कि जिन पदार्थों और संघट्टनों से सृष्टि बनी है वह छः सहस्र वर्ष पहिले थे या नहीं ? यदि थे तो सृष्टि क्यों न बन गई और यदि न थे तो सृष्टि रचना के समय कहां से कूद पड़े ? ऐसी २ बातों का विचार करने बैठिए तो अंत में निकास यही निकलेगा कि आस्तिक और नास्तिक दोनों मतों के अनुसार जब से ईश्वर अथवा सृष्टि की सामग्री है तभी से उस का काम अर्थात जगत का प्रादुर्भाव और तदन्त:पाती वस्तुओं की दशा का परिवर्तन होता रहता है रहा मोटी रीतिपर समय का कोई घड़ा बांध लेना उस के लिए जिन के यहां आदम से सृष्टि का आरंभ माना जाता है उन के यहां हमारे देश का कहीं नाम भी नहीं लिखा फिर उन लोगों के अनुमान का क्या ठीक ? वे किस मूल पर ऐसा अनुमान करते हैं वही जाने पर बिना किसी पुष्ट प्रमाण के उन का कथन सब को मान लेना कुछ भी आवश्यक नहीं है इधर जिन के यहां ब्रह्मा से सृष्टि का आरंभ ठहराया जाता है उनके शब्द प्रमाण से स्पष्ट विदित है कि ब्रह्मा ब्राह्मण अर्थात आर्य थे (वा हैं) वे किसी दूसरे देश से यहां न आए थे कानपुर के निकट ब्रह्मावर्त में उन्हों ने यज्ञ किया था और उन के पुत्र मनु जी (जिन की बनाई मनुस्मृति विद्यमान है) जो मानव जाति के मूल पुरुष हैं अयोध्या के राजा थे और नैमिषारण्य में तप किया था यों शास्त्रार्थ के आगे सभी देश के इतिहासों में गड़बड़ाध्याय है पर पता लगाने का पुष्ट उपाय यही है कि जहां का इतिहास जानना हो वहीं के बहुत पुराने ग्रन्थों तथा वचनों से ढूंढ़ा जाय दूसरे लोगों का अनुमान बहुधा भ्रांतिमूलक ही होता है इस न्याय से हिन्दुस्तान सदा से हिंदुओं का है और हिन्दू यदि किसी दूसरे देश से आए होते तो उन के प्राचीन ग्रंथों में उस देश का कुछ विवरण तथा इस देश के आदिम निवासियों की भाषा में यहां का नाम ग्राम अवश्य लिखा होता क्योंकि इस में कोई भी संदेह नहीं है कि सब से पहिले लिखने पढ़ने कृषि वाणिज्यादि करने में इन्हीं ने सब के आगे कदम बढ़ाया था सारांश यह है कि आज हम किसी दशा में क्यों न हों अथवा हजार पांच सौ वर्ष पूर्व कैसा ही दुख सुख क्यों न भोगते रहे हों पर

हिन्दुस्तान हमारा है क्योंकि हम हिंदू हैं यद्यपि मुसलमान ईसाई फारसी सब यहां रहते हैं पर कहलाते हिंदुस्तानी ही हैं जो नाम हमारे नाम के योग से बना है हमारा राजा कोई हो कहीं का हो पर जब वह स्वयं अथवा उस के कुटुम्बी वा सजाती यहां कुछ दिन के लिए भी निवास स्वीकार करेंगे तो हमारे ही नाम के साथ परिचित होने लगेंगे क्योंकि हम आर्य हैं और यह देश हमारा आवर्त है हम हिन्दू हैं और यह देश हमारा स्थान है यह भारत है और हम यहां के मुख्य निवासी हैं दूसरे लोग केवल गौण रीति से भारतीय कहलावैं पर मुख्य भारतीय हमीं हैं जिन के लाखों पुरखे भारत में हो गए और परमेश्वर चाहेगा तो आगे होने वाली लाखों पीढ़ियां भारत ही में बीतेंगी तथा हमारी ही उन्नति अवनति का नाम भारत की उन्नति अवनति है था और होगा क्योंकि राजा राज कर्मचारी राज जातीय धनी विद्वान एवं गुणवान इत्यादि यद्यपि सुखित प्रतिष्ठित और शक्ति समन्वित होते हैं पर यत: उन की संख्या बहुत थोड़ी होती है इस से उन के सुख दुख सम्पत्ति विपत्ति आदि को देश का सुख दुख सम्पत्ति विपत्ति नहीं कहते वे चाहे यहां के निवासी हों चाहे प्रवासी उनका नाम देश नहीं कहा जा सकता हां देश का एक विशेष अंश भले ही बने रहें पर साधारण समुदाय के लोग जिन का बल विद्या धन मान आदि सर्व साधारण से अधिक नहीं होता पर संख्या तीन चौथाई से भी कुछ अधिक ही होती है इस से वही देश के अस्ति मांस कह-लाते हैं वरंच उन्हीं का नाम देश है और उन्हीं की दशा देश की दशा कह-लाती है इस रीति से आंखें पसार के देखिए तो प्रत्यक्ष हो जायगा कि हि-न्दुस्तान हिन्दुओं ही के बनने बिगड़ने से बन बिगड़ सकता है जिन दिनों हिन्दुओं के सौभाग्य का सूर्य पूर्णरूप से प्रकाशमान था उन दिनों समस्त विदेशी हिन्दुस्तान का यश गाते थे प्रतिष्ठा करते थे और हिन्दुस्तान के लिए ललचाते थे तथा हिन्दुस्तान के कोप से डरते रहते थे जब हिन्दुओं के कुदिन आए तब हिन्दुस्तान दूसरों के स्वेच्छाचार का आधार बन गया बड़े २ शाहं-शाहों के होते हुए भी भारत की दशा को कोई इतिहासवेत्ता अच्छी न कह सकता था यों ही आज कल जबकि न महाराज पृथ्वीराज के पुरखों के समय की नाईं हिन्दुओं को सब सुख सुविधा प्राप्त है न अलाउद्दीन औरंगजेब आदि के समय की भांति राह चलना अथवा चार मित्रों के साथ बैठना कठिन है

वरंच महारानी विकटोरिया के प्रबल प्रताप से दुर्दशा का रोगनिःशेष प्राय होगया है और धीरे धीरे बल बढ़ता जाता है तथा स्वच्छंद रूप से सब को अपनी दशा सुधारने का अधिकार है तब हिन्दुओं के साथ २ हिन्द के दिन फिरने की आशा करना भी अमूलक नहीं जान पड़ता पर यतः अपना भला बुरा अनेकांश में अपने ही करने से होता है अस्मात् सब जातियों के साथ साथ हिन्दुओं को भी उचित है कि इस सुराज्य के अवसर को हाथ से न जाने दें एवं सब बातों में राजा ही का मुखावलोकन न करते रहें अपने सुधार के निमित कुछ आप भी हाथ पांव हिलावें और सैकड़ों प्रमाण सहस्रों युक्तियों से यह भी सिद्ध हो चुका है कि इस जाती का शारीरिक आत्मिक सामाजिक राज नैतिक व्यवहारिक लौकिक पारलौकिक सब सुधार सदा सर्वथा धर्म ही के मूल पर स्थित है इस से धर्म से सम्बन्ध रखनेवाली सभाओं का समय २ पर होते रहना इस के कल्याण साधन का एक बड़ा भारी अंग है और इसी विचार से बहुत से बुद्धिमानों ने बहुत स्थानों पर आर्य समाज ब्राह्मसमाज धर्मसभादि कईएक सभा संस्थापित भी कीं पर एक तो जो काम पहिले पहिल किया जाता है वह पूरी रीति से काम पूरा पड़ता है दूसरे जिस में एक बड़ा जनसमूह योग नहीं देता उस के उन्नति में बाधा अवश्य पड़ती है इन दो कारणों से यह समाजें जैसा चाहिए वैसी कृतकार्य न हो सकीं इन का उद्देश्य यद्यपि अनेकांश में उत्तम है पर धर्म प्रचार के साथही मत मतांतर का खंडनमंडन प्रतिमा पुराणादि का हठ पूर्वक निंदा स्तुति और जाति भेद भक्ष्याभक्ष्य विधवा विवाहादि विषयक आग्रहनिग्रह के कारण देश की साधारण जनता इन पर यथोचित श्रद्धा न कर सकी यद्यपि इधर दो चार वर्ष से इन में के कुछ लोग इस बात पर ध्यान देने लगे हैं कि लोगों की रुचि और देशकाल पात्र के अनुसार कार्यवाही किए बिना काम न चलेगा पर इस का पूरा बर्ताव होने में अभी विलम्ब है इस से यह कहना अयुक्त न होगा कि इन के उद्देश्य की सफलता में भी विलंब है इस कारण ऐसी महा सभा की अवश्य मेव बड़ी आवश्यकता थी जो किसी नियत समय पर अनेक नगरों के अनेकमतानुयायी लोगों को एकत्रित किया करे और उन सब की सम्मति के अनुसार सर्व धर्म ग्रंथानुमोदित सर्व समुदाय सम्मत एवं सर्वलोक रुचिकारक विचार तथा समय २ पर स्थान २ में अपने सहचर

वर्ग के द्वारा उन के प्रचार का प्रबंध करती रहे धर्म के भावुक और देश के भक्तों को आनंद मनाना चाहिए कि इसी अभावकी पूर्ति के लिए श्री भारत धर्म महामंडल ने आविर्भाव किया है और पूर्वोक्त अभावों की दशा के द्वारा अनुभव लाभ करने से तथा उद्देश्य की उत्तमता कार्याध्यक्षों की कुशलता एवंकार्य वाहकों की सुष्टता से जन्म दिन से आज तक उत्तरोत्तर साफल्य प्राप्त किया है पहिला महाधिवेशन हरिद्वार जी पर हुवा था उस समय देश के महान समुदाय को इस का आंतरिक मनोरथ भली भांति विदित न था इस से बहुत लोगों ने सहानुभूति न प्रकाश कीथी पर तो भी थोरे से चुने चुने दूर-दर्शी विद्वान और प्रतिष्ठित हिन्दुओंने कटिबद्ध होके उत्साह पूर्वक इसका मूल संस्थापन किया था जिस की वृद्धि श्री वृन्दावनवाले दूसरे ही समागम में बड़ी सफलता के साथ देखने में आई और विचारशीलों को विदित हो गया कि बहुत कोलाहल न मचने पर भी इस का कार्य उचित उन्नति के साथ होता रहा है और होता रहेगा आज असाधारण लोगों की एक संतोष दायिनी संख्या को इस के साथममत्व भी है कई एक धर्म सभाएं इसे अपना अभि भावुक भी समझती हैं सुदर्शनचक्र नामक एक उत्तम पत्र भी इसी के उद्योग से प्रकाशित होता है तथा कई स्थानों पर इसी के कार्य सम्पादकों के प्रयत्न से बाल्यविवाहादि कई एक कुरीतियों के निवारण की समयोपयोगी प्रथा का भी सूत्रपात हो गया है क्या यह कृतकार्यता के लक्षण सहृदय मंडली के लिए तुष्टिदायक नहीं है ? और यह आशा नहीं उपजाते कि योंही काम होता गया तो बहुत कुछ हो रहेगा ? अब तीसरा समारोह इसी मास में इंद्रप्रस्थ के मध्यनिर्धारित हुवा है परमेश्वर करे इस में और भी अधिक संतोषदायक साफल्य का दर्शन हो इधर कांग्रेस के महाधिवेशन का समय भी निकट आ रहा है और उस की समाप्ति वाले दिन सोश्यल्य कांफरेंस की भी अवश्यही बैठक होगी उस में यदि इस की ओर से भी कुछ सज्जनों का पदार्पण होतो आर्यजाति के लिए एक बड़ी सुविधा की सम्भावना है क्यों कि जिस प्रकार राजनैतिक सुधार के लिए नेशनेल कांग्रेस का सा उद्योग कर्तव्य है वैसे ही सामाजिक संशोधन के निमित्त कांफरेंस की भी बड़ी ही आवश्यकता है बरंच इस के लिए उस का और उस के हेतु इस का बड़ा भारी प्रयोजन है क्योंकि राजनैतिक भार अति भारी न हो तो लोग सामा

जिस सुधार में बड़ा भारी सहारा पाते हैं और जिन की सामाजिक दशा अच्छी होती है उनका राज परिकर की दृष्टि में आदर रहता है इस से उन का शासन निरी मन मानी रीति से नहीं किया जाता और समाज उन्हीं की सुधारे सुधर सकती है जो समाज में आद्रित हों उस की रीति नीति भली भांति जानते मानते हों तथा जनता की रुचि के अनुसार उसे उपयुक्त मार्ग पर ला सकते हों ऐसे लोग हमारे मुसलमान भाइयों को विद्वान धार्मिक मौलवियों में तथा हमें इस मंडल के सहवर्तियों ही में मिलें गे क्या भा० ध० म० मं० के महा मंत्री हमारे श्रद्धा पद पंडित वर श्री दीनदयालु महोदय हमारे विचार पर ध्यान दे के आगामी अधिवेशन में इस की चर्चा चलावेंगे ?

तृप्यन्ताम्

(छपे से आगे)

उदय उछाह मरीचि करहिं नहिं उर पुरतममय रहत सुदाम । मरी चिरैया सरिस परे हम धरे चोंच पद पच्छ निकाम ॥ हमरी चित्त वृत्ति कहां ऐसी होहिं जु तव रुचि कर परिणाम । है हो कहा हमारे साधन हे मरीचि मुनि तृप्यंताम ॥ ३० ॥ तव पतिनी अनुसूया मैया पतिव्रत मूरति अति मति धाम । याते कबहु कहत सुरपुर सुख तुम कहं तुच्छ जंचें अनुमाम ॥ हम मूरख कामिनि निधरनी बस घर बसि भोगहिं नरक सुदाम । केहि विरते पर कहैं अत्रि मुनि ! हम सों कूजै तृप्यन्ताम ॥ ३१ ॥ तुम तप तपि २ रहत तेज मय- हम चितापतापित तन छाम । चिंतत चित्त अचिंत जोति तुम हम चितवत हर धन पर बाम । तुम भाखत श्रुति सम्मति परारथ हम स्वारथ सों अनेक काम । सब प्रकार प्रतिकूल ! कहु किमि ? अहो अंगिरा तृप्यन्ताम ॥ ३२ ॥ उन साधन सों देहिं कहा जल जे सेवहिं पर चरन सुदाम । रहत विश्वपद वान दलित नित तेहि शिर सों किमि करें प्रणाम । जौन जोह निशिदिन सूरति है बकत खुशामद कपट कलाम । यासों कैसे कहैं कहा हम अहे पुलह मुनि तृप्यन्ताम ॥ ३३ ॥ रावन रहे तिहारे नाती शिव पद रत धन बल बुधि धाम । उन के गुन एको नहिं हम में हां औगुन हैं भरे तमाम । द्विज कहाय लाजहि विहाय नित करहिं राक्षसन के से काम । जो यहि नाते रिझि सको तो पुलस्ति बाबा तृप्यन्ताम ॥ ३४ ॥ पढ़ैं पढ़ावैं कोई भाषा जामें चल

पेट को काम । करैं यजन याजन उन ही को जिनतें मिलै नाम औ दाम । देहिं धर्म धन लाज सबै विधि लेहिं देश को शाप सुदाम । अहो कौन क्रत देखि हमारो ह्वै हौ क्रतु मुनि तृप्यन्ताम ॥ ३५ ॥ तुम सागर में करो तपस्या बहु बर्षन सुमिरे सिय राम । हम आंसुन में डूबि डुबकति अस अंतस ताप तपै बसुजाम । तब मुख अगिन काढ़ो हमरेहु मुख पर उर जारन काढ़ैं कलाम । ऐसेहू सब धर्मिन सों ह्वै हौ कस न प्रचेता तृप्यन्ताम ॥ ३६ ॥ भए तब कुल महँ परशुराम प्रभु अकिले जीत्यो जगत तमाम । हम निज पुरुषन हूं के घर कहं करैं हारि बैठन के काम । उन सब भूमि छिजन दीन्ही हम ताकत हैं तिन के धन धाम । इन लच्छन न छोड़ंगे हम सन कैसे भृगु मुनि तृप्यन्ताम ॥ ३७ ॥ दशरथ सरिस चक्कवै तुम कहं देखि जोरि कर करैं प्रणाम । कहि गुरुदेव चरन तब पूजहिं त्रिभुवन पति लच्छीपति राम । तहं हम तुच्छ कहा हैं जे रूखो रोटीहित बनैं गुलाम । सदा विडम्बन अहैं कहैं को श्रीवशिष्ट ऋषि तृप्यन्ताम ॥ ३८ ॥ तुम त्रिभुवन कर कौतुक देखत तबहु न बिसरत हरि गुण ग्राम । हम घर परे मरैं नित तौहूं नहिं जानहिं कहं को हैं राम । हां तव नाम कलह प्रिय है अरु हम गृह कलह निरत बसुजाम । एक याहि गुन कहौ कहैं हो सुरऋषि नारद तृप्यन्ताम ॥ ३९ ॥ पांच बरस के रहत सदा तुम जानत लोभ न मोह न काम । हम मिसु नाहिं माहिं चिंता बस बनहिं वृद्ध घट वर्ग गुलाम । तुम जनमत प्रज्ञान गह्यो हम मरतहु नहिं सुमिरहिं हरिनाम । फिर केहि साहस कौने मुख सों कहैं सनक प्रभु तृप्यन्ताम ॥ ४० ॥ तुम कहं त्यागी कौन अवस्था हम कहं प्रिय वाही के काम । पेट भरहिं निर लज्ज रहहिं नित सपनेहु नहिं सोचहिं परिणाम । जो कोउ सिखयो चहै सु-मारग तासों बच्यो चहैं बसुजाम । यह अवगुन कारिकई कबहु कर छोड़ सनं-दन तृप्यन्ताम ॥ ४१ ॥ तुम हित कतहुं रोक नाहिं हम धक्का खाहिं जाहिं जेहि ठाम । गरुड़ासन हू तुम्हैं समझावें हम कहं प्यारेहु गनैं गुलाम ॥ तुम सिसु रूपहु ब्रह्मरूप हम बूढ़ेहु निंदित निपट निकाम । तदपि ढिठाई करहु सनातन ! तुम सों कहियत तृप्यन्ताम ॥ ४२ ॥ देवहूती कहं सांख्ययोग तुम उपदेश्यो सद्गति को धाम । हम मातहि इंग्लिश पढ़ि सिखवैं वेद शास्त्र मिथ्या हैं राम । केवल जाति वर्ग के डर सों अब लजावैं ले लै तव नाम । सन को भावन बूझि सको तौ कपिल देव जू तृप्यन्ताम ॥ ४३ ॥ फिर तें पग लागि

कारे कपरे शुद्ध आसुरी भेष तमाम । भाषा बोलैं मधुर आसुरी किट पिट गिट पिट बोयू डाम । भोजन अधिक आसुरी जिन में सूझि न परै हलाल हराम । ऐसे असुरव्रती हिन्दुन सों होइ न आसुरि ट्यप्लाम ॥ ४४ ॥ मृत भाषा समुझें संस्कृत कहं वेदनि गनैं असभ्य कलाम । फिर का जानैं किमि मानैं इम विधि निषेध काम कृत सित काम । निजता निज भाषा निज धर्म हि देहिं तिलोदक आठो जाम ; तुमहू पूरब पुरुष बोद्धु सुनि वाहो नाती ट्यप्लाम ॥ ४५ ॥ पांच पीर की पांच चुटैया हमरे सिर पर लसैं ललाम । तिन कहं गहे रहैं निशिबासर लोभ मोह मद मत्सर काम । अद्भुत पंच शिखा हैं हम हूं कारन हेत पुरिखन बदनाम । अपनो स्वांग समुझि कै हम कहं पंचशिखा सुनि ट्यप्लाम ॥ ४६॥

अब कुछ काल के लिए अपरव्यं लोषत् जल्दी २ कक उबीचनात् उच्छ् गमिष्यति ।

प्राप्तिस्वीकार ।

कल्कलाचरण—फर्रुखनगर जिला गुड़गांव निवासी श्रीमत्पण्डित वर वैद्यराज मुरलीधर शर्मा आरोग्य सुधाकर सम्पादक द्वारा लिखित मूल्य ।/) मात्र पुस्तक अत्युत्तम विशेषत: उच्च जाति के हिन्दुओं को उत्तम शिक्षा देने के लिए अत्युपयोगी तिसपर भी गौड़ और अग्रवालों के लिए एक मात्र उपकारिणी भाषा अति सरल और प्रबन्ध भी हृदय ग्राही है पर एक बहुतही छोटी सी कसर यह है कि छापे की अशुद्धियां कहीं २ रह गई हैं सो भी पढ़ने में श्रम नहीं उपजातीं फिर क्यों न कहिए कि अपने ढंग की एकही है ।

सिद्धिसाधन—मूल्य चार आना मात्र मिलने का पता काशी की यह श्री लाडिली चंद्र जी के संस्कृत ब्रह्मस्तोत्र का अनुवाद है संस्कृत भी अत्युत्तम भाषा भी सरल और सरस भावज्ञों के लिए यह भी एक

अमृत की शीशी है कागज और छपाई भी अच्छी है इस मे हमारी समझ में प्रत्येक आस्तिक की जेब में एक २ पुस्तक होनी चाहिए ।

सतोपदेश—स्वर्गवासी पण्डित श्रद्धारामकृत मूल्य दो आना मिलने का पता पंडिता महताब कुंअरि हरिज्ञान मंदिर फुल्लौर जिला जलंधर इस में शास्त्रोक्त उपदेशों से पूर्ण १०० दोहे हैं इस से सर्वसाधारण के लिए अच्छी पुस्तिका है पर भाषा में कवियों का सा लालित्य नहीं है कहीं २ संस्कृत-शब्दों की शुद्धता के अनुरोध से छंद का रूप भी टकसाल बाहर हो गया है ।

भाग्यवती—यह भी उन्हीं की बनाई है उसी पते से १।) रु० में आती है आर्य ललनाओं के लिए अत्युत्तम है हमारी समझ में जिन्हें स्त्रियों के पढ़ाने का सुभीता नहीं है उन्हें भी चाहिए कि इसे सुनाया करें तो वे बहुत कुछ उपकार लाभ करेंगी और सुनेंगी भी जी से क्योंकि कहानी मनोहारिणी है और गृहस्थोपयोगी शिक्षाओं से पूर्ण है तथा भाषा भी अच्छी है ।

ध्रुवाष्टक ।

(छपे से आगे)

कोउ नहीं कबहूं बस काहु समै सब मैं निज भाव जनावै । राखै रहै हुकुमै सब पै कहुंमित्र बनाय न तेज गंवावै ॥ साम औ दाम औ दंड औ भेद की रोति करैजु सबै मन भावै । भाखत हैं बिशुनाथ ध्रुवै कला षोडशो भूपति राज बढ़ावै ॥७॥

जो हरि आन्हिक में मन लाय करै नृप आन्हिक स्मृति गावै । मानै यहै प्रभु को सब है प्रभु रूप सबै निज किंकर भावै ॥ देह ते आपुहि भिन्न गनै करि आसन भक्ति प्रनाम चलावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै दोउ लोक में भूपति सो सुख पावै ॥८॥

श्रीरामचरितमानस

अर्थात्

श्री तुलसी कृत रामायण ।

—*—

यह ग्रन्थ बड़े परिश्रम और यत्न से श्रीतुलसीदासजी की लिखीहुई खास प्रति से शोध कर ज्यों का त्यों छापा गया है। इस भय से कि कदाचित् कोई इसे असंभव समझे, गोसांई जी के हाथ की लिखी हुई प्रति के १० पृष्ठ का फोटोग्राफ़ भी पुस्तक में लगादिया है, और उस की दृढ़ पुष्टि के लिये गोसांई जी के हाथ के लिखे हुए पञ्चनामा का फोटोग्राफ़ भी उसी के संग है, जिस में लोगों को यह भी न कहना पड़े कि गोसांई जी के हाथ के लिखे हुए का प्रमाण ही क्या है ? और लोगों की भांति मैं नहीं चाहता कि "इश्तिहार में नीचे से ऊपर तक प्रशंसा ही भर दूं क्योंकि जो इस के गुण ग्राहक हैं उन के लिये इतना ही बहुत है। इस ग्रन्थ में तुलसीदास जी का जीवनचरित्र भी दिया गया है और अक्षर बड़ा वो काग़ज़ अच्छा है। यह ग्रन्थ१८नवम्बर १८८८को गोरखपुर की प्रदर्शिनी में भी रक्खा गया था और लोगों ने आश्चर्य दृष्टि से देखा। तीन सौ वर्ष पर यह अलभ्य पादार्थ हाथ लगा है, जिन को रामरस के अपूर्व स्वाद लेना हो वे न चूकें और नीचे लिखे हुए पते से मंगा लेवें। नहीं तो अवसर निकल जाने पर पछताना होगा।

मूल्य फोटोग्राफ़ सहित ६) मूल्य बिना फोटो को ४) डाक महसूल १।)

रसिक बिनोद ।

हम किसी से क्यों कहैं? जो रसिक होगा, जो बिनोद चाहैगा, जो राधा कृष्ण का प्रेमी होगा औ जो रसिले कवित्तों का प्यासा होगा; वह आपही इस ग्रन्थ के लिये हाथ उठा कर दौड़ेगा। यह ग्रन्थ मझौली के महाराजाधिराज कुमार श्री लाल साहब बहादुर का बनाया है केवल ।) भेज देने से यहां मिलेगा।

साहब प्रसाद सिंह
खड्गविलास प्रेस बांकीपुर।

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VL. 7 { CAWNPORE, 15 OCTOBER. 5 H.C. } NO. 3,
खण्ड ७ { कानपुर १५ अकतूबर हरिश्चन्द्र सं॰ ५ } संख्या ३

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा ।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ।

३—विज्ञापन की छपाई) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा ।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा ।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मेनेजर ब्राह्मण
कानपूर ।

ममता ।

यह ऐसा उत्तम गुण है कि सारी भलाइयों का मूल कहना चाहिए जब तक जिस देश पर परमात्मा की जितनी दया दृष्टि रहती है तब तक वहां के लोगों के जी में उतनीही अधिक इस गुण की स्थिति रहती है जहां के लोगों को देखिए कि अपने यहां के मनुष्यों पशुओं पक्षियों तथा पदार्थों का सच्चे जी से ममत्व रखते हैं और उन को प्रतिष्ठा यावत् जगत् से अधिक करते हैं वहां समझ लेना चाहिए कि 'कोटि विघ्न संकट विकट, कोटि दुष्ट इक साथ । तुलसी बल नहिं करि सकैं, जो सहाय रघुनाथ' का जीवित उदाहरण विद्यमान है सदा सब कहीं के सभी लोग सब गुण पूर्ण कभी नहीं होते पर जहां यह गुण दृढ़ रूप से स्थीयमान होता है वहां 'सब सुख सम्पति बिनहिं बुलाए, धर्मशील पहं जाहिं सुभाए' कारण यह है कि सब को सब से सहारा मिलता रहता है सब के जी में यह बल रहता है कि हम अकेले नहीं हैं एक बड़ा भारी समूह सदा सब दशा में हमारे साथ है इस से सभी को सब प्रकार का सुभीता प्राप्त रहता है अपने यहां के पुराने ग्रन्थों को देखिए तो गंगा सिंधु सरस्वती यमुना इत्यादि नदियों का नाम ब्रह्मद्रव स्वर्गदायिनी अमृतमयी इत्यादि अयोध्या मथुरा काशी प्रयागादि नगरों के नाम विष्णु पुरी परमात्मा का विहारस्थल मोक्षदातीर्थ रामतुलसी पीपल आदि वृक्षों के नाम विष्णुप्रिया वासुदेव इत्यादि लिखे हैं इस का अभिप्राय नए मतवालों के कथनानुसार हमारे पूर्वजों की हरि विमुखता अथवा लकीर के फकीरों के विचारानुसार धर्म की अनेकता नहीं है वेदों में ईश्वर और धर्म की अद्वितीयता सैकड़ों स्थल पर लिखी है पुराणों में पंचदेव की अभिन्नता तथा सब मतों की एकता सहस्रों ठौर वर्णित है और सप्तपुरी पंचवट आदि की व्याख्या करनेवाले वेदादि का अर्थ न जानते थे इसका कोई प्रमाण नहीं है पर बात सारी यह थी कि देश की ममता उन के चित्त में भरी हुई थी उस की उमंग में उन्हें अपने यहां की नदियों का जल अमृत सा लगता था अपने नगर बैकुंठ से उत्तम देख पड़ते थे 'वृन्दाबन बैकुंठ दोउ, तौ लै रमानिवास । गरुवो धरती पर रह्यो, हल्को गयो अकास' अपने वृक्ष देवता जान पड़ते थे उन का सींचना धर्म का अंग बोध होता था उन्हें अनेक पहिनाना चंदन

पुष्पादि से सुशोभित करना आंखों को सुख देता था वृथा कोई एक पत्तो भी तोड़ लेता था वह पापी समझा पड़ता था कहां तक कहिए ममता का उन दिनों इतना संचार था कि स्नान करने के ऊपर अपने प्यारे नगरों की मट्टी तक लोग शिर पर मलते थे छाती से लगाते थे इसी के प्रभाव से चारो ओर सुख सौभाग्य की इतनी भरमार थी कि लोग राज्य छोड़ छोड़ वन पर्वतों में जा बैठते थे त्रेता में भगवान रामचन्द्र को अयोध्या से सैकड़ों कोस दूर वन में अच्छी भली रावण ऐसे शत्रु को जीतने योग्य सेना प्राप्त हो गई थी भला बताइए तो सुग्रीव उन के नातेदार थे? वा दशरथ को का दिया खाते थे? नहीं! वनवासी (जिन्हें कवियों ने बंदर की उपाधि दी है) लोगों तक को यह ज्ञान था कि अयोध्या अपने राजा की राजधानी है उस के आगे लंका वालों का हमारा क्या सम्बन्ध है! द्वापर में भीष्म जी को पिता कह के पुकारने वाले का जन्म धारण असम्भव था तो सारे देश ने उन्हें पितामह अर्थात् पिता का भी पिता निश्चित कर लिया अभी कलियुग में भी कई राज्यों में यह रीति पड़ गई थी (जिसका बहुत बिगड़ा हुआ रूप अब भी कहीं २ बना है) कि राजा के यहां व्याह है तो प्रजा मात्र को मुहूर्त पूछने की आवश्यकता नहीं और राजा मर गया तो राज्य भर की स्त्रियों का एक २ हाथ चूड़ियों से खाली! तभी सिकन्दर ऐसे दिग्विजयी राजा मगधेश्वर का सामना करते हुए कवियाते थे तभी नौशेरवां सरीखे महाराज कन्या दान करते थे पर अब वह गुण हम में नहीं रहा अब हमें अपने भाइयों का सुख दुःख देख के सच्चा सुख दुःख नहीं अनुभव होता वरंच उस के स्थान पर कोई न कोई मिष ढूंढ़ के हम उन से अलग रहना चाहते थे स्वार्थ के अनुरोध से उन की प्रतिष्ठा धन धरती आदि की जड़ काटने में पाप नहीं समझते आज हम अपनी गंगा भवानी तुलसी पीपल प्रतिमा पुराणादि को वेद विरुद्ध वरंच वेद को भी पुराने असभ्य किसानों के गीत समझते हैं आज हम मुरशिदाबाद की गर्द (रेशमी कपड़ा) और बनारस की कमखाब पहिनने में शरमाते ही नहीं वरंच अपव्यय समझते हैं रोगग्रस्त होने पर भी चौगुने दाम दे के मशक का पानी पीते हैं पर चूर्ण पाक अवलेह सेवन करें तो शान के बट्टे है कहां तक कहिए अपनी बोली तक बोलना व्यर्थ समझते हैं बस इसी से

नौकरी तक में बाधा है दुःख सुनने में भी खर्च है डर है सच्चाई का ह्रास है वरंच कभी २ पूरा उद्योग करने पर भी परिणाम में निराशा है यह क्यों ? इसी से कि हमें अपनी ही ममता नहीं है फिर दूसरों को हमारी ममता क्यों हो जब तक हमें हम और हमारा का सच्चा ज्ञान न होगा तब तक हम यों ही वरंच इस से भी गए बीते बने रहेंगे और लाख बातें बनावैं करोड़ दौड़ धूप करें पर होगा कभी कुछ नहीं अतः सारे झगड़े छोड़िए और यह प्रण कर लीजिए कि कोटि कष्ट उठावैंगे घर फूंक तमाशा देखेंगे पर यह हठ न छोड़ेंगे कि अपना अपना ही है अपनी मट्टी भी दूसरों के सोने से मूल्य वान है बस यही ममता का मूल मंत्र हैं इसी को सिद्ध कीजिए और दूसरों को उपदेश दीजिए तो ईश्वर राजा प्रजा सुख सम्पति सौभाग्य सुयश सुदशा सब की ममता के पात्र बन जाइएगा नहीं तो यहां क्या है थोड़ा सा कागज़ खराब हो गया सही पर तुम्हारा सभी कुछ धीरे २ ममता के बिना रमता योगी हो जायगा।

हमारी आवश्यकता।

बुद्धिमानों का सिद्धान्त है कि प्रत्येक जाति अपनी भाषा भेष भोजन और धर्म से पहिचानी जाती है इस न्याय के अनुसार मनुष्य मात्र को इस चार पदार्थों के संरक्षण की आवश्यकता है इन के लिए दूसरों का मुंह ताकना दूसरों से आशा रखना अथवा भय संकोच करना अपने जातीयत्व को सत्यानाश करना है और ऐसा कोई भी देश धरती की पीठ पर नहीं है जहां के प्रत्येक समुदाय वाले इन चारों बातों को अपने ही रंग ढंग के साथ न रखते हों यूरोप एमेरिकादि को तो कहना ही क्या है वहां तो सब प्रकार परमेश्वर की दया है अपने यहां देखिए बंगाली पंजाबी मद्रासी गुजराती मारवाड़ी इत्यादि सभी अपनी अपनी भाषा भेष भोजनादि का पूरा ममत्व रखते हैं चाहे जहां जायं चाहे जिस दशा में हों अपनापन नहीं छोड़ते पर खेद है हमारे पश्चिमोत्तर देश वासी हिन्दू दास पर जिन के यहां किसी बात का ठीक ही नहीं है जिस विषय में देखो उसी में ऐसे सोमको नाक हो रहे हैं कि फिरते देखो नहीं इन्हीं लक्षणों के कारण इन के लिए न घर में सुभीता है न बाहर सन्मान है न किसी को इन पर मनमानी अन्धाधुंध करते कुछ भी संकोच होता है न बड़े २ शुभचिंतकों से किए कुछ होता है क्योंकि जिस जाति में

आत्मत्व हो नहीं है उसे सृष्टि अथवा सृष्टिकर्ता से आशा ही क्या विचार के देखिए तो मनुष्य तो मनुष्य ही है पशु पक्षी तक अपने जातीयत्व के अंगों को नहीं छोड़ते तोता मैना को आप लाख अपनी बोली सिखाइए पर आपस में वा अपने सुख दुःखादि को प्रगट करने में अपनी ही बोली बोलेंगे कौए पर करोड़ रंग चढ़ाइए पर कुछ ही काल में वह अपनी कालिमा को फिर धारण करलेगा सिंह के सन्मुख सौ प्रकार के शाक अथवा हरिण के सामने सहस्र भांति के मांस रख दीजिए चाहे जै दिन का भूखा हो उस की ओर आंख उठा के न देखेगा किन्तु हम निजत्व से इतने वंचित हैं कि जिन्हें अपनी किसी बात का कुछ ध्यान ही नहीं चाहे कोई कुछ कर उठावे कुछ उत्साह ही नहीं इसी हेतु से जिन दिनों प्रत्येक जाति अपनी उन्नति के लिए धावमान हो रही है उस अवसर में भी हमारा धन बल गौरव क्षण २ क्षीण हो रहा है और परमेश्वर न करे सौ वर्ष भी यही दशा रही तो कोई आश्चर्य नहीं है कि हिन्दू हिन्दुस्तानी वा हिन्दी इत्यादि शब्द मात्र रहजायंगे इस से आज ही से चेतना चाहिए और समझ रखना चाहिए कि अपना भला बुरा अपने हाथ है दूसरों को क्या पड़ी है कि हमारे लाभ के लिए अपने समय सुविधा अथवा स्वच्छन्द व्यवहारों को हानि करेंगे यद्यपि हमारी वर्तमान आवश्यकताओं की पूर्ति प्रत्यक्ष वा प्रच्छन्न रूप से किसी प्रकार वास्तविक कष्ट व हानि न करेगी वरंच कुछ ही दिनों में सुख और सहायता मिलना आरंभ हो चलेगा और परिणाम में तो देश और जाति को सभी प्रकार की सुविधा का द्वार खुल जायगा पर यदि पहिले पहिल कुछ अड़चलें देख पड़ें तो यह समझ के झेल डालनी चाहिए कि सुख का उपाय करने में दुख होता ही है जिस ने यह न अंगीकार किया वह उसे क्या पावैगा यह विचार चित्त में दृढ़ स्थायी किए बिना और शीघ्र आलस्य छोड़ के कटि कसे बिना भविष्यत के लिए घोर विपद का सामना है इस से सब काम छोड़ के पहिले वक्ष्यमाण आवश्यकताओं के पूर्ण करने में तन मन धन लगाना परमावश्यक है।

सब से पहिले लड़कों के पढ़ाने का उचित प्रबंध करणीय है क्योंकि सब से आदिम अवस्था इन्हीं की है और इसी अवस्था की शिक्षा से उन की जन्मभर का सहारा और उन के पूर्वजों

और अनुजों (पीछे उत्पन्न होने वालों अर्थात् छोटे भाइयों तथा पुत्रादिकों) के सुख सौभाग्य सुयशादि का द्वारा प्राप्त होता है वह यदि अपने देश और दशा के अनुकूल न हुई तो हमें भारी उन्नति की कुछ भी आशा नहीं है और इस में कोई संदेह नहीं है कि जबतक अपनी भाषा में पूर्ण रूप से पठन पाठन नहीं होता तब तक शिक्षा सदा अधूरी ही रहती है और पूर्ण फलदायिनी नहीं होती इस से हमें हिन्दी और संस्कृत अवश्य मेव पढ़नी पढ़ानी चाहिए बरंच उच्च शिक्षा इन्हीं में प्राप्त करनी चाहिए अंगरेजी फारसी अरबी तुरकी यदि काम निकालने मात्र को सीख लिया जाय तो अच्छा है नहीं तो हमारी भाषा से भी हमारा कोई काम अटका न रहेगा जब देश में एक बड़ा भारी समुदाय ऐसा हो जायगा जो निज भाषा में पूर्ण दक्ष और अपने निर्वाह के लिए सब प्रकार के कष्ट सह के भी अपने ही हाथ पांव का सहारा लेने का हठी तथा अन्य भाषाओं के लिए आत्मत्व को न छोड़ने में पूर्ण उत्साही हो तब कोई भी संदेह नहीं है कि गवर्नमेंट हमारी सुविधा का भी प्रबन्ध अवश्य करैगी आज इलाहाबाद यूनीवर्सिटी ने हिन्दी को उठा के यह सिद्ध कर दिया है कि उस में हिन्दू जगत की ममता रखने वाला कोई नहीं है अपने माथे से कलंक का टीका मिटाने के लिए संस्कृत को बना रहने दिया है यह भी उस की पालिसी मात्र है हमारी हितैषिता नहीं है क्योंकि हिन्दी के पूरे सहारे बिना संस्कृत कोढ़ी के चने है और यह आशा भी अनेकांश में दुराशामात्र है कि सर्कार हमारी एत द्विषयक प्रार्थना सुनैगी अस्मात् हमें अपने लोक परलोक के निर्वाहार्थ अपनी भाषा स्थिर रखने के लिए केवल अपने ऊपर भरोसा रखना चाहिए आज हम लाख गई बीती दशा में हैं पर हमारी भाषा किसी अन्य भाषा के किसी अंग के किसी अंश में कुछ भी कम नहीं है और यदि इसे संस्कृत का सहारा मिल जाय तो मानो सोने में सुगन्ध हो जाय क्योंकि संस्कृत के यद्यपि लाखों ग्रंथ आज लुप्त प्राय हो गए हैं तथापि जो मिलते हैं अथवा दौड़ धूप से मिल सकते हैं वह ऐसे नहीं है कि किसी लौकिक अथवा पारलौकिक विद्या से रहित हों बरंच यह कहना अत्युक्ति नहीं है अनेक सहृदयों की साक्षी से सिद्ध है कि जो कुछ संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थकार लिख गए हैं वह अभी तक

दूसरी भाषा के अभिमानियों को स-
झना कैसा पूरी रीति से समझना ही
कठिन है एक बार नहीं सैकड़ों बार
देखने में आया है कि जिस विद्या के
जिस अंग को विदेशी विद्वानों ने वर्षों
परिश्रम करके सहस्रों का धन खोके
हस्तगत किया है और अनेक लोगों
को समझ में उन के आचार्य (ईजाद
करने वाले) समझे गए हैं वही बात
संस्कृत की किसी न किसी पुस्तक में
सहस्रों वर्ष पूर्व की लिखी हुई ऐसी
मिल गई है कि बुद्धिमान चकित रह
गए हैं फिर हम नहीं जानते ऐसी
सर्वांग सुंदर भाषा के भंडार के रत्न
अपनी मातृ भाषा के कोष में क्यों
नहीं भर लिए जाते रहीं वे बातें
जिन पर इस समय तक विदेशी ही
विद्वानों का दावा है वे हमारे देश
के बी० ए० एम० ए० डाक्टर बारिस्ट-
रादि के द्वारा हमारी भाषा में सह
जतया भर दी जा सकती हैं और
सर्व साधारण के लिए वर्षों के परि-
श्रम का फल महीनों में दे सकती है
जो लोग यह समझे बैठे हैं कि अंग-
रेज़ी पढ़े बिना भोजनाच्छादन कहां
से प्राप्त होगा उन को यह भी आंखें
खोल के देखना चाहिए कि एक तो
संसार का नियम है कि कोई भूखा
नहीं रहने पाता बरंच बीसियों बेर
देखा गया है कि अजीर्ण रोग से चाहे
कोई मर भी जाय पर अन्नाभाव से
नहीं मरता लोगों को ज्वरादि के
कारण पंद्रह२ बीस बीस लंघन हुए हैं
जल के सिवा अन्न का दाना नहीं
खोंटा पर प्राण देवता ज्यों के त्यों
बने हैं रहा सहज में सुख पूर्वक नि-
र्वाह वह जिस बात में परिश्रम की
जिएगा उसी के द्वारा प्राप्य है जितना
परिश्रम आप अंगरेज़ी में करते हैं
उतना ही संस्कृत में कर देखिए तो
प्रत्यक्ष हो जायगा कि विद्वान सभी
सुखित रहते हैं काले गोरे रंग के
भेद भाव की दया से हम बीसियों
एम० ए० पास किए हुए हिन्दू दिख-
लादेंगे जिन्हें सौ डेढ़ सौ (बहुत दो
सौ) से अधिक वेतन की नौकरी के
दर्शन नहीं होते सो भी कब ? अब
विदेशी भाषा विदेशी भेष विदेशी
विचार (खयालात) विदेशी व्यव-
हार (बरंच आहार) विदेशियों की
जै जै कार इत्यादि के मारे अपनी
ओर देखने का अवसर नहीं मिलता !
यदि उतना ही परिश्रम कोई किसी
शास्त्र में करे तो क्यों किसी रजवाड़े
अथवा कालेज में सौ दो सौ की नौ-
करी न पा जायगा यदि सेवा वृत्ति न
भी स्वीकृत हो तो विद्या के प्रभाव
से प्रत्येक उद्योग में उतने के लगभग

प्राप्ति हो सकती है कुछ भी न कीजिए तो तनिक देखिए कि स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वती स्वामी दयानन्द सरस्वती परिव्राजक श्री कृष्णप्रसन्न सेन इत्यादि की प्रतिष्ठा किस विदेशी भाषा के पंडित राज से कम है ? बरंच आप के एम० ए० बी० ए० आदि जिन श्रीमानोंके द्वार पर खड़े रहते हैं वही धनाढ्य इन विद्वानोंकी सेवा में अपना गौरव समझते हैं रहे सिविल एंटरेंस वाले छुट भैए वे जितनी प्राप्ति अंगरेजी फारसी के द्वारा प्राप्त कर लेते हैं उतनी हमारे साधारण पंडित भी सेवा सुश्रूषादि करके अवश्य हस्तगत कर सकते हैं नहीं तो जितनी मुड धुन आप विदेशी भाषा में कर रहे हैं उतनी ही हम अपनी ज्योतिष वैद्यक पुराणादि में करके विना नौकरी आप के लग भग कमा सकते हैं बरंच आप अपने पन से अनेकांश में रहित हो जाइएगा और हम सर्वथा शुद्ध बरंच शुद्धता के शिक्षक कहलावेंगे फिर न जाने क्यों हमारे देश भाई अपनी भाषा से मुंह फेरे बैठे हैं ? हम अन्य भाषाओं के पढ़ने पढ़ाने का विरोध नहीं करते पर इतना अवश्य कहेंगे कि आरंभ हीं से लड़कों को ए० बी० सी० डी० अथवा अलिफ बे रटाना उनका जन्म नशाना है इस दशा में वे अपनी रीति नीति धर्म कर्मादि से वंचित आत्म गौरव एवं अपने लोगों की मान मर्यादा में विरक्त हो के कठिन परिश्रम कर के निर्बल शरीर अथवा संकुचित बुद्धि बन के केवल सेवा कर के पेट पालने के योग्य रह जाते हैं पर इस के विरुद्ध यदि बाल्यावस्था में उन्हें हिन्दी और उसके साथ संस्कृत भली भांति सिखला दी जाय तो उन की निजता दृढ़स्थायिनी हो जाय कुल परम्परा के अनुकूल जीवन यात्रा का उपाय करते हुए लाजन लगी जिस काम को उठावैं उसे बहुतेरों की अपेक्षा उत्तमता से कर सकें और ऐसी दशा में बाबू अथवा मुन्शियों से भी शिक्षा अच्छे रहें यदि अंग्रेजी फारसी का प्रेम फसफसाए तो केवल भाषा ही भाषा में परिश्रम करना पड़े इस से हमारे धनी निर्धनी समर्थ असमर्थ का मुख्य कर्तव्य यही है कि हिन्दी का पढ़ना पढ़ाना शपथ पूर्वक अंगीकार कर ले कोई न कोई हिन्दी का पत्र अवश्य देखा करें हिन्दी में जितने ग्रन्थ बने उन को एक २ कापी अवश्य खरीद लिया करें और यथा संभव संस्कृत अंगरेजी के विद्वानों से उत्तमोत्तम विद्याओं की पुस्तकें हिन्दी में अवश्य

अनुवाद कराया करें ऐसा होने से आज जिन विद्वानों बुद्धिमानों सम्पादकों सुलेखकों और सत्कवियों के अनेकानेक रत्न सदृश विचार अनुत्साह के कारण मन के मनही में रह जाते हैं उन का हृदय प्रोत्साहित होगा और तद्वारा दो ही चार वर्ष में देखिएगा कि हम क्या से क्या हो गए और आगे के लिये हमें तथा हमारे आगे होने वालों के लिए क्या कुछ पास ही चला हमारे यहां विद्यार्थी और विद्वानों का अभाव नहीं है पर उनका प्रचार तथा उन को प्रोत्साह देने वाले केवल इतनेही हैं कि उंगलियों पर गिन लिए जायं उन में भी सच्चे और सामर्थ वाले और भी थोड़े इसी से कुछ भी करते धरते नहीं बनता अकस्मात् सर्वत: प्रथम हमें इस की आवश्यकता है कि हमारे सुलेखक और सुवक्ता गण सर्व साधारण के जी में हिन्दी का प्रेम उपजाना नित नए ग्रन्थों का प्रकाशित करना कराना और जहां तक हो सके उन्हें सस्ते दामों बिकवाना बरंच किसी व्यक्ति वा समूह की सहायता से गली२ घर २ में सेंत बंटवाना पढ़ने योग्य स्त्री पुरुषों को पढ़ाना नहीं तो सुनाना अपना परम धर्म समझें शेष बातों को उस के अंग मात्र । (शेषमग्रे)

तृप्यन्ताम् ।

(आदर के लिए एक बचन के स्थान पर भी बहु वचन का प्रयोग होता है अत: छंद बदलना निष्प्रयोजनीय समझा है)

केहि बिधि वैदिक कर्म होत कब कहां बखानत रिक, यजु, साम । हम सपनेहू में नहिं जानें रहैं पेट के बने गुलाम । तुमहिं लजावत जगत जनम धरि दुहू लोकन में निपट निकाम । कहैं कौन मुख लाय हाय फिर ब्रह्मा बाबा तृप्यन्ताम ॥ १ ॥ तुमहिं रमापति बेद बतावत हम कहं दारिद गनै गुलाम । तुम बैकुंठ बिहारी हो प्रभु हम सब करैं नरक के काम । तुम कहं प्यारो लगै भक्ति, हम कहं स्वारथ प्रिय

आठौ जाम। अहौ विष्णु भगवान, बताओ केहि गुन कहिए
तृप्यन्ताम ॥ २ ॥ रहे रुवाय देत रिपुकुल कहँ जब हम कठि-
न ठानि संग्राम। तब तरपनहूं मोहत हो अरु भारत बीर
विदित हो नाम। अबतौ छुरिहु छुवत डर लागै राज नियम
बस बनि गए बाम (स्त्री)। केहि विधि कहैं निलज ह्वै
हाहा रुद्र देवता तृप्यन्ताम ॥ ३ ॥ सपने की सी कथा भई
जब रह्यो प्रजापति हमरो नाम। अबतौ जौन प्रजापति हैं
सोऊ निरबल निरबस निपट निकाम। हमहैं प्रजापतिन
गति मति सों यामैं नाहिन नेक कलाम। प्यासे हि जाहु
प्रजापति! ह्यां सों कौन कहैगो तृप्यन्ताम ॥ ४ ॥ नए नए मत
वादिन मिलिकै लोप्यो तव सरूप गुन नाम। जग आगे वैरा-
गिन तुम सों करवाए भिक्षुक को काम। कोउन औरंगजेब
आदि ने तोरि दईं प्रतिमा औ धाम। हाय निरे निरलज्ज
देवगण! अबहुं भए नहिं तृप्यंताम ॥ ५ ॥ बाल्मीक मुनि
सत्यवती सुत (व्यासजी) कालिदास आदिक मति धाम।
त्यागि गए सब भूमि अभागिनि करैं परमपद में विश्राम।
अबतो ह्यां के लोग हाय भूले हरिचन्दहु के गुन ग्राम।
कासों आस कौन कहिहै हा! छंद प्रबंधहि तृप्यन्ताम ॥ ६ ॥
पठन श्रवण अनुसरण गयो सब रह्यो तिहारो नामहि नाम।
सोउ कोउ २ मुनि हंसत हाय कोउ काढ़त निज रुचि
अनुगत बाम। यह बिडम्बना सहत सहत बजि केहि प्रकार
बहुंदिसि बसु जाम। अहो वेद भगवान, रहत किन ब्रह्मपुर
हि में तृप्यन्ताम ॥ ७ ॥ खोय धर्म धन बल बुद्धि विद्या नेम

प्रेम आदिक गुण ग्राम । पाप पखंड अविद्या आलस औगुन
के बनि रहे गुलाम । यह गति देखहु निज बंशिन की सब
बिधि बोरि रहे तव नाम । हृदय होय तौ होहु सबै ऋषि
आंसुन के जल टप्यन्लाम ॥ ८ ॥ को समुझै तव गूढ़ तत्व
कहँ को ऐसो बिद्या बुद्धि धाम । मूरख जानैं झूठ कहानी कै
साधैं निज अजगुत काम । अगले जगन है चुक्यो आद्रित
सविधि तिहारो सरम कलाम । बहै बिचारि पुरान अचारन
रह्यो करौ बसि टप्यन्लाम ॥ ९ ॥ गए बिदेश भागि भारत ते
राग रागिनी सुरलय ग्राम । गिने जात अब इहां सबै गुन
कलावंतन कथिकन के काम । लोग मृगहु ते तुच्छ बसैं बहु
नाद ब्रह्म सों बिमुख निकाम । होहु जाय सरस्वति बीणा
सुनिहैं गन्धर्व गन टप्यन्लाम ॥ १० ॥ तव बिद्या गुन कला-
कुशलता लंदन माहिं करैं बिश्राम । जिन सों हमरे पितर
लहतहे लोक लाभ परलोक अराम । हमतौ यही न जानैं
तुम्हरो कैसो चरित कहा है नाम । क्यों बिन काज कहैं झूठे
बनि 'आचारज कुल टप्यन्लाम' ॥ ११ ॥ शक्ति कौनसी इहां
रही है जाहि पूजि कै करैं प्रनाम । परदेसिन संग बरस मनावैं
परबस हमरो जाति तमाम । जहां बिक्रमादित्य गए तहँ
तुमहूं जाय करौ बिश्राम । अथवा तिथि पत्रनो बसि रहिए है
ममवत्सर ! टप्यन्लाम ॥ १२ ॥ नारिन कौ तौ कौन कथा है
जहां नरहि सब बिधि सौं खाम । तुमहिँ प्रसन्न करन की
ससरणि कोहँ मह देखि परै कोहि ठाम । साधन आराधन
नहिं जानैं दुखित दुचित हम हैं बसु नाम । हां बकरा को

रकात लेहु अरु रहहु देवि ! नित टप्यन्नाम ॥१३॥ धन बल प्रेम नेम बिन सपनेहु सुख न लहैं घरहो को बाम। ताहू पर परतिय धनतिय संग भए औरहु निपट निकाम। याते आस हमारी तजि कै करहु स्वर्ग ही बैठि अराम। जियत कहा हम मरेहु नाहिं कहि सकैं अपमरा ! टप्यन्नाम ॥ १४ ॥ जोग जाग जप करन हार अब रह्यो कौन केहि दिसि केहि ठाम। कलिके हाथन नष्ट भृष्ट हैं द्विज ऋषि नृप ऋषि बंश तमाम। याते देव आप दुःखित हैं भाग न लहैं रहैं अति छाम (क्षीण)। देव अनुग तुमसों केहि बिरते कोऊ कहि है टप्यन्नाम ॥१५॥ महगी और टिकसकी मारे हमहिं छुधा पीड़ित तन छाम। साग पात लौ मिलै न जिय भरि लेबो वृथा दूध को नाम। तुम्हैं कहा प्यावैं जब हमरो कटत रहत गोवंश तमाम। केवल सुमुखि चलक उपमा लहि नाग देवता टप्यन्नाम ॥ १६॥ लछिमी तुम्हरे पार गई किमि कीजै पूजा को इतमाम। अब यह देश डुबोय देहु बसि हम बर मागैं करि परनाम। निधन (मृत्यु) उचित है निरधन कों नतु कौन आस व्याकुल नरबाम। अंजलि जल दै कै हे सागर तुम सों कहिहैं टप्यन्नाम ॥१७॥ जे हमरे अनुशासन करता जिन के कर हमरो सित स्याम। हमहिं त्यागि ते तव दिशि भगत तनिक हि लखि ग्रीष्म की घाम। राजा धर्म प्रजा सुख सम्पति हरन धरन चाहिय तुव नाम। का सुविधा लखि तुष्ट होय हम कहि हैं पर्वत टप्यन्नाम ॥१८॥ बसत रहे तव तीर नगर जेते श्रीहत ह्वै रहे तमाम। बेऊ स्वर्ग सिधारि गए जे नीर न्हाय सुमिरहिं सिय राम। उन की

धन उनकी जीवनकहं जिमि दीन्हो निजउदर आराम। तिमि हमरी हू तन समेटि कब ह्वैहो सरिता तृप्यन्ताम ॥१९॥ब्रह्म तेज नृपवंश पराक्रम बणिक वृत्ति सब भई तमाम। दास बने जीवत ताहू में कोटि आपदा बिना कलाम। निरलजता की अच्छत भच्छत दृग जल पियत जियत बिन काम। निज घर पर कर परे मरे सी मनुज नाम धर तृप्यन्ताम ॥२०॥ अलका पुरी त्यागि द्रुत आए बड़ी दया कीन्ही परनाम। कछु धन-पति (कुबेर) ने दियो होय तो भोजन को! कीजै इतमाम। तुम्हैं समपैं काह हमारी पूंजी में नहिं एक छदाम। हाँ यह जल यह जब ये तंदुल लेहु यच्छ गण तृप्यन्ताम॥२१॥जब लगि हरि अवतार लेत नहिं तब लगि सुरकुल निबल निकाम। तब लगि सुबरनपुर (लंका) सुख सम्पति तुम्हरेही आधीन तमाम। निज रुचि जेहि चाहो तेहि चासो सरबसु नासो करो अराम। काज कहा हमरे कहिबे को है राकस गन तृप्यन्ताम ॥२२॥ ठौरहि ठौर मसान परे हैं मरे डरे हैं मृतक तमाम। इन की शिर कंदुक क्रीड़ा हित तुमहिं दए शंकर सुख धाम। सुख सों खेलहु खाहु मजहु तन जो कछु मिलैं हाड़ औ चाम। लहौ जु एको बूंद रकत तौ बसि पिशाच कुल! तृप्यन्ताम ॥२३॥ तुम बूढ़े ह्वै गए कहा अब चंगुल चोंच करै नहिं काम। नतु उन अहिन भखत नहिं काहे जो अस्तर बिष चिक्कन चाम। बीस बिसै बिश्वास यही है याते हम निज जानि सुदाम। यथा शक्ति जल दै कर बिनवै हे सुपरण गण (गरुड़ और उन के भाई आदि) तृप्यं-ताम ॥२४॥ पंच भूतमय बिश्व भरे में केवल भरत भूमि की

बाम । तव गति जानहिं तव कर मानहिं भूत भविष्यत को इतमाम । उनहीं के सिर चढे रहन में मिलिहैं तुम्हैं अभूत अराम । उन के नाते हमरौ पानी लेहु भूत गण ! तृप्यन्ताम ॥२५॥ नाना घास बए जोते बिन उपजावत तुम्हरे हित । राम । पै वाहू पर टिकस लेत नृप कबहूं दैव दिखावत घाम- तुम पर दया कौन करिहै कोउ मास खात कोउ खैंचत चाम । हां हमरे अंजलि भरि जल कहं पीवहु पशु बसि तृप्यन्ताम ॥२६॥ बिगरि जाय जल बायु बढ़ैं रुज होय अवखैंन दुख परिणाम । पै यह समझनहार कौन ? सब बन काटहिं अरु संचहिं दाम । डरियत ! कहुं तरपन हित तुम्हरो लिखन न परै चित्र अरु नाम । याते कहियत बची बचाई सबै वनस्पति तृप्यन्ताम ॥२७॥ अब नहिं समय चरक सुश्रुत को नहिं बैदनि पढ़िबे सों काम । पढ़िवेहू को करैं मनोरथ तौ केहि आश लागि केहि ठाम । समरथ जन सरीजन (डाकटर) पर सोहैं सुख मोरहिं सुनि कै तव नाम । याते बस अब पोथिन ही मे औषध अवली (समूह) तृप्यन्ताम ॥२८॥ उद्भिज (जो वस्तु पृथिवी फोड़ के उपजैं) पर कोउ दया करै कब ? स्वेदजहू मिलि मारैं बाम । अंडज कहं कछु हिन्दू रखहिं पै अब कढ़ि गए उन के राम । लोग जरायुज (मनुष्यादि) पर न पसीजैं तऊ हमरो बकिबो बेकाम । चारि भांति के भूत [प्राणी] ग्राम [समूह] केवल इतने जल तृप्यन्ताम ॥२९॥

बस बाएं हाथ से दक्षिणा रख दीजिए या ऋषि और पितरों को जलदान करने के लिये महीना भर तक योंही सब बैठे रहिए ।

एकसलाह।

जिन लोगों को विश्वास घात कर के पराई जमा हजम कर जाने में लज्जा नहीं आती जिन्हें अपने थोड़े से द्रव्य के मोह से दूसरों की महान हानि होते देख के भी दया नहीं आती जो लम्बी चौड़ी चिट्ठी लिख के और छाती ठोंक के प्रण करने में बड़े वीर हैं पर निर्वाह करने के समय चार पैसा खर्चने में भी कंगाल हैं जो अपनी बुरी आदतों के हाथ ऐसे बिक गए हैं कि अच्छे कामों के लिए एक डबल भी नहीं बचा सकते जिन्हें तकाज़ा सहने की लत और प्रतिज्ञा तोड़ने की धत है उन के लिए तो हमारे पास क्या ब्रह्मा जी के पास भी कोई औषध नहीं है सिवा इस के कि नालिश कर के उन को उचित बदला दे दिया जाय और समाचार पत्रों में सच्ची २ काररवाई प्रकाश कर के सर्व साधारण को उन से सावधान रहने की सूचना दे दी जाय पर जिन लोगों को सचमुच देश की ममता और सद्गुणों का व्यसन तथा अच्छे कामों में सहायता करने की रुचि है पर आमदनी इतनी थोड़ी है कि मामूली खर्च से इतना भी नहीं बचता कि जिस देशोपकारिणी सभा के सभ्य हैं उसको मासिक चन्दा और जिस उत्तम पत्र के ग्राहक हैं उसका वार्षिक मूल्य भी अखर के बिना दे सकें इस दशा में उन्हें लज्जा अवश्य आती है तकाजे का भय अवश्य लगता है यह खयाल जरूर रहता है कि 'दूसरे हमें क्या समझेंगे' परकरें क्या द्रव्य संकोच से लाचार हैं सभा में जाना वा पत्र का लेना छोड़ दें तो जी जलता है मनोविनोद में विघ्न पड़ता है सेंत के म्यम्बर वा ग्राहक बनने का आवेदन करें तो चार जनों के आगे आंखें नीची होती हैं यकरार करके न पूरा करें तो गैरत आती है इस प्रकार के विचार चित्त को अत्यन्त उलझन में डाले रहते हैं ऐसे सज्जनों के सुभीते के लिये हम ने एक सलाह सोची है अर्थात् सम्भव हो तो नित्य नहीं तो हफ्ते २ थोड़ा २ धन अलग रख दिया करें अथवा यह समझ लिया करें कि गरीबों के सन्तान वृद्धि होती है तो क्या करते हैं जो मनुष्य पांच रुपए मात्र मासिक आय रखता है और उसी में अपना तथा

गृहिणी का निर्वाह करता है उस के यदि एक लड़का भी पैदा हो जाय तो क्या करेगा ? फेंक देहीगा नहीं, कम से कम दस वर्ष तक वह लड़का कमाने लायक होही न जायगा, कहीं गड़ा हुआ खजाना मिलने से रहा आखिर झखमार के उसी थोड़ी सी आमदनी में दो आदमियों की जगह तीन का भरण पोषण करना पड़ेगा बस इतना बिचार कर लेने से चाहे जो हो एक दो अच्छे कामों में सहायता देने का व्यसन मिटता जायगा यों यों समझ लेना चाहिए कि बाजे हाकिम ऐसे प्रजा वत्सल होते हैं कि जहां सैर करने निकले वहीं नगर में हलकम्प पड़ जाता है किसी गरीब की बकरी सड़क किनारे बंधी है दो रुपया जुरमाना किसी दुखिया के द्वार पर दो चार मूली के पत्ते पड़े हैं चार रुपया जुरमाना किसी दिहाती बिधवा ने कंडों की टोकड़ी किसी के चबूतरे पर रख दी है पांच रुपया जुरमाना ऐसी हालत में यह दीन प्रजा जन क्या करते हैं ? किसी न किसी रीति से देही गुजरते हैं न ? अपील करें तो पेट के लिए दौड़ने का समय कचहरी में बीते अभी दो ही चार में पीछा छुटता है फिर और परीश्रम हेना पड़े इससे यही समझ लेते हैं कि राजदंड भुगतना ही पड़ता है बस अब वसियारे ऐसा खर्च सहलेते हैं तो आप तो उनसे कहीं अच्छे हैं ऊपर से जो कुछ जी कड़ा करके दे डालिएगा वह देश सेवा में युक्त होगा फिर क्यौंन समझ लीजिए कि हम ऐसे ही स्थान के बासी हैं जहां का धर्म अथवा देश हित नाशक हाकिम ऐसा ही है यों समझ लेने से और इसी समझ का अनुसरण करने से आशा है कि बड़े २ कामों के लायक धन जुड़ जायगा तुम्हें तो कुछ बड़ी रकम देनी भी नहीं है हिन्दी के पत्रों भर में हिन्दोस्थान का मूल्य सब से अधिक है सो दस रुपया साल और बड़ी से बड़ी सभाओं का चंदा बड़ी हद दो रुपया महीना बिचार देखिए तो इतना सा खर्च हुई क्या जिस के लिए तका-जा सही नादिहंद कहलाओ और आत्मा को उलझेड़ में डाले रहो यदि ऐसा समझते तो क्यों अच्छे २ पत्र तथा सभाएं टूट जातीं और जो हैं उन्हें चलना दुस्साध्य होता क्या कोई "सत्पुरुष इसे बढ़ के श्री हरिश्चंद कला हिन्दी प्रदीप और ब्राह्मण को कुछ सहारा पहुंचावेंगे ? "
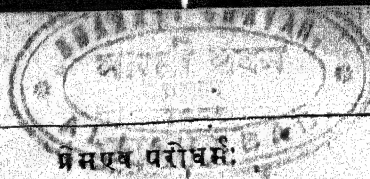
प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ठ
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

V7L. 7 { CAWNPORE, 15 AGST. SEPTR. 5 H. C. } NO. 1,2
खण्ड ७ { कानपुर १५ अगस्त सितम्बर श्री हरिश्चन्द्र सं॰ ५ } संख्या १,२

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ⁄) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा ।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु॰ लिया जायगा ।

३—विज्ञापन की छपाई ⁄) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा ।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा ।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

राधामोहन लाल अग्रवाल—
मेनेजर ब्राह्मण
कानपूर ।

अवश्य देखिये।

बाबू वृजभूषणलाल गुप्त के कई कामों के सबब ब्राह्मण का मेनेजमेंट करने की फुरसत नहीं है इस लिये यह काम मैं ने ले लिया है पाठकों को चाहिए कि अब से मैनेजर के सम्बन्धी की चिट्ठी पत्री तथा ब्राह्मण की दक्षिणा मेरे नाम से भेजा करें तथा ब्राह्मण के पुराने खंड अथवा सम्पादक महाशय की बनाई पुस्तकें मुझ से मंगाया करें और अब तक जो चिट्ठियों के उत्तर आदि में गड़बड़ हुई है उसे क्षमा कर के निश्चय रक्खें कि आगे बड़ी साव-धानी के साथ काम होगा।

राधामोहन अग्रवाल
मैनेजर "ब्राह्मण"
कानपूर

और सुनिए।

जो सज्जन ग्राहक नियमानुसार पत्र का मूल्य भेज देने की सुधि नहीं रखते उन के पास हमें वेल्यूपेएबिल द्वारा पत्र भेजना पड़ता है इस में कोई कोई महाशय रूठ जाते हैं और कभी मिल गए तो कह बैठते हैं अथवा लिख भेजते हैं कि—वाह साहेब क्या हम नादिहंद हैं?—इस में हमें सभ्यता के अनुरोध से लज्जित होना पड़ता है पर ग्राहक महाशयों को भी समझना चाहिए कि हम भी तो लखपती नहीं हैं कि डाक खाने तथा छापाखाने का खर्चा अखरता हो है ऊपर से इस पत्र का भाग्य जाने कैसा है कि प्रशंसा यहां से बिलायत तक पर आमदनी इतनी भी नहीं कि खर्च भर तो निकल आया करे! गत छः वर्ष में जो जो आफतें उठा के देश बिदेश जाके जितनी घटी हमने अकेले सही है और जितना रुपया अपनी गांठ से लगा के इसे चलाते रहे हैं उस का लिखना व्यर्थ है प्रायः सभी जानते हैं इस हालत में यदि हमने आप से वेल्यू-पेएबिल पोस्ट द्वारा एक रुपया मंगा लिया (जो हमारे पत्र का उचित मूल्य है) तो क्या अपराध किया यों भी तो आप को मनीआर्डर के दो आने देने पड़ते सो यों ही सही फिर रूठने का क्या अवसर है? यदि बिना मांगे तीन मास के भीतर भेज दिया कीजिए तो हमें क्यों ऐसा करना पड़े।

तथा बहुत मित्र किसी प्रकार मूल्य मांगने पर यह ताना दे बैठते हैं कि हम से भी दाम? सो भी यों?, क्या यही मित्रता है? उन्हें भी समझना चाहिए कि हम अपने निज के काम को तो मांगते ही नहीं एक पत्र के निर्वाह के लिए मांगते हैं जिस का काम स्वदेश भाषा के साहित्य का

पचार है और दशा ऐसी है कि कोई वर्ष ऐसा नहीं होता जिस में एक अ-खरने वाली रकमें गांठ से न देनी पड़ती हो फिर भला ऐसे काम के लिए और ऐसी दशा में एक रु० साल भी सहायतार्थ न देना कहां की दोस्ती है जिन्हें प्रत्येक काम के चन्दे में शरीक होना उचित है वे यदि एक पत्र के चलाने के लिए पत्र के बदले में दाम भी न दें तो हम क्या जानेंगे कि दोस्तों से मदद मिलती है ?

बर्षारंभ ।

जयतु सप्तऋषिवंदनित सतचित आनंद कंद। सत्य सनेह सुरूप शुचि शोभामय स्वच्छन्द ॥१॥ जय जगदीश दयानिधि जय जय जन रखवार। जय जय सब सुख भरन सेवत सातहु बार ॥२॥ धन्य नाथ ! धनि २ प्रभो धनि धनि मम स्वामि। सप्तपुरी पूजित परम पदहि नमामि नमामि ॥३॥ आज कृपासों रावरो लख्यो सातयों बर्ष रोम रोम सों किन कढ़ै तव धनिवाद सहर्ष ॥४॥ जो सब विधि साधन रहित ताहू पर यह नेहु। बिन मांगी सब काकु सदा सत * सत हाथन देहु ॥५॥ यह प्रतिच्छ प्रतिच्छन निरखि अतिशय हिय हरसात। सकुच न लागति जाचतहु जब अस दानि दिखात ॥६॥ देहु नाथ भारत सुतनि यह मति सब थल सोझ। 'सात पांच की लाकरी एक जने का बोझ,' ॥७॥ निज हित जाचहिं काह तुम जिय की जाननहार। दया सिंधु * दीजै यहै गति पूरन परकार ॥८॥ 'गंगा जमुना सरसुती सात समुद भर पूर। तुलसी चातक के मते बिना स्वाति सब धूर' ॥९॥ सात दीप नवखंड में प्रेम धजा फहराय। जय हरि शशि सब जग कहै पांच सात बिसराय ॥१०॥ होंहिं सबै सब के हितू सत चित सों सब भांति। फैलै ब्राह्मण बचन ते धर्म प्रेम शुभ शांति ॥११॥

नेति ॥

—*—

पंचायत ।

ऐसा कोई काम नहीं है जो भला अथवा बुरा कहने के योग्य नहीं यदि कोई इस सिद्धांत के विरुद्ध कह बैठे कि बहुत से काम ऐसे हैं जिन में न किसी को हानि होती है न लाभ न दुःख होता है न सुख उन्हें भला वा बुरा क्यों कर कह सकते हैं। हां निरर्थक अथवा निष्फल कह लीजिए तो उत्तर यह होगा कि भलाई बुराई दो प्रकार की होती हैं एक वे जिन का प्रभाव केवल कर्ता ही पर समाप्त हो

* सत (सात) भाषा में यह शब्द सात का वाचक है सतरह सतासम इत्यादि शब्दों को विचार देखो।

* सिंधु = सात।

जाता है दूसरे वे जो दूसरों के सुख दुःखादि का हेतु होते हैं इस रीति से विचार करने से निश्चित होगा कि निरर्थक कार्य यद्यपि दूसरों पर प्रभाव नहीं डालते पर कहने वाले का समय अवश्य नष्ट करते हैं और दूसरों को दृष्टि में उस की तुच्छता निर्बुद्धिता और विचार शून्यता निश्चय प्रगट करते हैं अत: वे भी बुरे ही कामों की गणना में हैं फिर कैसे कहा जा सकता है कि भलाई और बुराई के अतिरिक्त कोई तीसरा विशेषण भी है जो किसी कार्य अथवा व्यक्ति के लिए निर्धारित हो इसी प्रकार ऐसा कोई मनुष्य अथवा समुदाय भी नहीं है जो भलाई और बुराई से न्यारा रह सके जिन्हें लोग कहा करते हैं कि वे किसी के भले बुरे में नहीं रहते उनका भी चरित्र विचार के देखिए तो यातो यह पाइएगा कि संसार में रह के किसी को सहायता लेने वा किसी को साथ देने की योग्यता से रहित है अत: व्यर्थ जीवी हैं पशुओं की भांति केवल आहारनिद्रादि में जीवन बिताते हैं अत: बुराई करते हैं अथवा जगज्जाल से अलग रह के भगवान के जीवित सम्बन्ध में दत्त चित्त रहते हैं अस्मात् अपनी आत्मा ही के लिए सर्वोच्च श्रेणी की भलाई कर रहे हैं सारांश यह कि—बिधि प्रपंच गुण औगुण साना—के अनुसार सभी भलाई बुराई दोनों में फंस रहे हैं एक निर्विकार अकेलापन ब्रह्म है और ऐसा कोई कभी कहीं नहीं जनमा जिसने जन्म भर भलाई ही अथवा बुराई ही की हो जिन्हें आप बड़ा भला मनुष्य कहते हैं वे भी कभी २ कोई न कोई ऐसी बुराई कर उठाते हैं जिस को—सुनि अघनरकहु नाक सकोरी—का नमूना बनाना अत्युक्ति नहीं है इसी प्रकार जो कुमानुष कहलाते हैं वे कभी २ बड़ी भारी भलमंसी का उदाहरण बन जाते हैं ऐसी दशा में यदि भलाई के लिए प्रशंसा का पुरस्कार अथ चा बुराई के निमित्त दंड अथवा तिरस्कार न दिया जायतो किसी को पुण्य कार्य में उत्साह एवं दुष्कर्म में अरुचि उपजने की संभावना न रहे और स्वतंत्राचार इतना फैल जाय कि मानव मंडली किसी बात में संभलने के योग्य रही न सके क्यों कि जिन कामों को बुद्धिमानों ने बुरा ठहराया है वे बहुधा ऐसे प्रलोभनपूर्ण और स्वल्पारंभ होते हैं कि अनेक लोगों के चित्त को लालच में लगा के अपना वशवर्ती कर लेते हैं और अंत को दुःखदुर्दशा दुर्बलता के गढ़े में ऐसा दबा देते हैं कि उकसना कठिन हो जाता है इसी से पूर्वकाल के लोक हितैषी दूरदर्शी महात्माओं

ने यह रीति निकाली थी कि व्यवहार कुशल लोग समय समयपर एकत्रित हो के मानव जाति की साधारण जनता के उचितानुचित कृत्यों का यथोचित विचार एवं निर्धार करते रहा करें जिससे समाज के मध्य अच्छा काम करने वालों का सन्मान और दुराचारियों का अपमान और एतद्द्वारा भलाइयों की वृद्धि तथा बुराइयों का ह्रास होता रहे जो प्रत्येक जाति के सुख सौभाग्य सुदशा और सुयश का मूल है इस प्रकार की सामाजिक समागम को पंचायत अर्थात् पंचलोगों की सभा और पंच अर्थात् जनसमुदाय के कार्य्याकार्य्य निर्णय करनेवाले मुखिया लोगों को चतुर्धुरीण वा चौधरी अर्थात् चार जनों (समुदाय) का भार धारण करने वाला अथवा निर्धार कारक कहते हैं इन मुखियों के द्वारा आपस के झगड़ों का निपटारा विजातियों के अत्याचारों से छुटकारा रीति का सुधार नीति का निर्धार दोषियों का दंड पीड़ितों का निस्तार व्यवहार में सुविधा और सिद्धि धर्म्मका प्रचार और वृद्धि इत्यादि इत्यादि सभी कुछ बड़ी सरलता एवं सुगमता से हो सक्ता है जब तक जिस देश का भाग्य उदित रहता है तब तक वहां इस चालका पूर्ण प्रचार बना रहता और पंच परमेश्वर की दया से सब जाति अपना २ हित साधन करती रहती हैं सतयुग त्रेता और द्वापर में जब अपने देश के पूर्णाधिकारी हमीं थे तब हमारे पूर्वज महर्षिगण जहां कोई राज प्रजा ईश्वर जीव पिता पुत्र सजाती विजाती इत्यादि के सम्बन्ध की उलझेड़ देखते थे वा कोई नवीन घटना होती थी वहीं काशी प्रयाग नैमिषारण्यादि में एकत्र हो के सर्व सम्मति के द्वारा कोई ऐसी युक्ति निकाल देते थे जिस में सब को सब प्रकार की सुविधा प्राप्त हो जाती थी पर कलियुग में जब कि हमारा सुख सूर्य्य पश्चिम की ओर झुकने लगा तब बुद्धिमानों ने यह रीति निकाली कि ब्राह्मण यद्यपि सब के अग्रगामी और क्षत्रिय संसारिकस्वामी हैं पर समस्त जाति एवं कुटुम्बों में बहुत सी रीति नीति ऐसी हैं जो एक दूसरे की चाल ढाल से कुछ न कुछ भिन्नता रखती हैं और सब को सब के यहां की सब बातों का पूर्ण बोध होना दुस्साध्य है इससे प्रत्येक जाति की पृथक२ पंचायत नियत हो जाय तो बड़ा सुभीता रहेगा सच पूछो तो यह युक्ति और भी उत्तम थी और जिन समूहों में इस का जितना आदर बना हुआ है वह अद्यापि अनेक प्रकार की अड़चलों

से बचे रहते हैं हमारे पाठकों ने नाई बारी तेली तमोली आदि साधारण श्रेणी के लोगों की पंचायत कभी देखी होगी तो जानते होंगे (न देखी हो तो देख के जान सकते हैं) कि किसी से कोई ऊंच नीच हो गई बस पांच पंच ने इकट्ठा हो के कोई जाति सम्बन्धी प्रायश्चित नियत कर दिया जिस के करने वाले को सामर्थ्य से बाहर कष्ट नहीं होता और अपराधी प्रसन्नता पूर्वक उस २ को अंगीकार कर लेता है तथा उस के जाति भाई आनन्द सहित उसे उऋण कर देते हैं एवं आगे के लिए दूसरे लोग सावधान हो जाते हैं जिससे पुनर्वार वैसे दुःख दुर्गुणादि उपस्थित होने की सम्भावना विशेषत: नहीं रहती यह लोग यद्यपि बहुधा विद्वान नहीं होते पर पंचायत के द्वारा अपने समुदाय का प्रबन्ध ऐसी उत्तमता से कर लेते हैं कि धनमान एवं धर्म भी सहज में रक्षित रहते हैं बरंच कभी २ राज कर्मचारी अथच उच्च जाति वाले अधिकारियों को भी अपने विरुद्ध हाथ पांव हिलाने में अक्षम कर देते हैं पर ब्राह्मण क्षत्रियादि उच्च कुल वालों में यह प्रथा न होने के कारण खेद है कि विद्या बुद्धि और प्रतिष्ठा के आछत कोई भी ऐसा प्रबन्ध नहीं है जो सिर पर आई हुई आपत्ति एवं असुविधा को रोक सके जिस के जी में जो आता है वह कर उठाता है कोई पूछने वाला ही नहीं छिप २ के बड़े से बड़े अधर्म्म अन्याय अनर्थ करने वालों के लिए कोई रोक टोंक ही नहीं कहीं किसी का गुप्त चरित्र प्रगट हो गया (सत्य हो वा मिथ्या) तो फिर किसी भांति मरण है पर्यन्त उस के दुष्फल से मुक्ति ही नहीं भाई २ बाप बेटे तक में झगड़ा खड़ा हो जाय अथवा किसी पर कोई दैवी मानुषी दुर्घटना आ पड़े तो कचहरी के बिना कहीं शरण ही नहीं किसी को भी आपस के चार जनों से कोई आशा ही नहीं किसी का त्रास ही नहीं फिर भला निरंकुशता दृढ़ स्थायिनी होके न चिमटे तो क्या हो धन धर्म्मान प्रतिष्ठा शक्ति सदाचारादि का दिन २ ह्रास न हो तो क्या हो बहुत आगे की कथा जाने दीजिये केवल दो तीन पीढ़ी आगे से वर्तमान कुटुम्बों की दशा का मिलान कीजिए तो परमेश्वर झूठ न बुलावै सौ पीछे कम से कम पचास साठ घर ऐसे निकलेंगे जिनके बाबा लक्षाधीश थे पर पोतों को पेट भर अन्न कठिनता से मिलता है पिता बड़े बड़े पण्डितों का मुंह बन्द कर देते थे पर पुत्रों को का

खा गा घा में भी खलल है प्रपितामह गांव भर के झगड़े निपटाते थे पर प्रपौत्र अपने कुटुम्ब को भी प्रसन्न रक्खें तो नाक कट जाय ऐसे अवसरों पर बहुधा यही सुनने में आता है "अरे भाइ उन की बातें उन के साथ गईं अब तो जैसे तैसे दिन काटते हैं" सच है जहां अपनी२ डफली अपना२ राग है वहां अपनी ही भलमंसी रखना लोहे के चने हैं पुरखों की चाल का निर्वाह कौन कर सकता है जिस समुदाय में आपस के चार जने मिल जुल कर बनी बिगड़ी में साथ देना शूद्रत्व समझते हैं उन में किसी को अपने तथा पराए भले में हाथ डालना अनुत्साह के अतिरिक्त और किस फल की आशा देगा तथा मन-मानी चाल चलने में कौन सा भय दिखलावैगा यही नहीं बरंच बहुधा यह भी देखने में आता है कि कोई कुछ अच्छा काम कर उठावै तो उस को नीचा दिखाने का यत्न किया जाता है उस पर दांत बाए जाते हैं बीसियों खुड़पेंचें लगाई जाती हैं जिस में कार्य्य सिद्धि के कारण वह हम से बढ़ न जाय तथाच आपदग्रस्त की हंसी उड़ाई जाती है जिसमें अपने बचाव का प्रयत्न करने में साहसी न हो सके ऐसी दशा में यदि समाज का सब प्रकार से अधः पतन न होतो हो क्या ? बहुतेरे बहुधा कहा करते हैं कि 'इस जमाने में भलेमानसों का गुजारा नहीं है' पर यह नहीं विचा-रते कि भलेमानस अपने गुजारे का उपाय क्या करते हैं उच्च कुल में जन्म पाने के अतिरिक्त भलमंसी ही कौन सी रखते हैं ? रक्खें भी तो उस के चिरस्थयित्व और प्रचार का कौन सा मार्ग अवलम्बन करते हैं फिर क्या है भलेमानस हों तो अपने को कुमानस हों तो अपने को सुख पावैं तो अपने आप पावैं दुख भोगैं तो अपने आप भोगैं इसी से आज मेरी कल तुम्हारी परसों इन की नरसों उन की और योंही धीरे धीरे सब की दुर्दशा होती चली जाती है और शीघ्र उपाय न किया गया तो होती ही रहैगी उपाय दुस्साध्य नहीं है और बहु-तेरे जानते भी हैं पर उसे ठीक रीति पर न बर्तने के कारण बड़े२ उद्देश्यों से बड़े २ नाम की सभाएं होती हैं और थोड़े दिन धूम मचा के याती समाप्त ही हो जाती हैं या नाम मात्र के लिए केवल दो एक उत्साहियों के उद्योग से ज्यों त्यों अ-पनी लीक पीटा करती है नहीं तो ऐसा कोई नगर ग्राम टोला मुहल्ला न होगा जिस में दो चार (कम से

कम एक) ऐसे पुरुष नहीं जो अपनी जाति की रीति नीति मे कुशल पास पड़ोसवालों की दशा में अभिज्ञ देश काल की गति के अनुकूल अनुमति देने में चतुर बहुत वयस बीतने अथवा वृद्ध लोगों की बात सुनते रहने के कारण अनुभवशील दस पांच जनों के श्रद्धापात्र और किसी न किसी योग्यता के हेतु दस बीस लोगों पर दबाव रखने वाले नहीं देश जाति के सच्चे शुभचिंतक लोग यदि ऐसों के पास अवकाश के समय जा बैठा करें और समय २ पर आत्मीयत्व का बर्ताव रख के हेल मेल बढ़ाते रहें तथा अपने गृह कुटुम्ब गोत्र मित्र हितू व्यवहारी गांव टोला से सम्बन्ध रखनेवाले विषयों में उन से सम्मति लेते देते रहा करें घर बाहर के झगड़े उनही के द्वारा निपटा के और व्यापार व्यवहार की बातों में उन का कहा कर के सामाजिक राजनैतिक धार्मिक इत्यादि कामों में उन्हें शिरधरा के अपना तथा उन का उत्साह गौरव एवं परस्पर का हित बढ़ाते रहा करें तो थोड़े ही काल में देखेंगे कि कैसा सुभीता प्राप्त होता है दूसरों की दृष्टि में कैसा सम्मान बढ़ता है और आगे के लिए कैसा सुख का विस्तृत मार्ग खुलता है जिन बातों के लिए आज हमें इतरों की खुशामद करनी पड़ती है बातें कुबातें सहनी पड़ती है व्यर्थ एक २ के चार रुपए लगाने पड़ते हैं घर बाहर के काम छोड़ के नींद भूख से मुंह मोड़ के दिन रात इधर से उधर निरी कल्पित आशा के लिए दौड़ना पड़ता है वही बातें सो बिना उपजोग नहीं और उपजी भी तो ऐसी सहजी रीति से सिमट जायंगी कि मानो खेल ही मात्र थी यही नहीं सोश्यल कानफरेंस तथा नेशनेल कांग्रेस इत्यादि बड़ी सभाओं के बड़े २ मनोरथों की सिद्धि एवं बड़े २ अभावों की पूर्ति में भी इन छोटी २ सभाओं का बड़ा भारी प्रभाव पड़ेगा बड़े २ कठिन काम सहज में हो सकेंगे और प्रत्येक जाति प्रत्येक समूह के प्रत्येक व्यक्ति का बड़ी भारी शक्ति का सहारा रहैगा और यदि यह शक्ति दूसरों की पंचायतों के साथ किसी प्रकार का विवाद न रख के काम पड़ने पर उन्हें भी तन मन धन से सहायता देने लेने में लगाई जाय तो क्या ही कहना है सोने में सुगंध अथवा बाघ की बंदूक बांधे वाली लोकोक्ति थोड़े ही दिनों में प्रत्यक्ष दिखाई देने लगेगी और सब के सब दुःख दरिद्र पाप से आप दूर

हो जायंगे पर तभी जब आज कल की नाईं सब के सभी अपने को डेढ़ सयानों में न समझ के अपनी ही बात बाला रखने का हठ न रख के द्वेषियों का उत्तर द्वेष भाव से न देके सरलता सहन शीलता एवं सत्यता के साथ अपनों को अपना बनाने का प्रयत्न करेंगे और हमारे इस मूल मंत्र पर दृढ़ विश्वास करलेंगे कि सर्वशक्तिमान जगदीश्वर के प्रत्यक्ष प्रतिनिधि स्वरूप पंच हैं उन्हीं के आराधन से सर्व सिद्धि हस्तगत होती हैं एवं उन की सच्ची तथा सत्यफल दायिनी उपासना का एक मात्र मार्ग अद्वितीय सिद्ध पीठ सर्वानुमोदित विधि पंचायत है।

सत्य।

जिस धर्मोपदेशक एवं नीति शिक्षक के मुंह सुनिए यही सुनिएगा कि 'सत्यमेव जयते ना नृतम्' 'सत्यान्नास्ति परोधर्म्मः' 'सत्येनास्ति भयं क्वचित्' 'सांच को आंच नहीं' 'सांच बरोबर तप नहीं' इत्यादि पर हम कहते हैं यह बातें केवल सतयुग के लिए थीं नहीं तो कब त्रेतामें दशरथ महाराज सरीखे धर्म तत्वज्ञ ने कैकेयी जी के वचन बद्ध हो कर रामचन्द्र जी का बन गमन सच्चे जी से प्रसन्नता पूर्वक न चाहा गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं 'राव राम राखन हित लागी। बहुत उपाय कीन छल त्यागी' द्वापर में धर्म्मावतार युधिष्ठिर जैसे सत्यवादी ने रण क्षेत्र में 'नरो वा कुंजरः' कह दिया तब दूसरे किस मुंह से सत्य के निर्वाह का आग्रह कर सकते थे? विशेषतः इस कलिकाल में हमारे तुम्हारे समान साधारण जीवों को सत्य बोलने का प्रण (प्रण कैसा इच्छा) करना भी ऐसा है जैसे टिटिहरी नामक पक्षी का इस विचार से पांव उठा के सोना, कि बादल गिर पड़ेगा तो बच्चे कुचल जायंगे इस से पांव ऊंचे किए रहना चाहिये जिस में गिरे भी तो ऊपरही अटका रहे बच्चों को न दबा सके भला जिस देश में करोड़ों लोग रूखी रोटी को तरसते रहते हैं करोड़ों कृषि वाणिज्य शिल्प सेवादि के द्वारा जो कुछ कमाते हैं उसका सारभाग टिक्कस व्यापार चंदा आदि की राह बिलायत चला जाता है जहां दुःखी लोगों को दुहाई देने के लिए भी रुपया लगाना पड़ता है सो भी न्याय ऐसा कस्तुरी के भाव बिकता है कि बहुधा रुपये वाले ही पाते हैं वहां सब को अपना पेट पालने और येनकेन विधिना निर्वाह करने की चिंता चाहिए कि सत्या

सत्य को ? हमीं सत्य का आग्रह करता खरगोश के सींग अथवा ख पुष्प नहीं है तो है क्या न मानिए तो किसी उच्च दुष्ट का सच्चा हाल कह देखिए परमेश्वर चाहे तो कल्ह ही मान हानि के अपराध में लेने के देने पड़ जायंगे इसी से कहते हैं कि अपना काम चलाए जाना चाहिए पुराने लोगों की भांति सत्य असत्य के उलझावों में पड़ना वाहियात है तथा जो कोई कहै कि मैं झूठ से दूर भागता हूं उसे जान लेना चाहिए कि सहा झूठा है 'मैं झूठ नहीं बोलता' इस वाक्य का अर्थ ही यह है कि मैं झूठ कह रहा हूं नहीं तो ऐसा कौन है जो सत्य बोल के सुख पूर्वक निर्वाह कर सकता हो हां सचमुच सत्य के घमंड में आप संसार को तृणवत समझे रहिए मरने पर बैकुंठ में सब से ऊंची पदवी पाने का विश्वास किए रहिए पर जब तक दुनिया में रहिएगा तब तक थोड़े से (यदि हों) सतयुगी लोगों को छोड़ के सब की आंखों में खटकते ही रहिएगा क्योंकि सत्य होती है कड़वी इसी से 'खरी कहैया दाढ़ी जार' कहलाता है उसे कोई पसन्द नहीं करता 'खरी बात सपटुल्लाह है । सब के जी से उतरे रहें' जिस को कहोगे उसे मिर्चें सी लगेंगी और जहां तक चलेगी तुम्हें नीचा दिखा के अपने जी के फफोले फोड़ने का यत्न करेगा चाहे असत्य अन्याय और अनर्थ ही के द्वारा क्यों न हो फिर भला जिस में पराई आत्मा कष्ट पावै तथा अपने ऊपर आंच आवै एवं दोनों में वैमनस्य बढ़े वह काम किस काम का ? इससे यही न उत्तम है कि खुशामद के द्वारा दूसरों को खुश रखना और अपने लिए आमद का द्वारा खुला रखना सतयुग में महाराज हरिश्चन्द्र ने सत्य का बड़ा पालन किया था उन्हीं ने क्या सुना लिया था राज्य गया घर छुटा स्त्री बिकी पुत्र बिछड़ा आप सारी सल्तनत छोड़ के श्मशान में बरसों चौकीदारी करते रहे इस के बदले में मिला क्या, कीर्ति, जो न खाने के काम की न पहिनने के काम की और इस के विरुद्ध झूठों के सौभाग्योदय का एक नहीं सहस्र उदाहरण बतला क्या कहिए दिखला दें पर हमें सत्यानाशी सत्य का हठ कर के नाहक के झंझट में पड़ना मंजूर नहीं है इस से आप ही देख लीजिए और मन ही मन में समझे रहिए कि हमारी प्यारी मिथ्या देवी की आराधना कर के किन २ ने कैसे २ पद प्राप्त कर लिए हैं वैसा कुछ धन कैसी

कुछ प्रतिष्ठा कैसे २ सामर्थ्यवानों की दया दृष्टि लाभ की है तब आखें खुल जायंगी कि असत्य में क्या मजा है और सत्य में क्या फल है यह न कहिएगा कि झूठे खुशामदियों की दुनिया क्या कहती है जब हमें नौकरी अथवा ठेकेदारी के द्वारा सहस्रों का धन मिल जायगा बड़े बड़ों में आवा जाही हो जायगी हम राजा नव्वाब सर हजरत कहलावेंगे समय के कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ हुजूर खुदावंदों की नाक के बाल बन के गुलछर्रे उड़ावेंगे उस समय थोड़े बहुत दरिद्री निर्बुद्धो ढीठ और अभागी लोग कुछ कहो लेंगे तो क्या हो जायगा पीठ पीछे कौन किस को नहीं कहता ? अखबार वाले क्या २ नहीं बका करते पर किसी के कहने सुनने के डर से अपनी हानि करना कहीं की बुद्धिमानी है ? एक बुद्धिमान का वचन है कि फलाने ने मुझे पांच सौ गालियां दीं पर घर आके कापड़े उतारता हूं तो एक भी गाली का निशान तक न देख पड़ा इस से अपना सिद्धांत तो यही है कि कोई कुछ बके बकने देना पर झूठ खुशामद छल कपट कुछ हो करना पड़े कर डालना और अपने मतलब में न चूकना न जाने वह कैसे लोग थे जिन्हों ने धर्म को वृषभ बना या है और सत्य शौच दया दान उस के चरण वर्णन किये हैं नहीं तो सच यों है कि बैलों का धर्म बैल है और मनुष्यों का धर्म मनुष्य है इस न्याय से वृषभ रूप धारी धर्म के पांव कलियुग महाराज ने काट डाले अत: अब वह धर्म चलने के योग्य नहीं रहा इस से इस समय हमारा मानव रूप विशिष्ट द्विपद धर्म चलना चाहिए जिसका एक चरण पालिसी है दूसरा खुद गरजी इन दोनों चरणों में से यदि एक में भी तनिक भी कसर हुई तो धर्म का चलना कठिन है अस्मात् यह जाने रहिए कि यदि धर्म का लक्षण यही है कि 'यतोभ्युदय निश्रेयस सिद्धि: सधर्म:' अर्थात् जिस के द्वारा संसारिक उन्नति और मुक्ति सिद्ध हो वही धर्म है तो स्मरण रखिए कि अभ्युदय के लिए सत्य का आश्रय लेना ऐसा हो है जैसा पानी मथ के घी निकालना हां पालिसी के साथ झूठ मूठ दूसरों की दृष्टि में सत्यवादी सत्यमानी और सत्याचारी बने रहिए और अपनी रही जमती दीखे तो दुनिया भर की चालाकी करने में भी हिचिर मिचिर न कीजिए बस सत्य देव ने चाहा तो अन्न धन दूध पूत खिताब तमगा सब कुछ मिल जायगा रही निश्रेयस सिद्धि उस के विषय में

जब कालिदास ऐसे महात्मा 'अविदित सुख दुःख निर्विशेष स्वरूपं जड़मतिरिह कश्चिन्मोहह त्याजगाद' कह गए हैं तो ऐसी बे सिरपैर की वस्तु के लिए यत्न करना शेख चिल्ली का नाम जगाना है हां मुक्ति का अर्थ छुटकारा है उसके लिए चिन्ता करना व्यर्थ है लोक लज्जा परलोक चिन्ता धर्म की चेष्टा परमेश्वर का भय इत्यादि कल्पित बंधनों में न पड़िए बस मुक्तिही है "पाशबद्धो सदा जीवः पाशमुक्तो सदाशिवः" ऐसी दशा में धर्मही से कोई प्रयोजन न रहेगा सत्य तो उस की एक टांग मात्र है उस में क्या रक्खा है ? और रक्खा भी हो तो मरने के पीछे मिलता होगा दुनिया में तो कोई काम निकलने का नहीं स्मृतिकारों के शिरोमणि मनु भगवान स्वयं उस के बोलने का निषेध करते हैं 'न ब्रूयात्सत्यमप्रियं' अर्थात् सत्य होती है अप्रिय अतः उसे न बोलना चाहिए फारस देश के नीति विदाम्बर शेख सादी ने भी कहा है कि हेल मेल से परिपूर्ण (क्योंकि जिस को ठकुरसुहाती बातें सुनाते रहोगे वही स्नेह करेगा) असत्य अनर्थ उपजाने वाली सत्य से श्रेष्टतर है (दरोगे मसलहत आमेज़ बिहतर अज़रास्तीएफ़ितना अंगेज़) यदि ऐसे २ महात्माओं के वाक्य सुन के भी आप को पूर्वसंस्कार के अनुरोध से सत्य की ममता बनी हो तो उसे केवल आप सखाओं के लिए बनाए रखिए गृह कुटुम्ब बंधु बान्धव सजाती स्वदेशी आदि से उस का बर्ताव रक्खे रहिए पर जगत भर के साथ उस का आचरण व्यर्थ ही नहीं वरंच हानि कारक पागल पन है अतः उसे पुरानी सत्यनारायण वाली पोथी में बांध रखिए वा पार्सल कर के सत्य लोक में भेज दीजिए जिस में फिर कभी सत्ययुग आवै तो ब्रह्मा जी को उस के लिए दौड़ धूप न करनी पड़े और हमारे मिथ्या मंत्र को गले का यंत्र बना के अपना तथा अपने भाइयों का हित साधन करते रहिए इसी में सब कुछ है और सब वाय चेंची पना है ।

हमारी आवश्यकता ।

जी बहलाने के लेख हमारे पाठकों ने बहुत से पढ़ लिए यद्यपि उन में भी बहुत सी समयोपयोगी शिक्षा रहती है पर वाग्जाल में फंसी हुई ढूंढ निकालने योग्य अतः अब हमारा विचार है कि कभी २ ऐसी बातें भी लिखा करें जो इस काल के लिए प्रयोजनीय हों तथा हास्य पूर्ण न होके

सीधी २ भाषा में हों जिसमें देखते और विचारते समय किसी प्रकार का अवरोध न रहे अथच हमारे पाठकों का काम है कि उन्हें निरस समझ के छोड़ न दिया करें तथा केवल पढ़ ही न डाला करें वरंच उन के लिए तन से धन से कुछ न हो सके तो वचनही से यथा प्रकाश कुछ करते भी रहा करें क्योंकि यह समय बातों के जमा खर्च का नहीं है कुछ करते रहने का है जब हमारा धन हेर फेर के हमारेही देश में रहता था हमारी शक्ति कुछ न होने पर भी इतनी बनी थी कि अपने सताने वालों को दबा न सकें तो भी अपने बचाव के लिए हाथ पांव हिला के जी समझा लें हमारे लिए कृषी वाणिज्य शिल्प सेवा के द्वार खुले हुए थे इस से निर्वाह अड़-चल न थी तब हमें बातें बनाना सो-हता था चाहे ब्रह्मज्ञान छांटा करते चाहे गद्य पद्य मय लेखों से कलम की कारीगरी दिखाया करते चाहे अपने साथियों के धर्म कर्म चाल व्यव-हार की प्रशंसा और दूसरों की तुच्छता के गीत गाया करते पर अब, जब कि हमारे हाथ कुछ भी नहीं रहा, है उसके भी चिरस्थायित्व का विश्वास नहीं तो फिर सर्वथा यही उचित है कि सौ काम छोड़ के (यदि अपना भला चाहते हों तो) ऐसे उद्योगों में लगी रहें जो हमारे लिए आवश्यक है यदि हम विरक्त हों तो भी हमें आज अपनी आत्मा के कल्याणार्थ बन में जा बैठना श्रेयस्कर होगा क्योंकि हमारे चतुर्थांश भाई भूखों मर रहे हैं और तीन चौथाई ऐसे हैं कि तीन खाते हैं तेरह की भूख बनी रहती है ऐसी दशा में केवल अपने परलोक की चिंता करना निर्दयता और स्वार्थ परता है फिर उन के लिए तो कहना ही क्या है जो गृहस्थ कहलाते हैं और परमेश्वर की दया से दोनों पहर अच्छा खाते अच्छा पहिनते थोड़ी बहुत समझ और सामर्थ्य भी रखते हैं वे यदि अपने देश भाइयों की आवश्यकता की न देखें और उस के अभाव की पूर्ति में यत्नवान न रहें तो अधेर है अन्याय है अनर्थ है मनुष्य का जीवन हजार पांच सौ वर्ष का नहीं है बहुत जीता है वह सौ वर्ष जीता है तिस में भी अनुमान आधो आयु रात्रि की सोने में बीत जाती है रही आधी उस में भी बाल्यावस्था तथा वृद्धावस्था खेल कूद और पड़े २ खटिया तोड़ने के अतिरिक्त किसी काम की नहीं होती यों लेखा जोड़िए तो सौ वर्ष में कुछ करने धरने के योग्य बीस ही पचीस

वर्ष निकालेंगी उन में भी गृहस्थी के सौ झंझट एवं नाना रोग वियोगादि लगे रहते हैं यों विचार के देखिये तो दस पंद्रह बहुत बीस ही वर्ष ऐसे हैं जिन में किए हुए कामों के द्वारा अपना पराया हिताहित अथच मरणानंतर चिरस्थायी यश अपयश प्राप्त कर सकते हैं यदि इतना स्वल्प काल भी केवल अपना ही पापी पेट पालने अपना ही स्वार्थ साधने तथा आलस्य और अनुद्योग ही में गंवाया जाय तो हम नहीं जानते मनुष्य जनम पाने का दावा 'अशरफुल मख्लूकात' बनने का घमंड आप किस बिरते पर कर सकते हैं विशेषत: इस समय में जब कि हमारे पीछे होने वाली पीढ़ी का भला बुरा हमारे ही हाथ आ रहा है और अनेक आवश्यक काम ऐसे आ लगे हैं जिन के किए बिना न हमारा निर्वाह देख पड़ता है न हमारी संतान के लिए सुख जीवन की राह सूझ पड़ती है और इसी से अनेक सहृदय एक न एक कार्य में जुट रहे हैं तथा वर्तमान राज्य में उन कामों के लिए बहुत कुछ सुभीता भी है यदि ऐसे में चूक गए तो आप की तो क्या कहें आप के बनाने वाले परमेश्वर ने आप को बुद्धि दान कर के क्या फल पाया यह हम पूछा चाहते हैं। इन बातों के उत्तर में कहीं यह न कह दीजिएगा कि हमारे अकेले के किए क्या हो सकता है? क्योंकि मनुष्य कभी अकेला नहीं रह सकता सभी प्रकार के लोगों का थोड़े बहुत लोग साथ देने को सदा सब ठौर मिल रहते हैं यदि मान ही लें कि हमारा साथी कोई नहीं है तौभी जो हम आस्तिक हैं तो परमात्मा अवश्य साथी है जो सर्व शक्तिमान कहलाता है और उसे न भी मानिए तो आंखें खोल के देखने से जान पड़ेगा कि संसार में सारे काम मनुष्य ही करते हैं फिर क्या हम मनुष्य नहीं हैं? जो अपने कर्तव्य को न देखें अपनी आवश्यकताओं को न जानें और उन की पूर्ति के लिए यथा साध्य उपाय न करें? हां सामर्थ्य की स्वल्पता से अग्रगामी न बन सकें पूर्ण पौरुष न दिखा सकें यह दूसरी बात है पर इस के साथ यह भी समझे रहना चाहिए कि सभी सर्वगुण सम्पन्न नहीं होते और यदि हो जायं तो किसी को किसी की सहायता मिलना दुर्घट हो जाय या यों कहिए फिर किसी को कोई प्रभाव ही क्यों रहे इस से जितना जो कुछ हो सके उतना करते रहनाही परम कर्तव्य है आगा पीछा करना या बहाने गढना 'दुनिया में

जैसे आए वैसे चले गए' का उदाहरण बनता है अस्मात समझ हो तो आंखें खोल के देखिए कि हमारे लिए किन२ बातों की आवश्यकता है और उन के पूर्ण करने के क्या२ उपाय हैं तभी कुछ हो सकेगा स्वयं समझने की समझ न हो तो हमसे वा किसी और से समझ लीजिए और दूसरों को समझाने में लगी रहिए बस इसी में सब कुछ है।

[शेषमग्रे]

प्राप्तिस्वीकार।

हमारे प्रिय मित्र पंडित शंकरदयाल जी ब्रह्मभट्ट की लिखी हुई भट्ट प्रकाश खं० १ तथा २ मूल्य प्रति खंड तीन आने मिलने का पता घासमंडी कानपुर की हिन्दी पाठशाला है इस में भी बहुत से प्रमाणों के द्वारा भट्ट (भाट) जाति का ब्राह्मणत्व सिद्ध किया गया है और उन का शास्त्रोक्त कर्तव्य तथा उन्नति का मार्ग उत्तमता से बतलाया गया है इस जाति के लोगों को यह पुस्तक अवश्य देखनी चाहिए और समझना चाहिए कि जब हम (भाट) क्षत्रिय तक को प्रणाम नहीं करते किन्तु आशीर्वाद ही देते हैं और दान लेते हैं तथा विद्या ही के द्वारा आजीविका करते हैं तो ब्राह्मण के सिवा किस वर्ण में युक्त हो सकेंगे? और यदि ब्राह्मणोचित कर्म धर्म न करेंगे तो लोक परलोक में निर्वाह कैसे होगा? इन पंडित जी ने एक स्वजाति हितैषिणी सभा भी स्थापित की है और सदा जाति हित में तन मन धन से प्रयत्न करते रहते हैं अतः हम मुक्तकंठ से धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि प्रत्येक जाति में दस पांच लोग इनका सा आचरण रक्खें तो बहुत शीघ्र सब का सुधार हो सकता है।

यह तो बतलाइये।

आप ठाकुर जी के मंदिर में तो बिना नहाए ब्राह्मणों को भी नहीं जाने देते तथा उन की मूर्ति एवं मरे हुए सम्बन्धियों का मृत: शरीर कोई उच्च जाति का हिन्दू भी छू ले तो नाक भौंह चढ़ाते हैं पर उन को पोशाक और उन्हें कफन वही पहिनाते हैं जो विलायत के कोरियों का बुना हुआ है तथा खलीफा जी के द्वारा सूई में थूक लगा २ के सिया गया है यह कहां की पवित्रता है? यदि देव प्रतिमा की प्रसन्नता और मृतकों की सद्गति पवित्रता पर निर्भर समझते हो तो देश के कपड़ा बुनने वाले और हिन्दू दरजी मर गए हैं? अथवा परदेशियों और परधर्मियों से भी गए बीते हैं जो उन को कारीगरी को इतना उत्साह भी नहीं देते?

और सुनिए—यदि घर में कुत्ता कौआ कोई हड्डी डाल दे अथवा खाते समय कोई मांस का नाम ले लेती तो आप मुंह बिचकाते हैं पर विलायती दियासलाई और विलायती शक्कर जिस में हड्डी तथा रक्त दोनों पड़े हुए हैं सो भी न जाने कि किन २ जानवरों के वह आरती के समय बत्ती जलाने को सिंहासन के पास तक रख लेते हैं और भोग लगा के गटक जाने तक में नहीं हिचकते यह कहां का खाद्या खाद्य विवेक है? क्या देश में दियासलाई बनाने की विधि जाननेवाले मर गए हैं? अथवा खांड बनाने के नियम हर गए हैं जो आप से इतना भी नहीं होता कि मथुरावाली आरएनबर्मन कम्पनी की मदद दीजिए और साबुन तथा दीपशलाका के कारखाने में दो एक शेयर (हिस्से) ले लीजिए तथा बनारसी चीनी खाया कीजिए?

और लीजिए—देशकी दरिद्रता और उद्धारके विषय में लेक्चर देते समय तो आप श्रोताओं के कान की चैली उड़ा देतेहैं और लेख ऐसे लिखते हैं कि छापने के समय कम्पोजीटर नाकों आ जांय पर अपने शरीर को सिर से पैर तक विलायती ही वस्त्र शस्त्र से मढ़े रहते हैं घर में दमड़ी की सूई भी विलायती खाने की दवा भी विलायती पीने को मदिरा भी विलायती न्हाने को साबुन भी विलायती साथमें कुत्ता तक विलायती देशी केवल मुंह का रंगही रंग दिखाई देता है क्या इन्हीं लक्षणों से देश का दरिद्र मिटाइएगा और देशोद्धार करने वालों में पांचवें सवार बनिएगा? अथवा उपर्युक्त वस्तु यहां नहीं मिल सकतीं वा बनना असम्भव है वा दाम अधिक लगते हैं तो देर तक ठहरती नहीं है पर हां शायद जी डरता हो कि कहीं काट न खायं! क्योंकि आप तो ज्यन्टिलम्येन अर्थात् सुलायम आदमी हैं न!

आगे चलिए—आप को नेचर के तत्वज्ञान और उस की पूरी पैरवी का दावा है इस से हम पूछना चाहते हैं कि यह बात ला आफ़नेचर की किस दफा में लिखी है कि जो देश अथवा जाति जिस दशा में है आज उसी में प्रलय तक बनी रहेगी अत: उसे अपने सुधार का यत्न करना जुर्म है और ऐसे जुर्म करने वालों से मुखालिफत करना ही नेचर का सब से बड़ा उसूल राजभक्ति का मूल और मसलहत के जहाज़ का मस्तूल है यह भी कहिए आप का जन्म हिन्दुस्तान में हुआ है खाना पीना रीति व्यवहार ब्याह शादी भी हिन्दू हो मुसलमानों के

साथ होती है मरने पर भी यहीं की पृथिवी अथवा जल में मिल जाइएगा फारस अरब तथा इंगलेंड में जाइए तो शायद कोई बात भी न पूछे क्योंकि आप की भाषा भेष धर्म कर्म आहार विहार सब वहां वालों से पृथक हैं ऊपर से तुर्रा यह है कि आप जहां भए उपजे हैं वहीं कोई बड़े विद्वान् धनवान नहीं हैं फिर परदेश में प्रतिष्ठा पाने की तो क्या आशा है पर इन बातों को जान बूझ के भी पुलिस की उर्दी पहिनतेहो टिकियाबिल्लाजच का आदि धारण करते हो अपने देश भाइयों को सताना सड़ी २ सी बातों की चुगली खाना कहनी अन कहनी कहना वरंच कभी कभी उन पर हंटर तक फटकारते रहना कहां की बुद्धिमानी है ? अपनी डिउटी में न चूकिए अच्छा हाकिमों को अवश्य प्रसन्न रखिए किन्तु यह समझे रहिए कि आप का वर्ताव किसी कानून का हुक्म नहीं है, आप इस मुल्क के फतेह करने वाले नहीं हैं साहब बहादुर बिलायत चल देंगे तब आप को साथ भी न ले जायंगे आप का ढंग भी ऐसा नहीं है कि ख्वाहमख्वाह रियायत की जाय नौकरी की जड़ सदा धरती से सवा हाथ ऊपर रहती है इस से उस पर भरोसा करना नाहक है परमेश्वर न करे काल को किसी अपराध के कारण छुड़ा दिए जाओ तो रुजगार की आशा किस से करोगे ? जुरूरत पड़ने पर कर्ज किस के यहां से काढ़ोगे ? दुःख सुख तंगी बहाली आदि में किसका आश्रय ढूंढोगे ? इन्हीं हिन्दुस्तानियोंही का न ! जिन्हें आप इस समय धमकाते हैं जिन पर हुकूमत जताते हैं जिन्हें मनमानी घर जानी काररवाई का निशाना समझते हैं बतलाइये तो उस समय चित्त की क्या दशा होगी ?

इतना और भी—भला आप के ऊपर और भी कोई हाकिम है ? भारतवासियों की कोई सामर्थ्य न सही पर अपना दुख रोने की शक्ति है ? यहां माना कि बहुत लोग आप ही का पक्ष करेंगे किन्तु यहां से विलायत और विलायत से परमेश्वर के घर तक कोई भी ऐसा है जिसे न्याय की ममता तुम्हारे ममत्व से अधिक हो ? राजराजेश्वरी का प्रताप अथवा परमेश्वर का अचल नियम भी कोई वस्तु है ? यदि है तो फिर आप क्यों चाहते हैं कि 'भावे हिये करैं हम सोई' इस से तो यही न उत्तम है कि ऐसे काम करजाइए जिन्हें स्मरण कर के सब सदा आशीसते रहें पूछना तो बहुत कुछ है पर इस समय इतना ही बहुत है ।

"त्रुटि"

(श्रीबाबू राधामोहन अग्रवाल द्वारा लिखित)

इस ढाई अक्षर के शब्द "त्रुटि" की व्याप्ति जिस पदार्थ में होती है उसी को अप्रिय निन्दनीय एवं अशुभ बना देती है यदि किसी अनिष्ट पदार्थ में इस्का भाव हो तो वह भी पूर्ण रूप से अनिष्ट न होने के कारण अप्रशंसित हो जाता है। कोई २ पाठक शंका करेंगे कि अनिष्ट कर्म में तो इस की व्याप्तिही गुण है यह सच हो परन्तु चोर वही सराहना योग्य होता है जो चौरकर्म में ऐसा प्रवीण हो कि एक तस्मा न बाकी रक्खे यदि चोरी में कुछ भी कसर हुई अथवा किसी दुर्घट स्थान में कुशलता के साथ अर्थ लाभ न कर सका तो वह चोर कदापि प्रशंसित नहीं होता वरन निरा कच्चा कहलाता है। पूज्यवर श्रीगोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है कि "सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीच" अधुना हम अपने प्रिय पाठकों को स्पष्ट रूप से दर्शित करेंगे कि यह शब्द कैसा वाक्यों खोटा एवं घृणित समझा जाता है अथच इस्का कैसा पूर्ण प्रभाव हमारे भारत अवनी पर इन दिनों में हो रहा है। सब से प्रथम इसकी बनावट की ओर दृष्टि कीजिए प्रथम अक्षर "त्रु" में रेफ है जो साधारण बोल चाल में भी शुभार्थ में नहीं आता जब कोई इष्ट मित्र किसी व्यक्ति को शिक्षा करता है तो कहता है हे पुत्र, हे भ्रात: ऐसे अशुभाचारी न होना जिस्से कारण तुम्हारी बात में रेफ आवै इस्के व्यतिरिक्त हमारी मातृ भाषा नागरी गुनागरी के परम सयाने एवं चातुर कविजन जो माधुर्य्य ओज प्रसाद आदि गुण ले वर्णालंकार वा शब्दालंकार की खानि है वे भी इस को सतकार योग्य न समझ के प्रकीर्तित' आदि सरेफ शब्दों को परकीर्तित इत्यादि रूपों में मनोहरता वा लालित्य की रक्षार्थ बना लिया करते है इस से स्पष्ट है कि लालित्य के विनाश करनेहारा दोष इस में विद्यमान होने से तिरस्कारित हुआ है। यह नीचता का बोधक भी है कोष में पाया जाता है कि "रेति नीच वाक्यम्" और इस वाक्य को कुली वा नीच श्रेणी के मनुष्य भी सुनना स्वीकार नहीं करते व्याकरण में भी इस्को विलक्षण गति है कहीं स्थिर नहीं रहने पाता *

* विशेषतः इस्का अर्थ भी तम वा अंधकार है।

एतद् गुणी रेफ एक बांके टेढ़े स्वर उकार के सतसंग से वही कहावत स्मरण कराता है कि "एक तो कड़ुई लौकी दूजे नीम चढ़ी" अतः इस कटु अक्षर ने तकार ऐसे सुन्दर ललित आनन्दामृत जनक अक्षर का भी गौरव नाश कर दिया और—रंग एक रंगी दुरंगी ने किया क्या अहना। रफ़्ता २ मेरी मूरत यार की मूरत हुई॥—

और सुनिये कि दूसरा अक्षर ट कार है जिसकी कटुता अकथ है सम्पूर्ण कवि एवं हिन्दी भाषा के प्रेमी जन भली भांति जानते हैं कि प्रजन ऐसे कवि की काव्य में यही एक भयानक दोष आरोपण किया जाता है। अब इस शब्द की बनावट तो भली भांति विदित हुई कि अशुभ है और जिस पेड़ की जड़ही अच्छी नहीं है उस से सुन्दर फलों की आशा करना उन्हीं का काम है जो मूर्खता में त्रुटि करते हों। इसी त्रुटि के कारण कभीर चतुरानन सरीखे चतुर देवता की कारीगरी पर भी मनुष्य हंस डालते हैं (नाम चतुरानन पै चूकते चली गयी) अथच उस की कारीगरी पर नाना प्रकार के दोषारोपण करते हैं। अन्धे, लूले, लंगड़े, काने, बहिरे आदि जो मनुष्य होते हैं अथवा किसी प्रकार की त्रुटि मनुष्य या अन्य जड़ चैतन्य पदार्थों की रचना में होती है तो मनुष्य उस्को अशुभ जानते हैं सरकार नौकरी नहीं देती उस के स्व कार्य्यों में भी भांति भांति की त्रुटियां होती हैं स्मृतिकारों ने भी लिखा है कि अंगहीन ब्राह्मण को बहुत से शुभ कर्म्मों में अधिकार नहीं है हमारे भारत में चार वर्ण और चार आश्रम परम्परा से चले आते हैं अर्थात् शर्म्मा, वर्मा, गुप्त, दास; ब्रह्मचर्य्य, गृहस्थ, वाणप्रस्थ, सन्यास इन में यदि शर्म्मा सन्ध्या गायत्री इत्यादि कर्मों में असावधान हो त्रुटि करै तो वह निन्दनीय एवं कुपात्र है तथा क्षत्री जो निज कर्मों को पूर्णरूप न करै तो वह भी श्रेष्ट कदापि न गिना जायगा किन्तु अनल कुल में घमोही के सदृश माना जायगा इसी भांति यदि वैश्य अर्थात् गुप्त कृषी गोरक्षा वाणिज्यादि धर्मों को अथच दास निज दासत्व कर्म को परित्याग करै वा उस में किसी प्रकार की त्रुटि करै तो इन की भी श्रेय की आशाहत हो जायगी। निज कर्मों में त्रुटि ही होने का कारण है जिस्के द्वारा संपूर्ण भारत वासी इतनी लघुता को प्राप्त हुए हैं और अविद्या के मद में दास कर्मों को ही श्रेयकारक मान रात्रि दिवस दास होने की आकांक्षा

किया करते हैं पाठशाला से विद्या पढ़ ऐ. म. बी. ए. का पद लाभ कर प्रशंसा पत्र लिये बंगलों बंगलों मारे फिरते हैं नाना शिल्प विद्या आदि गुणों को वा वाणिज्य ऐसे सब या धन स्वतन्त्रता जनक कर्मों को नहीं ग्रहण करें निज स्वत्वों को नहीं पहिचानते अपने पिता पितामह के प्रतापों को नहीं सोचते । इस भारत में जितने शुभ कार्य्य होते हैं वे प्राय: सब के सब प्रारम्भ के साथही समाप्त हो जाते हैं यदि इस का कारण खोजा जाय तो किसी न किसी प्रकार के प्रबंध में त्रुटि ही अवश्य निकलेगी संपूर्ण भारत संतान हिन्दू इसाई मुसलमानों में स्नेह की न्यूनता वा निर्बीजता एक बड़ी भारी सामाजिक त्रुटि है । परदेश यात्रा करने वाले, बाल विवाह के विरुद्ध उद्योग करने वाले वा अन्यान्य समाजिक संशोधन करने वालों का तिरस्कार करना भी बड़ी भारी त्रुटि है । अपने ही लाभ के हेतु खुशामद करना झूठ बोलना अपना गौरव नाश करना न्याय सम्बन्धी समाजों में बैठ कर अपने अन्तरात्मा के विरुद्ध हां हां में प्रवृत रहना दिन को रात कहना अपने बन्धु वर्गों के जीव वा जीविका वा मर्य्याद के ग्राहक होना इत्यादि २ त्रुटियां समाजिक राजनैतिक एवं धार्मिक विषयों में नहीं है तो क्या है ? अब चार आश्रमों में देखिये कि प्रत्येक आश्रम में नाना प्रकार की त्रुटियों के वास्ते जिन का होना सम्भव जाना गया है धर्मशास्त्र में दण्ड लिखे हैं इस से सूचित होता है कि हमारे पूर्वज धर्मज्ञ लोग भी त्रुटि का होना बुराही जानते थे । हमारे भारतवर्ष के एक मुसलमान बादशाह ने अपने एक पाहुने मित्र को (जो ग्रीष्म ऋतु में पधारे थे) कई घंटे में शर्करा मिश्रित जल भेजा था जब वे पुन: शिशिर ऋतु में पधारे तो भी उन के पूर्ववत् भाग में बादशाह ने त्रुटि न की यद्यपि इस ऋतु के अनुकूल अन्य वस्तुएं भी भेजी । यदि च हमारे स्वदेशी राजा शिवप्रसाद सतसय्यद जी कांग्रेस के जन्म से पूर्व उस की वर्तमान सम्मति से सहानुभूति रखते थे अब स्वार्थ हेतु उस के जन्म से विशेषत: दिन प्रतिदिन वृद्ध होने से नाराज हो बैठते हैं और निज पूर्व विचारों में विरोध के कारण त्रुटि करते हैं पर तुम (प्रिय पाठक गण) ऐसा अनुचित काम कदापि न करना नहीं तो तुम को भी उसी भांति संपूर्ण भारत वासी निन्दा पात्र ठहरावेंगे । तो हम को पूर्ण आशा है कि हमारी न्याय शीला महारानी भी (उन के ईश्वर

चिरजीवी करें) अपने मन ५८ के वाक्यों के प्रतिपाद्य करने में त्रुटि न करेंगी संपूर्ण भारत वासियों के दुःख में सहायता एवं उन के दरिद्र को अपनी उदारता से नाश कर के निज निज को तथा हमारी संतुष्टता और राजभक्ति को दृढ़ करेंगी कि जिस में ब्राह्मण के निम्न लिखित वाक्य को सब श्रेणी के लोग सप्रेम नित्य प्रति पढ़ा करें कि । श्रीविजयनिजे १ श्री विजयनिजे २ श्री विजै निजे ३

पौराणिक गूढ़ार्थ ।

(प्रकाशित से आगे)

१३—जल और मदिरा के देवता वरुण का अस्त्र पास है अर्थात् जो जल की भँवर में पड़ जाता है अथवा मद्यपान की लत जिस के गले पड़ जाती है वह फांसी पर लटके हुए मनुष्य के समान जीवन के सुखों से निरास और काल सर्प का ग्रास हो जाता है ।

१४—ब्रह्मा जी के चार मुख हैं अर्थात् चारों वेद तथा उपवेद का तत्व चारों वर्ग (अर्थ धर्म काम मोक्ष) के साधन वा उपाय चारों दिशा की चराचर सृष्टि का वृत्तांत उन के मुख पर धरा रहता है अर्थात् वर्णन करने के समय सोचना ही नहीं पड़ता या यों समझ लो कि चार बड़े बूढ़े चतुर लोगों का वचन ब्रह्म वाक्य के समान यथार्थ होता है अतः— सांचेहु ताको न होत भलो जो मानत जो नहीं चारि जने को—हमारी समझ में निरभिमानी मिष्टभाषी और स्नेही हुए बिना ब्रह्मा जी के साथ साक्षात सम्बन्ध कोई नहीं लाभ कर सकता ।

१४ शेष जी अथवा विराट भगवान के सहस्र मुख हैं अर्थात् जो परमेश्वर समस्त संसार के नाश हो जाने पर शेष (बाकी) रहता है जो विविध विश्व का आधार औ यावत् सृष्टि का प्रकाशक सदा एकरस विराजमान रहता है वह सहस्र अर्थात् सहस्रों शिरों का अधिष्टाता है सहस्रों शिर बनाता और उन में से एक २ शिर में सहस्रों भाव उपजाता तथा अंत में धूल में मिलाता रहता है सनातन का शब्द पुरानकर्ता ही नहीं वरंच वेद वक्ता भी मानते हैं 'सहस्र शीर्षापुरुषः' इत्यादि फिर जब किसी शब्दों (जिन में सैकड़ों उलट फेर के अर्थ निकल सकते हैं) के लिखने वालों के हाथ सहस्र शीर्षा से अधिक अभ्रांत पद नहीं लिख सके तो मूर्ति रचना (वा कल्पना) करने वाले (जिन का मनोभाव केवल अनुभव से जाना जाता है शब्दों से नहीं) हजार मुड़

बना दें तो कौन सा अपराध करते हैं? शेष जी को सांप की सो मूर्ति देखके बहुतेरे स्थूल बुद्धी हंस पड़ते हैं और कह देते हैं 'भली परमात्मा की पोप जी ने कद्रदानी की' पर बुद्धिमान समझ लेते हैं कि सब गुण और सब पदार्थ उसीके हैं अतः चाहे जिस गुण रूप स्वभाव को मानों आत्मा के लिए कल्याण ही है यदि सृष्टि को संहार कर के शेष रहने वाले को हम ने आपानाशकता के गुण का सादृश्य देख के सर्प से उपमा दे दी तो क्या अनर्थ हुआ? भयानक रूप के मानने वाले दुष्कर्मों से भयभीत एवं अपने विरोधियों से निर्भय रहते हैं फिर ऐसे रूप की पूजा में क्या पाप है? पर शेष जी तो भयंकर हैं भी नहीं, नहीं तो श्यामसुंदर चतुर्भुज रूप से अपनी प्यारी कमला समेत उनपर शयन क्यों कर करते पर यह बातें कोई उन्हें क्योंकर समझा सकता है जिन का मत केवल परछिद्रान्वेषण (सो भी मोटी समझ के शास्त्रार्थ द्वारा) पर निर्भर है। शनैःशनैः।

आल्हा आल्हाद।

(मुद्रित से आगे।)

किसी बैठक के वर्णन में—बिछि गलीचा उह मखमल के जह मोर बन लग पायं समायं ॥२५॥ किसी नृत्य सभा के वर्णन में—तबला ठनके बृजबासिन को (ब्रजबासिनके बदले चाहे जिस देश के बाद्यकार का नाम हो) बंगला (अथवा जो स्थान हो) मा होय परिन का नाचु—२६॥ अथवा—बागाजोड़ी नचैं पतुरिया सोरह औरी भवैयन क्यार (कुछ बारह सोलह का नियम नहीं है जैसों) २७॥ नृत्य विसर्जन में—नचत कंचनी ठाढ़ी रहि गईं भंडुअन तबला धरे उतारि—२८॥ वीर सभा—तेगन के संग तेगा रगरैं ढालैं रगर २ रहि जायं—२९॥ अथवा—सबरी बोधनि धरी कटार—३०॥ वा टिहुना धरे नगिन तरवारि—३१॥ ऐसो सभा वा युद्ध की समाप्ति में—ज्वानन खोलि धरे हथियार—३२॥ राजसभा में—लगी कचहरी पथोराज (वा नुनि आल्हा अथवा पर मालिक तथा च कोई नाम) की बैठे बड़े २ उमराय—३३॥ अथवा—भरमा भूत लगे दरबार—३४॥ वा जिन घर भारी लगी दरबार—३५॥ ऐसे दरबार में कोई प्रस्ताव उठने पर—कलश सोबरन को मंगवाओ तेहि पर बीरा दस्रो धराय। है कोई ओधा मेरी नगरी (सजस्थित सेना का कोई स्थान का नाम) मां महुवे (दिल्ली वा कोई नगर तथा कार्य) पर पान चबाय—३६॥

किसी दूत का आगमन—तब लग दाखिल ह्वैगा झुकि २ करै बंदगी लाग—३७॥ अथवा—सात कदम तें करी बंदगी आवन हाथ जोरि, रहि जाय—३८॥ वा सात कुन्न सें (कोरनिश) तेरह मोजरा जस कुछु राजन के व्यवहार—३९॥ सभा की समाप्ति—उठो कचेहरी भई परिगा औ बरखास भए दरबार—४०॥ पत्र पढ़ने की रीति—खोलि कतरनी तें बंद काटैं आंकुइ आंकु नजरि करि जायं (आजकल होना चाहिए—फारि लिफाफा रे चुटकी मैं—४१॥ और पछिले बाचैं (वा लिखि गए) उइ सिरनाम और पाछे कै दुवा सलाम—४२॥ रसोई का वर्णन—चढ़ीं रोसैयां रजपूतन की बटुवन पकै हरिन को मांसु (यदि प्रस्तावना अन्यप्रकार का हो तो रजपूतन के ठौर पर—है ब्रह्मनन की रे बनियनकी और हरिन को मांसु के स्थान पर भातु औ दालि कहना दूषित नहीं है) ४३॥ किसी वीर की चाल—जूता झपेटा मरकत आवै खटकत आवै ढाल तरवारि—४४॥ व-खटकत आवै भुजा पर (अथवा गेंड़ु की) ढाल—४५॥ अश्व अथवा ऊट की चाल—रातिउ दौरैं औ दिन दौरैं बटिहा कहूं न करैं मुकाम ४६॥ गाड़ी की चाल—खररररररर पैया बाजैं रब्बा चलैं पवन कै साथ—४७॥ किसी सुंदरी की चाल—रुनुझुनुक पग धरति धरनि पर कमर तीन बै लौंचा खाय—४८॥ तलवार की चाल—आंवा झ्वार चलै तरवारि ४९॥ वा रे तरवारि चलै पतिझारु—५०॥ किसी का क्रोध—कारी पुतरियां लालो परि गईं नैना अगिनज्वाल ह्वै जायं—५१॥ सोच—तरे की सांसैं तरेहे रहि गईं उपरै ऊपर की रहि जायं—५२॥ अथवा—राजा (वा कोई नाम) रहे सनाका खाय—५३॥ दुःख—मल्हना (वा किसी स्त्री अथवा पुरुष का नाम) छांड़ि दई डिंडकार—५४॥ पुरुष की लज्जा—लटक कै मुच्छैं पिडरी होइगैं—५५। वा औ झुकि गए मुच्छ के बार—५६॥ प्रसन्नता—फूलि कै ऊदन (वा कोइ नाम गरगजु ह्वैगे—५७॥ अथवा—गजु भरि छाती भै ऊदन कै (वा उदया के) ५८॥ युद्ध यात्रा—हाहाकारी बीतत आवै—५९॥ अथवा—डंका होत गोलमैं जाय—६०॥ कभीर।

* नीतिहो ते धर्म औ सकल सिद्धि

* ब्रह्मावर्त (जिला कानपूर) निवासी श्री राधेलालजी शुक्ल (जो राधे कथन के नाम से प्रसिद्ध हैं) जैसे कविता के बड़े भारी रसिक हैं वैसेही नीति विद्या के भी महान वेत्ता हैं

नीतिही ते नीतिहि ते आदर सम्मान सोच पाइए । नीति ते अनीति छूटै नीतिही ते सुख लूटै नीति लिए बोले भले वकताकहाइए ॥ नीतिही ते राज राजै नीतिही ते पातसाही नीतिही लिए ते नवखंड जस गाइए । छोटन को बड़ो करै बड़े महा बड़े करै ताते सब ही को राजनीति पढ़ो चाहिए ॥ १ ॥

ध्रुवाष्टक

श्री मन्महाराज विश्वनाथ सिंह जू देव
(रीवां के स्वर्गवासी महाराज) कृत

जो बिन कामहि चाकर राखत ऐन अनेक वृथा बनवावै । आमद ते अधिको करै खर्च रिनै करि ब्यौहरै ब्याज बढ़ावै ॥ सूझत लेखा नहीं कछुऐ नहिं नीति की रीति प्रजानि चलावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै वह भूपति के घर दारिद आवै ॥ १ ॥ निश्चय धर्म विचार भयो दबि भाइन भृत्यनि नाहिं चलावै । मंत्रिय आदि सुलच्छन हीन औ आलसी होय सु चाह बढ़ावै ॥ मानि सकोच करै ब्यवहार वृथाही इनाम की रीति बढ़ावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै वह भूपति ना कबहूं कल पावै ॥ २ ॥ नारिन की जु सुचाह करै अरु भाइन मंत्री स्वतंत्र बनावै । बैर के चाकर राखि रहै औ अधर्म की राह सदा मन लावै ॥ मंत्री कह्यो हित मानै नहीं अरु साहु को सासन नाम न पावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै कछु काल में भूप सु राज गंवावै ॥ ३ ॥ झूठीं सुने तहकीक करै नहिं ओछे न संगति में मन लावै । रीझ पचाय हरै रन को बिसनौ जु अठारही खूब बढ़ावै ॥ ठट्ठा में प्रीति कुपात्र में दान नवीन दुकान गुमान जनावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै अस भूपति ना कबहूं जस पावै ॥ ४ ॥ चाकर दै धन बाचे जोई अठयों तिहि भागहि धर्म लगावै । साह लिए धरै सातयों भाग छठे सुता ब्याह हितै रखवावै ॥ पांचए बित्त बढ़ै धरि चौथ्यहि तीन ते खर्च करै क बढ़ावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै तेहि भूपति भौन न दारिद आवै ॥ ५ ॥ भाइन भृत्यन विष्णु सो रैयत भानु सो शत्रु न काल सो भावै । शत्रु बली से बचै करि बुद्धि औ अस्त्र सों धर्महि नीति चलावै ॥ जीतन को करै केते उपाय औ दीरघ दृष्टि सबै फल पावै । भाखत है बिशुनाथ ध्रुवै नृप सो कबहूं नहिं राज गंवावै ॥ ६ ॥ (शेष आगे)
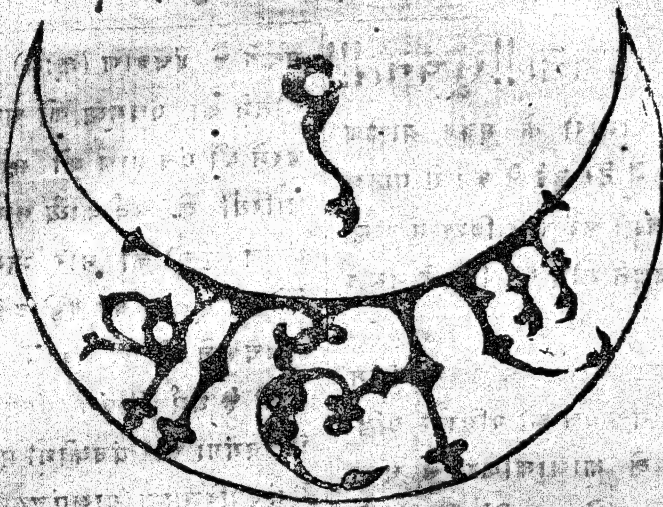
उन्हों ने ब्राह्मण में नित्य इस प्रकार की कविता प्रकाश करना स्वीकृत किया है अतः हम उन का गुण मानते हैं क्योंकि इस से हमारे देश भाइयों को व्यवहारिक शिक्षा की बड़ी भारी आशा है ।

श्रीपण्डित प्रतापनारायणमिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ ।

प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 JULY 5 H. C. } NO. 12
खण्ड ६ { कानपुर १५ जुलाई श्री हरिश्चन्द्र सं० ५ } संख्या १२

नियमावली ।

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा।

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा।

३—विज्ञापन की छपाई) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

ब्रज भूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर।

सूचना! सूचना!! सूचना!!!

मेरी बीमारी के सबब ब्राह्मण निकलने में देर हुई है इस से पाठक महोदय क्षमा करें और विश्वास रक्खें कि अब बहुत शीघ्र सब पिछले नम्बर प्रकाशित हो जायंगे।

मैं कई कारण से हिन्दोस्थान नामक दैनिक पत्र की एसिस्टेंट एडिटरी छोड़ के कालाकांकर से चला आया हूं इस से अब मेरे मित्रों को मेरे साथ पत्र व्यवहार करने में जनरलगंज कानपूर अथवा ब्राह्मण आफिस कानपूर का पता लिखना चाहिए और हिन्दोस्थान के साथ वैसी ही स्नेह दृष्टि रखनी चाहिए जैसी तब रखते थे जब मैं कालेकांकर में था।

प्रतापनारायण मिश्र।

पंच परमेश्वर।

पंचतत्व से परमेश्वर सृष्टि रचना करते हैं पंच सम्प्रदाय में परमेश्वर की उपासना होती है पंचामृत से परमेश्वर की प्रतिमा का स्नान होता है पंचवर्ष तक के बालकों का परमेश्वर इतना ममत्व रखते हैं कि उन के कर्तव्याकर्तव्य की ओर ध्यान न दे के सदा सब प्रकार रक्षण किया करते हैं पंचेन्द्रिय के स्वामी को वश कर लेने से परमेश्वर सहज में वश हो सकते हैं पंचबाण (काम) को जगत जीतने की पंचगव्य को अनेक पाप हरने की पंच प्राण को समस्त जीवधारियों के सर्व कार्य्य सम्पादन की पंचत्व (मृत्यु) को सारे झगड़े मिटा देने की पंचरत्न को बड़े बड़ों का जी ललचवाने की परमेश्वर ने सामर्थ्य दे रक्खी है धर्म में पंच संस्कार तीर्थों में पंचगंगा और पंचकोशी मुसलमानों में पंचपवित्रात्मा (पाकपंजतन) इत्यादि का गौरव देख के विश्वास होता है कि पंचशब्द से परमेश्वर बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रखता है इसी मूल पर हमारे नीति विद्यांवर पूर्वजों ने उपर्युक्त कहावत प्रसिद्ध की है जिसमें सर्व साधारण संसारी व्यवहारी लोग (यदि परमेश्वर को मानते हों तो) पंच अर्थात् अनेक जन समुदाय को परमेश्वर का प्रतिनिधि समझें क्योंकि परमेश्वर निराकार निर्विकार होने के कारण न किसी को बाह्य चक्षु के द्वारा दिखाई देता है न कभी किसी ने उसे कोई काम करते देखा है पर यह अनेक बुद्धिमानों का सिद्धांत है कि जिस बात को पंच कहते वा करते हैं वह अनेकांश में यथार्थ ही होती है इसी से "पांच पंच मिल कीजे काज हारे जीते होय न लाज—" बजा कहे जिसे आलम उसे बजा समझो। ज़बाने खल्क

को नक्कार ए खुदा समझो—इत्यादि वचन पढ़े लिखों के और—पांच पंच के भाषा अमिट होति है—पंचन का बैन कै कै को तिष्टा है—इत्यादि वाक्य साधारण लोगों के मुंह से बार २ पर निकलते रहते हैं विचार के देखिए तो इस में कोई संदेह भी नहीं है कि 'जब जेहि रघुपति करहिं जब सो तस तेहि छिन होय'—की भांति पंच भी जिस को जैसा ठहरा देते हैं वह वैसाही बन जाता है आप चाहे जैसे बलवान धनवान विद्वान हों पर यदि पंच की मरजी के खिलाफ चलिएगा तो अपने मन में चाहे जैसे बन बैठे रहिए पर संसार से आप का वा आप से संसार का कोई काम निकलना असंभव नहीं तो दुष्कर अवश्य हो जायगा हां सब झगड़े छोड़ के विरक्त हो जाइये तो और बात है पर उस दशा में भी पंचभूत मय देह एवं पंच ज्ञानेन्द्रिय पंचकर्मेन्द्रिय का झंझट लगाही रहेगा इसी से कहते हैं पंच का पीछा पकड़े बिना किसी का निर्वाह नहीं है क्योंकि पंच जो कुछ करते हैं उस में परमेश्वर का संसर्ग अवश्य रहता है और परमेश्वर जो कुछ करता है वह पंचही के द्वारा सिद्ध होता है वरंच यदि कहना भी अनुचित नहीं है कि पंच न होते तो परमेश्वर का कोई नाम भी न जानता पृथ्वी पर के नदी पर्वत वृक्ष पशु पक्षी और आकाश के सूर्य चंद्र ग्रह उपग्रह नक्षत्रादि से परमेश्वर की महिमा विदित होती सही पर किस को विदित होती ? अकेले परमेश्वरही अपनी महिमा लिए बैठे रहते सच पूछो तो परमेश्वर को भी पंच से बड़ा सहारा मिलता है जब चाहा कि अमुक देश को पृथ्वी भर का मुकुट बनावें बस आज एक कल दो परसों सौ के जोड़ सद्गुणों का प्रचार कर के पंच लोगों को श्रमी साहसी नीतिमान प्रीतिमान बना दिया कंचन बरसने लगा जहां जी में आया कि अमुक जाति अब अपने बल बुद्धि वैभव के घमंड के मारे बहुत उन्मत्त और हो गई है इस का सिर फोड़ना चाहिए वहीं दो चार लोगों के द्वारा पंच के हृदय में फूट फैला दी बस बात की बात में सब के आपस फूट गए चाहे जहां का इतिहास देखिए यही अवगत होगा कि वहां के अधिकांश लोगों की चित्त वृत्ति का परिणामही उन्नत्यवनति का मूल कारण होता है।

अब जहां में अनेक लोग जिस ढर्रे पर झुके होते हैं उस थोड़े से लोगों का उसके विरुद्ध पदार्पण करना (चाहै अति श्लाघनीय उद्देश से भी

हो पर) अपने जीवन को कंटकमय करना है जो लोग संसार का सामना करके दूसरों के उद्धारार्थ अपना सर्वस्व नाश करने पर कटिबद्ध हो जाते हैं वे मरने के पीछे यश अवश्य पाते हैं पर कब? जब उस काल के पंच उन्हें अपनाते हैं तभी! पर ऐसे लोग जीते जी आराम से छिन भर नहीं बैठने पाते क्योंकि पंच की इच्छा के विरुद्ध चलना परमेश्वर की इच्छा के विरुद्ध चलना है और परमेश्वर की इच्छा के विरुद्ध चलना पाप है जिसका दंड भोग लिए बिना किसी का बचाव नहीं इस में महात्मापन काम नहीं आता पर ऐसे पुरुष रत्न कभी कहीं सैकड़ों सहस्रों वर्ष पीछे लाखों करोड़ों में से एक आध दिखाई देते हैं सो भी किसी ऐसे नए काम की नींव डालने को जिसका बहुत दिन आगे पीछे लाखों लोगों को ध्यान गुमान भी नहीं होता अतः ऐसों को संसार में गिनना ही व्यर्थ है वे अपने बैकुंठ कैलाश गोलोक हैविन बिहिश्त कहीं से आ जाते होंगे हमें उन से क्या? हम संसारियों के लिए तो यही सर्वोपरि सुखसाधन का उपाय है कि हमारे पंच यदि सचमुच विनाश की ओर जा रहे हों तो भी उन्हीं का अनुगमन करें तो देखेंगे कि दुःख में भी एक अपूर्व सुख मिलता है जैसा कि अगले लोग कह गए हैं कि—पंचों शामिल मर गया जैसे गया बरात—(मर्गे अम्बोह जश्ने दारद) जिसके जाति कुटुम्ब होती व्यवहारी इष्ट मित्र पड़ोसी पड़ोसी में से एक भी मर जाता है उसके मुंह से यह कभी नहीं निकलता कि परमेश्वर ने दया की क्योंकि जब परमेश्वर ने पंचों में से एक पंच खींच लिया तो दया कैसी बरंच यह कहना चाहिये कि हमारे जीवन की पूंजी में से एक भाग छीन लिया पर अनुमान करो कि यदि किसी पुरुष के इष्ट मित्रों में से कोई न रहे तो उस के जीवन की क्या दशा होगी क्या उसके लिए जीने से मरना अधिक प्रिय न होगा? फिर इस में क्या सन्देह है कि पंच और परमेश्वर कहने को दो हैं पर शक्ति एकही रखते हैं जिस पर यह प्रसन्न होंगे वही उस की प्रसन्नता का प्रत्यक्ष फल लाभ कर सकता है जो इन की दृष्टि में तिरस्कृत है वह उस की दृष्टि में भी दया पात्र नहीं है अपनेही जी से चाहे कैसाही अच्छा क्यों न हो पर इस में मीनमेख नहीं है कि संसार में उस का होना न होना बराबर होगा मरने पर भी अकेला बैकुंठ में क्या सुख देखेगा इसी से

कहा है—'नियत हंसो जो जगत में, मरे मुक्ति केहि काज'—क्या कोई सकल सदगुणालंकृत व्यक्ति समस्त सुख सामग्री संयुक्त सुवर्ण के मंदिर में भी एकाकी रह के सुख से कुछ काल रह सकता है? ऐसी २ बातों को देख सुन सोच समझ के भी जो लोग किसी डर या लालच या दबाव में फंस के पंच के विरुद्ध हो बैठते हैं अथवा द्वेषियों का पक्ष समर्थन करने लगते हैं वे हम नहीं जानते परमेश्वर ने चार दीन ईमान धर्म कर्म विद्या बुद्धि सहृदयता और मनुष्यत्व को क्या मुंह दिखाते होंगे! हम ने माना कि थोड़े से हठी दुराग्रही लोगों के द्वारा उन्हें मन का धन कोरा पद झूठी प्रशंसा मिलनी संभव है पर इस के साथ अपनी अंतरात्मा (कांग्रेस) के गले पर छुरी चलाने का पाप तथा पंचों का शाप भी ऐसा लग जाता है कि जीवन को नर्क मय कर देता है और एक न एक दिन अवश्य भंडा फूट के सारी शेखी मिटा देता है यदि ईश्वर की किसी हिकमत से जीते जी ऐसा न भी हो तो मरने के पीछे आत्मा की दुर्गति दुर्नाम अपकीर्ति एवं संतान के लिए लज्जा तो कहीं गई ही नहीं क्योंकि पंच का वैरी परमेश्वर का वैरी है और परमेश्वर के वैरी के लिए कहीं शरण नहीं है—राखि को सकै राम कर द्रोही—पाठक! तुम्हें परमेश्वर की दया और बड़ों बूढ़ों के उद्योग से विद्या का अभाव नहीं है अतः आंखें पसार के देखो कि तुम्हारे जीवन काल में पढ़ी लिखी दृष्टि वाले पंच किस ओर झुक रहे हैं और अपने ग्रहण किये हुए मार्ग पर किस दृढ़ता धीरता और प्रफुल्लितमता से जा रहे हैं कि थोड़े से विरोधियों की गाली धमकी तो क्या वरंच लाठी तक खा के हतोत्साह नहीं होते और स्त्री पुत्र धन जन क्या वरंच आत्म विसर्जन तक का उदाहरण बनने को प्रस्तुत हैं क्या तुम्हें भी उसी पथ का अवलम्ब न करना मंगलदायक न होगा? यदि बहकाने वाले रोचक और भयानक बातों से लाख बार करोड़ प्रकार समझावें तो भी ध्यान न देना चाहिए इस बात को यथार्थ समझना चाहिए कि पंचही का अनुकरण परम कर्तव्य है क्योंकि पंच और परमेश्वर का बड़ा गहिरा सम्बन्ध है बस इसी मुख्य बात पर अचल विश्वास रख के पंच के अनुकूल मार्ग पर चले जाइये तो दो ही चार मास में देख लीजिएगा कि बड़े २ लोग आप के साथ बड़े स्नेह से सहानुभूति करने लगेंगे और बड़े२ विरोधी बड़े साम दाम दंड भेद से भी आप का

कुछ न कर सकेंगी क्योंकि सब से बड़े परमेश्वर हैं और उन्हीं ने अपनी बड़ाई के बड़े २ अधिकार पंच महोदय को दे रक्खे हैं ।

अतः उन को चाहिये उन के हितैषी उन के कृपापात्र जो कभी कहीं किसी के द्वारा वास्तविक अनिष्ट नहीं हो सका इस से चाहिए इसी प्रण भगवान पंच स्वरूप का स्मरण कर के पंच परमेश्वर के हो रहिए तो सदा सर्वदा पंच पांडव की भांति निश्चिन्त रहिएगा ।

प्राप्त

हिन्दी भाषा की अवनति ।

प्यारे पश्चिमोत्तर देश निवासियो ! हिन्दी भाषानुरागियो ! देशहितैषिता का मद रखने वालो ! मातृ भाषा के प्रेमियो ! क्या कर रहे हो, किस उधेड़बुन में लगे हो, इस वर्ष तुम्हारे प्रान्त में नेशनल कांग्रेस का अधिवेशन नहीं होने वाला है कि जिस के व्यय के लिये चंदा संग्रह कर रहे हो, कोई दूसरा सामाजिक विषय भी उपस्थित नहीं है, कि जिस की सिद्धि के लिये उद्योगवान हो रहे हो, प्रतिरूपक प्रणाली को भारत में प्रचार के लिये, ब्रैडलाबिल की पुष्टि निमित्त जहां तहां लोगों का हस्ताक्षर नहीं करा रहे हो, कोई कथित अपर पोलिटिकल विषय भी नहीं देख पड़ता है, कि जिस में सर्व प्रकार से लगे हुये हो, फिर आश्चर्य है कि तुम्हारी मातृ भाषा गला फाड़ फाड़ कर रो रही है, और तुम कान बंद किये हुये पड़े हो, तुम्हारी प्यारी भाषा नागरी नष्ट प्राय: हो रही है, पर तुम अचेत हो, वह उपाय हो रहा है कि जिस से हिन्दी भाषा का संसार में लेश न रह जावे, पर तुम किं कर्तव्य विमूढ़ हो रहे हो, वह युक्ति सोची गई है कि तुम्हारी गुन आगरी नागरी की भाविनी उन्नति शेष होती जाती है, पर तुम चुप हो कुछ करना नहीं चाहते हो ।

प्रयाग की भाषा हितैषिणी सभा ने प्रत्येक भाषा समाचार पत्रों में हिन्दी का दुःख प्रगट किया, अनेक देश हितैषियों मातृ भाषा प्रेमियों ने इस विषय में लेखनी उठायी, बहुत कुछ लिख डाला, समाचार पत्रों ने भी येनकेन प्रकारेण कुछ लिखा, पर खेद है कि तुम्हारा ध्यान इस ओर आकर्षित नहीं होता है, तुम्हारा मन इस कार्य्य में नहीं लगता है । यद्यपि हम इस बात को निश्चय कह सकते हैं, और इस में कोई सन्देह भी नहीं है, कि समाचार पत्रों का जो कुछ

कर्त्तव्य इस काल में है उस को वह सर्वथा भूले हुये हैं, जो कुछ इस समय कार्य्य में उन को करना चाहिये, उस को वे बिल्कुल नहीं करते हैं। हिन्दी भाषा हितैषियों ने दो एक लेख लिख कर अपने कर्त्तव्य को भुला दिया, अब इस ओर ध्यान देना छोड़ दिया। प्रयाग सभा ने केवल कुछ मन्तव्य छपा कर अपने उद्देश्य को स्मरण न रक्खा, जो कुछ उस को करना चाहिये, उस का एक देश भी पूरा न किया। तथापि कहा जा सकता है कि उन लोगों ने कुछ किया, पर हाय! बड़े संताप की बात है कि तुम लोगों (पश्चिमोत्तर देश निवासियों) के कान पर चिंउटी तक न चली, और तुम लोगों ने अब तक इस ओर भूलकर भी भ्रूक्षेप न किया।

पत्थर भी जो जड़ है हिलाने से हिल जाता है, वृक्ष के पत्ते भी जो वाचा शक्ति विहीन हैं, वायु लगने से खड़खड़ करने लगते हैं, पृथ्वी के हृदय में भी युक्ति करने से अंकुर उत्पन्न होता है, पर आश्चर्य है कि तुम हिलाने से भी नहीं हिलते, अत्यन्त वायु संसर्ग से भी नहीं जिह्वा हिलाते, सदुपदेशों और अनेक युक्तियों के करने से भी तुम्हारे हृदय में देश हित का अंकुर उत्पन्न नहीं होता। सोया हुआ जगाने से जाग जाता है, पर तुम जगाने से भी नहीं जागते। क्या सचमुच ऐसा होहै, वास्तव में यह बातें तुम लोगों में हैं। प्यारे! यह कैसी बात है, इस को छोड़ो, तनिक अपनी अवस्था को विचारो, तो आशा है कि आप ही तुम्हारे हृदय में एक ऐसी ज्वलन्त ज्योति का प्रकाश होगा, कि जिस से पश्चिमोत्तर देश का समस्त अंधकार दूर हो जावेगा। कुछ करने से ही कुछ होता है, जब तुम कुछ करोगेही नहीं तो बतलाओ कि फिर क्या होगा। ऐसा कोई इतिहास नहीं है जो उनलोगों की अवनति कूप का मंडूक न बतलाता हो, जिन्हों ने उद्योग करना नहीं सीखा, अथवा जिन को अपनी मातृभाषा का प्यार नहीं है।

बंगाल यूनीवर्सिटीने बंगला भाषा का सत्कार किया है, इसी प्रकार अपर यूनीवर्सिटियों ने भी प्रान्तीय भाषा को आदर दिया है, पर आप को प्रयाग यूनीवर्सिटी ने आप की प्यारी मातृभाषा को कान पकड़ कर बाहर कर दिया, उस को अपने अधिकार में स्थान न दिया, और इस प्रकार आप लोगों का सर्वस्व हरण कर लिया, व आप की अवनति का बीज चिरकाल के लिये बो दिया। आज यदि बंगाल में ऐसा हुआ होता, बंगाली क्या न

कर डालते, मदरास या बम्बे में ऐसा कोई करता, तो महाराष्ट्र हाहाकार मचा देते, पर हाय अत्यन्त दुःख की बात है कि तुम लोगों से कुछ नहीं बन पड़ता है, यहां तक कि रोना भी नहीं आता है।

तुमारी प्यारी भाषा किसी भाषा से किसी बात में कम नहीं है, भाषा में जो जो गुण होने चाहिये वह सब इसमें उपस्थित हैं, सौंदर्य्य मनोहरतादि आभूषणों से जैसी अपर सम्पन्न भाषायें सज्जित हैं, वैसी ही यह भी सजोहुई है, साहित्य, विज्ञान, नीति, दर्शन, इत्यादि सभी विषय के ग्रंथ इसमें मिलते हैं, फिर क्या कारण है कि प्रयाग यूनीवर्सिटी के प्रधानों ने इस को अपने अधिकार से निकाल बाहर किया, इस का जहां तक मैं समझता हूं यही कारण है, कि उन लोगों ने यह बात भली भांति जान रक्खी है, कि हिन्दी भाषा का समादर करने वाले पश्चिमोत्तर देश में इतने थोड़े हैं जो अंगुलियों पर गिने जा सकते हैं, यदि इस को दूसरे शब्दों में कहिये तो यों कहना चाहिये कि, उन को इस बात का पूरा ज्ञान है कि पश्चिमोत्तरदेश निवासियों में से ऐसे बहुत ही थोड़े हैं जिन को अपनी मातृ भाषाका प्यार है। मैं समझता हूं कि उन का यह विचार बहुत ठीक है, क्योंकि यदि ऐसा न होता, तो पश्चिमोत्तर देश वासी इतनी असावधानी कदापि न करते, कि उन की मातृ भाषा को धीरे धीरे सातवीं कक्षा से भी निकाल देने की आज्ञा प्रचार हो जाती। पर यह बड़ी हृदय विदारक बात है, बड़े शोक की प्रति मूर्त्ति है, यदि अब भी तुम लोग अपने उक्त कलंक को न दूर करोगे, तो प्यारे पश्चिमोत्तर देश वासियों हम पुकार कर कहते हैं, कि तुमारी अवनतिका ठिकाना न रहेगा, प्यारे उठो, उठो, सावधान हो, मातृभाषा का वह प्रेम दिखलाओ, कि बिरोधियों को तुमारे प्रतिकूल कहनेका अवसर शेष न रहे। अभी बहुत नहीं बिगड़ा है, कुछ करने से कुछ होसकता है, पर अब वह समय नहीं है कि कागज के घोड़े दौड़ा दो, लेखों की भर मार कर दो, अब वह समय है, कि कमर कस कर उठ खड़े हो, और कर दिखलाओ।

लोग कहा करते हैं कि पश्चिमोत्तर देश निवासी किंकर्तव्य विमूढ़ हैं, इन में उत्साह और अध्यवसाय आदि सद्गुण नहीं हैं, दासत्व का इन पर इतना प्रभाव हो गया है, कि इन के रुधिर की गति मन्दमन्द होती है, तरलता का उसमें लेश तक नहीं है,

जिस के जी में जो आवे उस को वह कर डाले, पर यह बोलना तक नहीं जानते, पर प्यारे हम चिल्ला कर कहते हैं कि यदि उद्योग कर के और पौरुष दिखला कर डूबती हुई हिन्दी को तुमलोग रक्खो, तो तुमारे प्रतिपक्षियों का वह सब कहना धूल में मिल जायगा, और तुमारी वह सुख्याति होगी, जो कथन से बाहर होगी, पर यदि तुम अब को भी चूक गये, और कुछ न कर सके, तो हम क्या कहें कि संसार तुम को क्या कहेगा, कहां तुम यह उद्योग करते थे कि सरकारी कचहरियों में हिन्दी भाषा का प्रचार करावें, कहां यदि तुम से इतना भी न बनेगा कि डूबती हुई हिन्दी को हाथ पकड़कर निकाल लो, तो बड़े लज्या की बात होगी, और तुम से बढ़ कर अनुद्योगी संसार में कोई निपत न होगा।

श्रीयुत राधाचरण गोस्वामी कहां हैं, पं० अम्बिकादत्तव्यास क्या कर रहे हैं, बाबू काशीनाथ खत्री, बाबू राधाकृष्ण दास बाबू बद्रीनारायण चौधरी बाबू भगवानदास वर्म्मा किन नींदों सो रहे हैं, पं० रामशंकर व्यास, पं० प्रताप नारायण मिश्र, पं० विजयानंद, पं० बालकृष्णभट्ट, पं० रुद्रदत्त, पं० शिवनारायण मिश्र, पं० श्रीधरपाठक किस उधेड़ बन में लगे हुए हैं, बाबू रामदीन सिंह, बाबू रामकृष्ण वर्मा, बाबू गोकुलचन्द, क्या सोच रहे हैं पं० गोपीनाथ, पं० बालमुकुन्द, पं० सदानन्द मिश्र, किस का मुंह देख रहे हैं, श्रीमान राजा रामपालसिंह, राजा लक्ष्मण सिंह, महाराज रावणेश्वर प्रसाद सिंह, राजा रामप्रतापसिंह, किधर दत्त चित्त हैं, इसी प्रकार अपर हिन्दी भाषा हितैषी, स्वदेशप्रेमी, किस कार्य्य में संलग्न हैं, जो इधर मनो निवेश नहीं करते, अपनी मातृभाषा पर दृष्टि नहीं डालते, हाय! हम कैसे कहें, [illegible] क्या कहें, कि जिस से आप सब लोगों का ध्यान इधर वैसा आकर्षित हो जैसा चाहिये, और आप लोग ऐसा उद्योग कीजिये कि जिससे इस अनाथा हिन्दीभाषा को शरण मिले, हम क्या कहेंगे, आप लोग स्वत: इस महा कुरोग से परिचय रखते हैं अतएव दृढ़ विश्वास है कि उचित औषध करने का प्रयत्न अवश्य कीजियेगा।

उपसंहार में हमारा समस्त स्वदेश प्रेमियों और समाचार पत्र के संपादकों, हिन्दी भाषानुरागियों, और देशदशा दर्शकों से यह निवेदन है कि आपलोग ऐसा उद्योग कीजिए कि जिस में पश्चिमोत्तर देश के प्रत्येक

नगरों और उपनगरों और ग्रामों में नागरी भाषा की दृढ़ता दरसाने के लिये सभायें हों, अच्छे व्याख्यायक लोग जा कर नागरी भाषा का लाभ, उसके [illegible] से पश्चिमोत्तर देश का अनुपकार प्रगट करें, ग्राम ग्राम नगर नगर में निवेदन पत्र प्रेरण करावें और इस प्रकार उस विषय को हस्तगत करें जिस के लिये नागरी भाषानुरागी मात्र लालायित हो रहे हैं। क्योंकि दृढ़ विश्वास है कि जब उस प्रकार से नागरी भाषा के लिये आन्दोलन किया जावेगा, तो अवश्य सुफल होगा। हिन्दी भाषा का विषय ऐसा है कि प्रत्येक धर्म्मसमाज, और आर्य्यसमाज के लिये भी उसकी आवश्यकता है। अतएव समस्त धर्म्मसमाजों और आर्य्यसमाजों एवं उन के उपदेशकों को भी इस ओर पूर्ण ध्यान देना चाहिये। वरन कहा जा सकता है कि कुछ काल के लिये और विषयों को गौण करके इस विषय को मुख्य समझना चाहिये। हम आशा करते हैं कि हमारे इस प्रस्ताव की ओर समस्त कथित सुजन और सभायें अअवश्य ध्यान देंगी।

श्रीयुत भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र जी ने बड़े परिश्रम से और बहुत व्यय करके इसका इतना प्रचार पश्चिमोत्तर प्रदेश में किया था, और यदि वे और कुछ काल जीवित रहते तो स्यात् बहुत कुछ करते। पर खेद है कि वे हिन्दी भाषा का भार पश्चिमोत्तर देश निवासी सज्जनों पर छोड़ कर परलोक गामी हुये, और वहां से अब आ भी नहीं सकते। अब इस की उन्नति, अवनति का भार आप लोगों के हाथ में है, चाहे आप लोग इस की उन्नति कीजिये, चाहे अवनति की सरिता में डुबो कर नाश कीजिये। पर हम आशा करते हैं कि आप लोग मुझ अल्प मति की प्रार्थना पर ध्यान दे कर हिन्दी भाषा की उन्नति के लिये अवश्य उद्योग कीजियेगा।

१८/७/९० { आप लोगों का चिरपरिचित
पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय
निज़ामाबाद, आज़मगढ़।

पौराणिक गूढ़ार्थ

(प्रकाशित से आगे।)

११ यमराज का वाहन महिष है अर्थात् जो लोग भैंसा के समान केवल खाने और कीचकादों (विषयवासना) में पड़े रहने ही में प्रसन्न रहते हैं सांसारिक एवं पारमार्थिक कर्तव्यों में मथर २ करते हुए चलते हैं (अग्रसर नहीं होते) थोड़ा सा काम करने पर हांफने लगते हैं (साहस छोड़ बैठते हैं) तथा पराए

सुख दुःख से निश्चिंत रह के निर्लज्जता से फूले रहते हैं अथच अपनी भी देह (खल) खोद २ कर खाने वालों से असावधान बरंच सुखित रहते हैं उन पर मृत्यु का देवता सदा सवार रहता है अर्थात उन के जीवन उद्देश्य मृत्यु ही है जभी मर गए तभी और ऐसों हो के लिए ईश्वर न्यायी है नोचेत् वह परम कृपालु अपने सेवकों के छोटे २ कर्मों का विचार किया करें तो किसी को कहां ठिकाना है ? पर ऐसे मैंमानंदनों के लिए मरना और न्याय में फंसना हो तो सहस्रों आलसी इन्हीं का आचरण ग्रहण कर बैठें क्योंकि कुछ करना धरना सब का काम नहीं है इसी से ऐसों के शासन और इन की दशा के द्वारा दूसरों को उपदेश मिलने के आशय से पौराणिक महात्माओं ने भगवान का नाम न्यायकारी और प्राणहारी लिखा है।

१२ इन्द्र के सहस्र नेत्र हैं अर्थात राजा ऐसा होना चाहिए जो सब प्रकार के लोगों के समस्त भाव पर सदा दृष्टि रख सके जिस राजा के कान होते हैं आंखें नहीं होतीं अर्थात् जिसने जो कह दिया वही मान लिया स्वयं कुछ न देखा उसका राजत्व चिरस्थायी नहीं रह सकता यही शिक्षा देने के लिए देवराज अर्थात् दिव्य गुण विशिष्ट राजा अथवा विद्वान समूह पर राज्य करने वाले का नाम सहस्राक्ष रक्खा गया है सहस्राक्ष होने का कारण यों लिखा है कि अहिल्या के साथ छल करने के अपराध में गौतम जी ने जब शाप दिया तो इंद्र को बड़ा खेद क्षोभ और लज्जा हुई उसके निवारणार्थ बृहस्पति जी ने तप व्रत पूजनादि करा के उन चिन्हों को नेत्र बनादिया इस आख्यान पर शास्त्रार्थी लोग चाहे जो तर्क वितर्क किया करें पर सच्चे आस्तिक अवश्य मानेंगे कि सच्चे जी से [illegible] सर्व शक्तिमान की दया से ऐसा क्या इस से भी अधिक अघटित घटना हो सकती है एवं दोष भी गुण हो जाते हैं पर यह सच्चे विश्वास का विषय है जो लेखनी की शक्ति से दूर है इस से हम केवल लौकिक शिक्षा देते हैं कि इन्द्र की उक्त कथा से यह बात ध्वनि निकलती है कि इस प्रकार के लोग यद्यपि गौतम सरीखे धर्माचारियों के द्वारा शापभागी और पीछे से अपने कृत्य पर अनुतापकारी होते हैं किन्तु सहस्र नयन अर्थात् दूरदर्शी और अनुभवी अवश्य हो जाते हैं जैसा कि नीतिज्ञों ने 'देशाटनम्पण्डित मित्रताच' इत्यादि वाक्यों में कहा है इस पर यदि कोई प्रतिमा पुराणादि के छिद्रा-

न्वेषी कहैं कि वाह रे पौराणिकों के उपदेश तो हमारे पास यह उत्तर विद्यमान है कि किसी पुराण में इंद्र की कथा के साथ यह नहीं लिखा कि उन्हों ने दुराचार किया अथवा किसी को करना उचित है फिर पुराणों को वा इंद्र को दोष लगाना अपनी बुद्धिमानी दिखलानामात्र है यदि मान ही लें कि देवराज का विचार ऐसा ही था तौ भी पुराणकर्ता दोषी नहीं ठहर सकते वरंच उनकी अनुभवशीलता विदित होती है अर्थात् उन्हों ने यह दिखाया [illegible] श्रीरामचन्द्र ऐसे ईश्वर तथा युधिष्ठिर [illegible] धर्मावतारों को छोड़ के राज्याभिमानी लोग यहां तक कि देव लोक तक के राजा बहुधा ऐसे ही होते हैं (यह बात सब कहीं के इतिहासों में प्रत्यक्ष है) इस से शुद्ध धर्म जीवन के प्रेमियों को राज्य तृष्णा त्याज्य है यदि आप कहैं कि इन्द्र निर्दोष थे तो गौतम ने शाप क्यों दिया तो हम कहेंगे कि पुराणों में गौतम को कहीं नहीं लिखा कि ईश्वर हैं फिर उन का धोखा खाना कौन आश्चर्य है ? धर्मात्माओं को जिस पर ऐसी शंका होती है उस पर क्रोध आता ही है वरंच 'क्रोधोपि देवस्य वरेण तुल्यः' के अनुसार उन्हों ने अहिल्या को श्रीरामचरण पंकज रज प्राप्ति के योग्य और देवेन्द्र को सहस्र लोचन बना दिया इस से पुराण निंदकों का यह कहना व्यर्थ है कि उन में देवताओं और ऋषियों की निंदा लिखी है यह अपनी अपनी समझ का फेर है।

सहस्र नयन (इन्द्र) का शस्त्र वज्र है जिस को सब जानते हैं कि बड़े २ पर्वतों तक को चूर्ण कर सकता है और वुह दधीच मुनि की हड्डियों से बना हुआ है जो उक्त मुनीश्वर ने देवताओं की याचना से संतुष्ट हो के अपने देह का स्नेह छोड़ के दे दी थीं इस आख्यान का यह अर्थ है कि संसार से निःस्पृह [illegible] और धर्म के लिये जीवन को उत्सर्ग कर देने वाले महात्माओं की हड्डियां (आहार विहार त्याग देने से रक्त मांस रहित शरीर) वज्र हैं जो उन्हें तोड़ना चाहता है (सताने का उद्योग करता है) वुह आप अपने शस्त्रों (जीवन रक्षणोपयोगी उपायों तथा पदार्थों) का नाश करता है—तुलसी हाय गरीब की हरि तें सही न जाय—पर जो उन हड्डियों को प्राप्त कर लेता है अर्थात् धर्मानुरागियों की सेवा सुश्रुषा से इतना प्रसन्न रखता है कि वे प्रीति की उमंग में अपनी देह तक देने पर प्रस्तुत हो जायं वुह इन्द्र के समान सौभाग्य शाली और अजय हो सकता है। [शेष आगे

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "खड्गविलास प्रेस" बांकीपुर में मुद्रित हुआ।

प्र मयव परिश्रम :

शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥
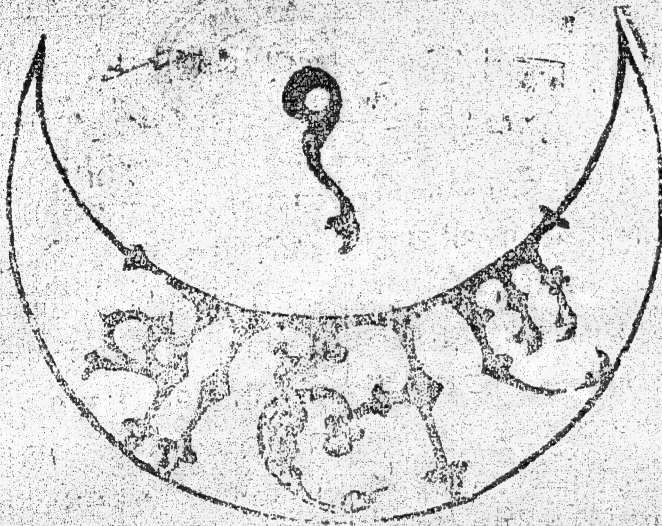
मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ट ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा । न्यायात्पथ: प्रविचलन्ति पदन्न धीरा: ।

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 June H. C. 6 } No 11

खण्ड ६ { कानपुर १५ जुन हरिश्चन्द्र सं० ६ } संख्या ११

नियमावली

—o—

१–वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का =) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२–ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) स० लिया जायगा ॥

३–बिज्ञापन की छपाई –) प्रति पंक्ति लियाजायगा विशेष पूछनेसे मालूम होगा

४–बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिना मूल्य पत्र न दिया जायगा ॥

५–लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धं पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर

रथयात्रा ॥

हमारे यहां प्रायः सभी बड़े २ नगरों में वैदिक और जैन लोग प्रति वर्ष नियत तिथियों पर श्री ठाकुर जी का रथ यथा सामर्थ्य बड़ी धूम धाम से निकाला करते हैं यह रीति कब से प्रचलित है इसका ठीक पता कोई नहीं लगा सका सिवा इसके कि बहुत पुरानी यह कहदें रीति है कि देशी इतिहास लेखक जो सृष्टि का आरम्भ अनुमान छः सहस्र वर्ष से समझते हैं वेही ऐसी २ बातों के खोज में लगे रहें कि सुवर्ण पहिले २ कब निकला क्योंकर निकला किसने निकाला शस्त्र पहिले पहिल किसने किस प्रकार क्योंकर कब बनाये इत्यादि पर हमें इन बातों के खोज की आवश्यकता नही है क्योंकि हम तो इसके मानने से नकार नहीं कर सकते बरंच कोई वाद करने पर प्रस्तुत हो तो समझा सकते हैं कि जबसे अनादि ईश्वर का अस्तित्व है तभी से उसके सृजन पालन प्रलयादि काम भी हैं नहीं तो हमारी आस्तिकता में यह बड़ा भारी दोष आ लगेगा कि अमुक समय पर नित्य कैरस परमात्मा को अमुक सामर्थ्य न थी इसी प्रकार हमारा इतिहास इस बात की कल्पना का मुहताज नहीं है कि सब से पहिले (यद्यपि समुद्र की लहरों की भांति सब से पहिले कहना असङ्गत है किंतु मोटी भाषा में कह लेते हैं) भारत में आर्यों के अतिरिक्त और कोई जाति बसती थी वा किसी उपयोगी पदार्थ के व्यवहार में हमारे पूर्वज अक्षम थे हां समय के साथ २ लोगों की चाल ढाल वस्तुओं के रूप रङ्गादि में परिवर्तन सदा सब कहीं होता रहता है पर यह असम्भव है कि कोई सभ्य देश जिसे भोजनाच्छादन के लिये दूसरों का मुंह न देखना पड़ता हो अपने निर्बाह के लिये दूसरों की बोली सीखना अत्यावश्यक न हो वह अपने व्यवहार योग्य समयोपयोगी वस्तु अथवा नियम न बना सका हो इस न्याय के अनुसार यदि कोई पूछे कि रथयात्रा की रीति कब से है तो हम छुटतेही उत्तर देंगे कि सदा से अर्थात् जब से यहां आर्य जाति का राज्य है तब से नियत समयों पर प्रजा को दर्शन द्वारा प्रमुदित करने के लिये संसार को अपना वैभव दिखाने के लिये राज्य की पर्यालोचना करने के लिये अथवा शत्रुओं का दमन करने के लिये राजा महाराजा अथवा रामचन्द्रादि दिव्यावतार ऐश्वर्य प्रदर्शनक अवयवों समेत रथ पर चढ़ के बिचारा किया करते थे जिसका अनुसरण

जब कि अपने यहां की बातों से म मता हो घर की भलाई में बुराई ढूंढने का दुर्व्यसन न हो अच्छे उपदेश जहां से जिस प्रकार मिले ढूंढ निकालने में रुचि हो और मनो मंदिर कुतर्कों की नृत्य भूमि न बन गया हो तो सुनिए॥

१ काली और कृष्ण दोनों एकही है जो राधा जी के बनमाली हैं वही अयन घोष की रण कालीहैं पल भरमें मदनमनोहर मुरलीधर रणरंगिनी हो जातेहैं तथा पलही भर में दैत्य संहारिणी बृन्दाबन बिहारी बनजाती हैं अत: वैष्णवों और शाक्तोंका भेद बुद्धिसे आपस में झगड़ना ऐसाहै जैसा दो सहोदर लड़ें और वह उसके बापको गाली दे वह उसके पिता को कुबाच्य कहे॥

२ अप्रतर्क्य परमेश्वर परम सुन्दर भी है महा भयंकर भी है मनो मुकुर में अपनी मनोबृत्ति का जैसा मुंह बना के देखोगे वैसाही देख पड़ेगा जैसे के हरि तैसा है—फूंक २ पांव धरने वाले आचारी भी उसी के हैं उनका भरण पोषण और उद्धार उसी के हाथ है तथा स्वतंत्राचारी पंचमकारी भी उसी के हैं॥

३ राधा और कृष्ण एक हैं अभी मान के समय उनके चरणों पर वे मुकुट रखते थे अभी काली स्वरूप में उनकी चरण बन्दना वे कर रहो हैं इससे इनके उपासकों को सीखना चाहिये कि जो प्रतिष्ठा जो अधिकार जो गौरव पुरुषों का है वही स्त्रियों का भी है॥

४ अयन घोष खड्ग खींचे हुए शिरच्छेदन करने आया था पर आते ही पानी हो गया क्यों ? कहीं सच्चे निर्दोष निर्भ्रम प्रेमाराधकों पर तलवार चल सक्ती है ? हां इतना बहुत है कि शत्रु अपना पौरुष दिखलालें पर वास्तव में कर कुछ नहीं सकते! या यों कहो-ज्ञानी मूढ़ न कोय। जब जेहि रघुपति करहिं जस सो तस तेहि छिन होय—तलवार दिखाने वालों से पल भर में दण्डवत कराना और महा हीन दीनों को खड्गधारण के योग्य बना देना सर्व शक्ति मान के बायें हाथ का खेल है क्योंकि वह कर्तुं मकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ है॥

यदि इसे कथा न समझ के कवियों की कल्पना मात्र मानिये तौभी

५ प्रेमदेव श्री कृष्ण हैं और प्रेमिक की मनोबृत्ति राधा जी हैं जो निर्विघ्न स्थान पाते ही अपने प्यारे के जीवित सम्बन्ध में निमग्न होजाती है और संसार अयन घोष है जो नहीं चाहता कि मेरा सानिध्य छोड़ के कोई दूसरी ओर जाय इससे ऐसे लोगों के बिनाशार्थ नाना भांति के कष्ट एवं अभाव रूपी शस्त्र लेके दौड़ता है पर क्या

प्रेमिक इससे भयातुर होके अपने प्रेमाराधन से विमुख होजाते हैं? नहीं वे देखते हैं कि संसार के खड्ग से हमारे प्रेमाधार की तलवार अधिक तीक्ष्ण है और संसार स्वयं यह देख के लज्जित एवं विस्मित होजाता है कि यह जिसका आश्रित है उसी का आश्रित मैं भी हूं फिर भला इसका मैं क्या कर सकूंगा !

६ धर्म श्रीकृष्ण है और उत्साही पुरुष की मनसा राधा है जब उत्साही पुरुष धर्म में संलग्न होता है तब सांसारिक प्रलोभन शस्त्र धारण कर के उसे च्युत करने के विचार से भय और लालच दिखलाता हुआ आता है पर धार्मिक पुरुष जब विचार के देखता है तो निश्चय करलेता है कि मेरे अनुष्ठान में जितने आनन्द हैं उनके आगे इतर आमोद प्रमोद सब तुच्छ हैं एवं दूसरे मार्ग का अवलम्बन किये बिना जो भय दिखाई देते हैं वे वास्तव में कुछ नहीं हैं केवल हमारी परीक्षा के लिये धुवां के धौंरहर मात्र है इनसे डर जाना वा ललचा उठना आगे के लिये वञ्चित रहना है बस यह सोचते ही समस्त प्रलोभन अदृश्य होजाते हैं और निर्विघ्न धर्मानन्द रह जाता है वरञ्च विघ्नकारक लोग वा पदार्थ स्वयं उसे योग देते हैं जैसे अन्त में घोष स्वयं काली पूजा में सम्मिलित हुआ था ।

७ कांग्रेस श्रीकृष्ण है और प्रजाहितैषी देश भक्तों की जनता श्री राधा है अथच विरोधियों का दल अयन घोष है जो देखता है कि इस संयोग में हमारे लिये कुयोग है न ठकुर सुहाती कह के मनमानी पदवी पाने का योग है न अपनी इच्छाही को शासन प्रणाली का मूल मंत्र बना के काले कलूटे मूर्ख गुलामों पर स्वेच्छाचारिता का ढङ्ग जमाने का सुयोग है धीरे २ सब की आंखें खुलती जाती हैं सब अपना स्वत्व पहिचानते जाते हैं बड़ी २ बातों की पुकार सात समुद्र पार पहुंच रही है तो घोष महाशय रोष पूर्ण होके बाणी कृपाण धारण करते हैं और चाहते हैं कि कृष्ण का शिर उड़ा दें फिर तो राधा हमारी हई है पर राधा जी देखती हैं कि न्याय के आगे स्वेच्छाचार देशभक्ति के आगे स्वार्थपरता महारानी के प्रबल प्रताप के सन्मुख हमारा दुःख क्लेश निरा निर्मूल है इससे धैर्य के साथ अपने इष्ट साधन में लगे रहना चाहिये यदि घोष को बुद्धि हो तो देख सक्ता है कि जिस महाशक्ति (विक्टोरिया) का आश्रय मुझे है उसी का सहारा इन्हें भी है जो मेरी सुखदातृ दुःख

हतृं है वही इसकी भी है तो क्या ही कहना है दोनों ओर आनन्द है नोचेत् बुद्धि का भ्रम है जगदम्बा एक की नहीं है काले गोरे बुरे भले निर्धन धनी सभी उसी की प्रजा है ॥

क्रमी २

महात्मा कबीर के कुछ दोहों पर कुण्डलिया ॥

श्री पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय सङ्केत नाम (हरि औध) निज़ामाबाद निवासी लिखित ॥

मङ्गलाचरणम् ॥

दोहा ॥

लोकोत्तर लावन्यनिधि अवपु स वपु अनमर्म्म । जयति अलौकिक देव कोउ करन अलौकिक कर्म ॥

कुण्डलिया ॥

यद्यपि हम कायर कुटिल खरे चाकरी चोर । तदपि कृपा न छोडियो चितै आपनी ओर । चितै आपनी ओर बड़ेन की है यह रीती । तजि औगुन गन करहिं नीच हूं पै अति प्रीती । सबै कहत हरि औध रावरो प्रभुजू तद्यपि । अति पामर अतिमन्द पतित पुङ्गव हम यद्यपि ॥ १ ॥ गुरू बिचारा क्या करे जो हिरदा भया कठोर । नौ नेजे पानी चढ़ा तऊ न भीजी कोर । तऊ न भीजी कोर रहे जैसे वो तैसे ॥ घन सों जग हित होत पै रहत ऊसर वैसे । होय न कारो बसन सेत कौनिहूं प्रकारा । करै कहा हरि औध क्रूर हित गुरू बिचारा ॥२॥ बालू जैसी करकरी उज्जल जैसी धूप । ऐसा मीठा कुछ नहीं जैसी मीठी चुप । जैसी मीठी चुप सों चहू नहिं कछु तैसो । रवि समान निकलंक मोद बरधक ससि जैसो । पूरन हित मन काम सरम चिन्ता मनि मालू । पै प्रविसत हरि औध होय इमि जिमि जल बालू ॥३॥ जिन खोजा तिन पाइयां गहिरे पानी पैठ । हों बौरी ढूंढ़न गई रही किनारे बैठ । रही किनारे बैठि पैठि नहि खोजन लागी । करि अमूल अनुमान कूलहूं सों उठि भागी । तजे बिना हरि औध तर्क त्रुटि सिध पाई किन । लह्यो सत्य सुख सोय जुगुत करि जतन कियो जिन॥४॥ नव द्वारे का पींजरा तामें पंछी पौन । रहिबे को अचरज्ज है गये अचम्भा कौन । गये अचम्भा कौन पौन पच्छी है स्याना । नव द्वारे मुख आदि तथा द्वौ दृग श्रुति नासा । तन पञ्जर में खुले सदा हरि औध निहारे । खगहित एक अनर्थ करिय का जहं नव द्वारे ॥५॥ गये अचम्भा कौन अग्र छन गत जल केरो । गिरिबो अजगुत कहा ठहरिबो ही तेहि केरो । रची बालुका भीत ढहब

हरि औध न बंचन। अति ही अचाच अहै खरो रहिबो तेहि इक छन ॥ ६॥ द्वार धनी के परि रहे धक्का धनी को खाय। कबहूं धनी निवाजई जो दर छाड़ि न जाय। जो दर छाड़ि न जाय एक दिन तो असहवैं है। ह्वै है धनी दयाल सबै दिन के। दुख खवै है। मिलि है सोइ नहिं एक मनोरथ है जे जी के। परो रहे हरि औध कैसहूं द्वार धनी के ॥७॥ साहब के दरबार में कमी काहु की नाहिं। बन्दा मौज न पावई चूक चाकरी माहिं। चूक चाकरी माहिं खोट अपनी करनी में। कहा काहि नहिं मिलत जतन कीने धरनी में। श्रम करिकै हरिऔध सदा अपनो हित चाहब। है नर को करनीय रिझ त याही सों साहब ॥८॥ चूक चाकरी माहि सबै है प्रभू के पांही। पै सो तैसो लहै जु जैसो सेवा माहीं। नागर चोरी किये कहा धन को भर बोमा। होय कियेई खरो काज सब ही कछु आसा ॥६॥ चूक चाकरी माहिं किया अपनो सब पावै। जानत सकल जहान बेद हूं यहै बतावै। को कर सों हरि औध आम को कहां सुपासा। बिना किये प्रभु सेव कबौं सुख की नहिं आसा ॥१०॥ मेरा मुझ को कुछ नहीं जो कछु है सो तोर। तेरा तुझको सौंपता क्या लागे है मोर। क्या लागेहै मोर। अहो मुरलीधर प्यारे। जीव पिण्ड धनधाम सबै तव ऊपर बारे। सकल जगत गत बस्तु बिभव सुख है प्रभु तेरा। पै समझत हरि औध मन्द मति है यह मेरा ॥११॥ दुखसुख एक समानहै हरष सोग नहिं व्याप। परउपकार निःकामना उपजै छोह न ताप। उपजै छोह न ताप रोसढिग भूलि न आवै। सदा एक रस सान्त द्रोह नहिं पर सन पावै। निस्कलंक निस्काम निस्कपट निसछल सनमुख। सुगुन संत हरि औध बिदित ए मेटन भय दुख ॥ १२। जो तो को कांटा बोवै ताहि बोव तू फूल। तो को फूल के फूल हैं वाको है तिरशूल। वाको है तिरशूल बचब जामों अति ओखो। पै जो अपकृत करत होत ताको नहिं धोखो। भलो किये हरि औध भलो नहिं करत सु को जो। पै है सोई भली बुरो पै करै भलो जो ॥१३॥ वाको है तिरशूल सुजन समझहु हिय माहीं। जो गुर दीन्हे मरे ताहिं बिष दीजत नाहीं। करसों परसत ही प्रयास बिन मरत अहै जो। को ऐसोहरि औध तासु हितवान गहै जो। १४। वाको है तिरशूल नहीं संसय कछु यामें। प्रगट जगत में सहम शोक बहुधा खल पामें। घन शीतल मारुतहि करत पै घन निदरत सो। यही हेत हरि औध

तुलही होत तपत जो ॥१५॥ दुरबल को न सताइये जाको मोटी हाय। मुई खाल की सांस सों सार भसम ह्वै जाय। सार भसम ह्वै जाय जाय जासु रिस दृढ़ कछु नाहीं। नर की कहा बिसात छार नहिं जो ह्वै जाहीं। हर त्रिशूल हरि चक्र बज्र बज्री अति परबल। सो न करहिं हरिऔध क रत यह हाय जो दुरबल ॥१६॥ या दुनियां में आय के छांड़ि देय तू पेंठ। लेना है सो लेइले उठी जात है पेंठ। उठी जात है पेंठ मानि ले भाख्यो मेरो। नतु पछितैहै अन्त पाइके दुःख घनेरो। उठत उठत लेहैं बिसाहि अति श्रम गुनि या में। द्रुत सुबस्तु हरिऔध लेहि जन या दुनियां में ॥१७॥ उठी जात है पेंठ मिलत सबही कछु जा में। अर्थ धर्म्म कैवल्य काम ग्राहक गनया में। चोखो सोदो करि पेंठ में पेठि मवाया। समझि हिये हरिऔध पेंठ की थित मित माया ॥१८॥ उठी जात है पेंठ गहरु करिबो नहि नीको। सोदो सोई करि होय जासों हित जीको। चूकि गये हरिऔध या समय चूक सवाया। कारज जामें सधै करि सोई तजि माया ॥१९॥ ऐसी बानी बोलिये मन का आपा खोय। औरन को शीतल करै आपा शीतल होय। आपा शीतल होय कोऊ दुख नेक न पावै। जो अपनो अरि होय ताहु को हिय हुलसावै। पर मन मोहन काज सिद्धि है यह जग जैसी। कहत सांच हरिऔध जुगुत कोऊ नहि ऐसी ॥२०॥ दुख में सुमिरन सब करैं सुख में करै न कोय। जो सुख में सुमिरन करै तो काहे दुख होय। तो काहे दुख होय प्रगट लखियत जग मांही। जो संजम नित करहिं होत तिन को दुख नाहीं। दण्ड बिना निज पाठ रखत जो चढ़ि आसन मुख। नहिं पावत हरिऔध सो कबौं ताड़न को दुख। २१ तो काहे दुख होय कहत हम भुजा उठाइ। ताहि कहां दुख होत जाहि जदुनाथ सहाई। जबहीं प्रभु सों होत भूलि भव भोग बहिर मुख। तबहि होत हरिऔध या अधम को अतिही दुख ॥ २२ ॥ एकै साधे सब सधै सब साधे सब जाय। जो तू सींचे मूल को फूले फले अघाय। फूले फले अघाय चित की पूजे आसा। सिगरे कारज सरैं होय सबभांति सुपासा। लहहिं नाहिं कछु जगत मांहिं बहु साधन जेके। लहैं सिद्धि हरिऔध तेई करि साधन एकै ॥२३॥ फूले फले अघाय होय श्रमहू बहु नाहीं। जो तिय पति हित चहत चहैं कुल में सब ताहीं। सरै नहीं कोउ काज किये प्रति जल अन टेकै। तब सर हरिऔध होय जब घन को एकै ॥२४॥

सब आये इस एक मैं डार पात फल फूल। कबिरा पीछे का रहा गहि पकरा जिन मूल। गहि पकरा जून मूल गह्यो जाने मन काही। इन्द्रिन गहिबै हेत होत ता को श्रम नाहीं। है सोयो हरि औध कृशन पद पंकज को जब। अहे कहा पर वाह जो न हम सेये सुरसब। २५ माटी कहै कुम्हार सों तू क्या रूंधै मोहिं। इक दिन ऐसा होयगा मैं रूंधौंगी तोहिं। मैं रूंधौंगी तोहिं कछू बनिहै नहिं तोसो। कहा जानिकै करत अहे रगरो तू मोसों। हाड मांस कच आदि सबै निजमूल उपाटी। ह्वै है क्रम क्रम सों बसुन्धरा मैं मिल माटी ॥२६॥ मै रूंधौंगो नाहिं कहा ता दिन तू करिहै। सुत तिय नात कुटुम्ब मीत कोउ न उबरि है। ह्वै जैहै कछु काल माहिं गहि जग परिपाटी। लखत लखत जग जीव भूमि मैं मिलि जुलि माटी ॥ २७ ॥ पोथी पढ़ि २ जग मुआ पण्डित भया न कोय। ढाई अच्छर प्रेम के पढ़ै सो पण्डित होय। पढ़ै सो पण्डित होय भेद निगमागम बूझै। जानि परै सत असत पंथ परमारथ सूझै। मिटै बाद हरि औध तर्कना निसरहिं थोथी। लहै सोइ बिज्ञान कह्यो जाको गहि पोथी २८। पढ़ै सो पण्डित होय सोइ गुनवन्त कहावै। जेहिं खोजत सनकादि ताहि गहि नाच नचावै। लहै सिद्धि हरि औध कामना बिन सहि थोथी। पावै पद निरबाद प्रसंसत जाको पोथी। २९। चलन चलन सब कोइ कहै पहुंचै बिरलो कोय। एक कनक अरु कामिनी दुर्लभ घाटी दोय। दुर्लभ घाटी दोय पैठि जामें जग माहीं। निकसत कोऊ एक न तह रबहो रहि जाहीं। जिमि पंचार के बिहग जाल गत सफरी को गन। तिमि नर को हरि औध होत या घाटी बित्वलन। ३०। दुर्लभ घाटी दोय महा भ्रम तम सों छायो। ज्ञान दिनेस कलाहिं जासु ढिग जानन आयो। या घाटी सों नहिं निबाह क्यो हूं या दृग बल। बिना खुले हरि औध हृदय के दोहू दृगंचल। ३१। दुर्लभ घाटी दोय निबहिबो जासों केरो। तिन हूं को हरि औध कियो जिन जुगुल घनेरो। याहि डांकि जग माहिं सोई पहुंचत पावन थल। जाको मन कबहूं न होत या घाटों चंचल ३२ चाह घटी चिन्ता गई मनुवा बे परवाह। जाको कछु न चाहिये सो साहन पति साह। सो साहन पति साहै महाराज न को राजा। जो चाहै सो करै सकल करिबो तेहि छाजा। पैसो न रहै रनकहै न कछु ताहि उमाह। जाके हिय हरिऔधहै बसत दुखप्रद चाह ३३ शनैः २

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमत्प्रेस
कालाकांकर में प्रकाशित हुआ
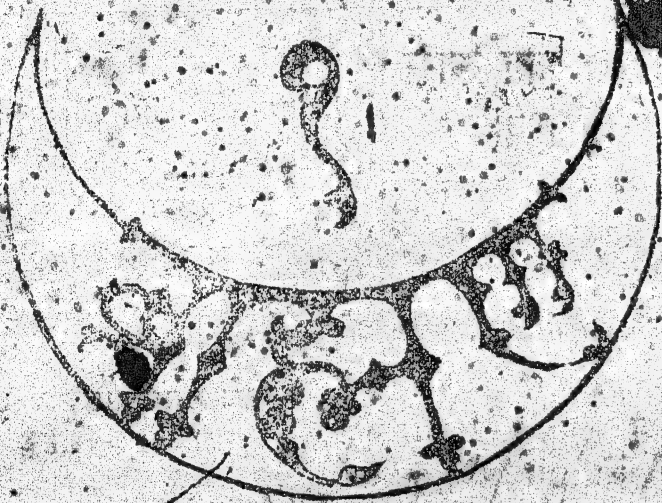
शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ट ॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्न धीराः ॥
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 10 — CAWNPORE, 15 May H. C. 6 — No 9

खण्ड १० — कानपुर १५ मई हरिश्चन्द्र सं० ६ — संख्या ९

नियमावली

—o—

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ≈) है नमूना भी सेंतु न भेजा जायगा

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ॥

३—विज्ञापन की छपाई -) प्रतिपंक्ति लियाजयगा विशेष पूछनेसे मालूम होग

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जयगा बिन मूल्य पत्र न दिया जयगा ॥

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपूर

अब बातों का काम नहीं है॥

हिन्दी ही अक्षर सब अक्षरों से सहज और शुद्ध हैं! हिन्दी हीं भाषा सब भाषाओं से उत्तम है! विशेषत: हिन्दुओं का सच्चा गौरव सच्चा लौकिक पारलौकिक सुख सौभाग्य इसी पर निर्भर है! इन बातों को हम और हमारे सहयोगि गण एक बार नहीं सौ बार सिद्ध कर चुके हैं इससे बार २ लिखना पढ़ना व्यर्थ है यदि किसी को इसके विरुद्ध हठ हो तो आवे हम शास्त्रार्थ के लिये कटिबद्ध हैं! पर इन बातों से क्या? यह तो छोटे २ बच्चे भी जानते हैं कि सब देश के मनुष्यों ही को नहीं बरंच जीव जन्तुओं की भी एक स्वतंत्र बोली होती है और सब को अपनी बोली से ममता भी होती है सुग्गा मैना पेट के लिये मनुष्यों की सी बोली सीख लेते है पर अपने सजातियों में तथा विजातियों में भी अपना आंतरिक भाव प्रकाश करने के लिये अपनी ही बोली का अवलम्ब न करते हैं खेद है यदि खुशामदी स्वार्थ तत्पर हृदयशून्य हिन्दू चिड़ियों से भी बहजांय! अन्याय है यदि गवर्नमेण्ट ऐसे उन मूर्खों पर भी दया न करे! जो डर और खुशामद के मारे अपनी मातृभाषा के गले पर छुरी फिरते देख के भी कुछ न टसक सकें! हे हिन्दुओ! हम जानते हैं कि तुम्हें अपनी भाषा का रत्ती भर मोह नहीं है नहीं तो सारसुधानिधि एवं भारतेन्दु आदिक उत्तमोत्तम पत्र बन्द न हो जाते हिन्दी का एक मात्र दैनिक पत्र हिन्दोस्थान तथा सुलेख मय सच्चे रत्नों का एक मात्र भण्डार हरिश्चन्द्र कला इस दशा में न होती कि केवल अपने स्वामी ही के धन से चले! पर इन बातों का भी इतना शोच नहीं है अभी तक आशा थी कि आज नहीं तो दश वर्ष में तुम्हें बोध होगा तब नागरी देवी की महिमा जानोगे और इसके लिये तन मन धन निछावर करने में अपनी प्रतिष्ठा समझोगे किन्तु अब हमारी आशा के गले पर छुरी रख दी गई है! इससे हमें अनुभव होरहा है कि दस ही बीस वर्ष में तुम्हारी भाषा का नाम न रहेगा और तुम्हारे सर्वनाश का अंकुर दिखाई देने लगेगा इससे मानो चाहे न मानो पर हम चिता देना धर्म समझते हैं कि यदि अपने संतान का कुछ मोह हो! अपनी जाति का कुछ भी चिह्न बनाये रखना चाहते हो तो शीघ्र

इलाहाबाद युनिवर्सिटी की कुमंत्रणा के रोकने का उपाय करो नहीं तो याद रक्खो कि जहां वर्तमान काल के वृद्ध और युवक मरे वहीं हिन्दो स्थान में हिन्दूपन की गन्धि भी न रह जायगी! कई पत्रों से विदित हुआ है कि वहां की युनिवर्सिटी ने हिन्दी को सातवीं क्लास तक में नहीं रक्खा! इस घोर अत्याचार की इसके अतिरिक्त और क्या मनशा होसक्ती है कि संस्कृत कठिन है उसे अपने बच्चों को पढ़ावैगा कौन? भाषी हिन्दुओं से है कि किस काम की? भख मारेंगे फारसी पढ़ावैंगे! एक तो अंग्रेज़ी ही विदेशी भाषा है बहुत सहज में आजाती है उसके साथ एक और विदेशी भाषा (फारसी) ठूंस दीगई जिससे लड़कपन ही से परिश्रम के मारे दिमाग कमजोर होजाय बुद्धि उकसने न पावे दिन रात दूनी चिन्ता सिर पर सवार रहे आंखों की ज्योति और देह का बल जन्म भर छीण ही बना रहे ऊपर से अपने धर्म कर्म आचार व्यवहार का दमड़ी भर ज्ञान न होने पावे रँगे पुंजे घर के हों तो जन्म भर इशक़ के बन्दे बने रहैं नहीं तो पेट की गुलामी करते २ मर मिटैं देश जाति राजा प्रजादि से कुछ सम्बन्ध न रहे बस यह पढ़ाई का फल है यह विश्वविद्यालय की करतूत है! इसके लिये हम उसके प्रबन्ध कर्ताओं को दोष नहीं देसक्ते क्योंकि सर सैयद अहमद की हिन्दुओं की पीर तभी तक थी जब तक अलीगढ़ कालिज के लिये चन्दा उघाना था पण्डित लक्ष्मीशंकर की स्वभाषा निज जाति और अपने देश की ओर जो कुछ ममता है वह उनकी काशी पत्रिका ही से प्रत्यक्ष है और वहां अपना बैठाही कौन है? हिन्दू और हिन्दूपन का जिसे कुछ मोह हो उसी से इस विषय की आशा कर सक्ते हैं उसी को इसके लिये उत्तेजना दे सक्ते हैं और कुछ सिद्धि न हो तो उसी से शिकायत कर सक्ते हैं सो वहां एक भी नहीं! अकेले पंडित आदित्यराम हैं सो उनकी कोई सुनता नहीं बस चलो छुट्टी हुई हां जिन्हें अपने प्यारे बालकों की भलाई बुराई की ओर ध्यान तथा निजत्व का ज्ञान हो उन्हें चाहिये कि उक्त विद्यालय की मंत्री सभा के भरोसे पर न भूलें अपने हिताहित को आप विचारें और शीघ्र वहां हिन्दी के पुनस्स्थापन का प्रयत्न करें इस विषय में प्रयाग हिंदू समाज चाहती है कि समस्त आर्य सभा धर्म सभा तथा अन्यान्य सभायें एवं देश के शुभचिन्तक गण अपने २ नगर में इसका आन्दोलन करें और गवर्नमेण्ट को प्रार्थना पत्र भेजें अथ

वा किसी स्थान पर नगर नगरांतर के प्रतिनिधि एकत्रित होके बृहत् सभा के द्वारा राजा और प्रजा से बिनती करें और भलीभांति समझावैं कि हिन्दी के बिना हिन्दुओं के सर्वनाश की सम्भावना है पर हम कहते हैं अब बातों का काम नहीं है जब घर में आग लगे तब बहुत सोच विचार करना ठीक नहीं शीघ्र पानी लेकर दौड़ना ही श्रेयस्कर है! सभा वा मेमोरियल जो कुछ करना हो शीघ्र कीजिये शीघ्र हिन्दू समाज के मंत्री मुंशी काशीप्रसाद को अपनी २ सम्मति दीजिए और सम्मति ही नहीं तन मन धन से साथ दीजिए तथा यह भी समझे रहिये कि गवर्नमेण्ट केवल मेमोरियल से न पसीजे भी कचहरियों में हिन्दी जारी कराने के लिए ऊंची कक्षाओं में हिन्दी पढ़ाने के लिए हिन्दी में मिडिल पास करने वालों को सरकारी नौकरी से बञ्चित न रखने के लिये मेमोरियल भेज के तथा बड़े २ प्रमाण देके देख लिया गया है कि सरकार कुछ ध्यान नहीं देती जान बूझ के भी न जाने क्यों हिन्दू प्रजा का दुख सुख नहीं सुनती इससे हमें दृढ़ प्रतिज्ञा करलेनी चाहिये कि जबतक कार्य सिद्धि न होगी तबतक कभी चुप न होंगे एक बार सुनवाई न होगी तो सौ बार सहस्र बार निवेदन करेंगे प्रार्थना पत्रों के मारे इस खण्ड के चीफ तथा प्राइवेट सेक्रेटरी महाशयों के महल भर देंगे द्वार पर प्रार्थकों की भीड़ तथा मेमोरियलों का ढेर इतना लगाए रहेंगे कि निकलने पैठने को राह न रहे इधर नगर २ गांव २ में रोवेंगे भीख मांगेंगे और अपनी मातृ भाषा की धूम मचाए रहेंगे हिन्दूमात्र को समझावेंगे कि लड़के पास हों चाहे न हों पर हिन्दी अवश्य पढ़ाओ तभी कुछ होगा तभी एक बड़ा समुदाय एवं गवर्नमेण्ट स्वयं हमारी सहायक होके मनोरथ पूर्ण करेगी पर जिन्हें हिन्दी की कुछ भी ललक हो उन्हें—कालिह करते आज कर आज करते अब्ब—और—प्रारभ्य चोतम जन न परित्यजंति—इन दो बचनों को गांठ बांध के मजबूती से कमर बांध के सेतुआ पीछे पड़ जाना चाहिये क्योंकि अब बातों का काम नहीं है काम में जुट जाने का काम है होसके तो हिन्दी की रक्षा के लिए उद्यत हो जाइए नहीं तो हिन्दूपन का नाम न लीजिये आखिर एक दिन मिटना है आजही सही॥

अष्ट कपारो दारिद्री जहां जांय तहं सिद्धि॥

यह कहावत हमारे यहां बहुत

दिन से प्रसिद्ध है और ऐसी प्रसिद्ध
है कि लड़के बूढ़े पढ़े अनपढ़
स्त्री पुरुष सभी जानते हैं पर खेद
है कि देश के अभाग्य ने जहां सब
उत्तम बातों का मूल नाश कर दिया
है वहां ऐसे २ उपयुक्त उपदेशों पर
ध्यान देने की बुद्धि भी खो दी है नहीं
तो इस कहतूत में (जिसे लोग बहु
धा दूसरों का उपहास करने में प्रयुक्त
करते हैं) ऐसी अच्छी शिक्षा है कि
संसार का कोई काम इस पर चलने से
कभी रुकही नहीं सक्ता और किसी
व्यवहारिक वस्तु के अभाव से उत्
पन्न कष्ट की संभावनाही नहीं रहती
इस प्रकार की लोकोक्तियां बड़े २ बु
द्धिमानों के अनुभूत सिद्धांत हैं पर
उन में से बहुत सी प्राचीन इति
हासों के मूल पर बनी हैं जैसे—घर
का भेदिया लंकादाह—और बहुतेरी
अलंकारिक रीति पर वर्णित हैं यथा
—जो गुड़ खाय सो कान छिदावे—इस
से उन के "शब्दार्थ" मात्र से
गूढ़ार्थ समझना कठिन होता है
अतः यदि सर्व साधारण लोग उन
का अनुसरण न कर सकें तो कोई
आक्षेप का विषय नहीं है उसके लिये
हमें अपनी तथा अपने सहयोगियों
की लेखनी से उलहना है जो स्वयं
समझती है और दूसरों को समझा
सक्ती है किन्तु समझाने की ओर
ध्यान न देके देश की आंतरिक दशा
सुधारने में बहुत से विघ्न बने रहने
देती है पर ऐसे २ मसलों पर न ध्यान
देने के लिये हम देशी मात्र पर दोष
लगावेंगे जिन का समझना कुछ कठिन
नहीं है केवल अक्षरों से अर्थ
निकल आता है और बर्ताव में लाने
से अपना तथा पराया भी बहुत
सा हित होसक्ता है फिर भी लोग
जान बूझ के हाथ पर रक्खे हुए
अमूल्य वाक्य रत्नों का तिरस्कार
करते हैं यह उपर्युक्त उपाख्यान
ऐसाही है जिस को सब लोग सहज
में समझ जाते हैं पर ध्यान न देके
अनेक ठौर अनेक हानि सहते हैं
कौन नहीं जानता कि भ्रष्ट कबारी
उस मनुष्य को कहते हैं जो बेकाम
बैठना कभी न पसंद करता हो और
काम कैसाही उलटा सीधा छोटा मोटा
सहज कठिन हो समझे बिन समझे
निर्भय निस्संकोच निर्लज्जभाव से मु
ड़िआय लेता हो अपनी बुद्धि तथा
बल से न होसके तो चाहे जिस
श्रेणी के मनुष्य से सहायता मिलती
हो उस से मित्र बन के चेला बनके
धन देके सेवा करके प्राप्त करने में न
चूकता हो तथा दरिद्री एक तो वह
व्यक्ति कहलाता है जिस के पास धन
न हो दूसरे उस को कहते हैं जो
यह सिद्धांत रखता हो कि जहांतक

बस चले वहां तक—चमड़ी जाय दमड़ी न जाय——घर की कोई तुच्छ से तुच्छ वस्तु वृथा न जाने दे और बाहर की सड़ी से सड़ी चीज़ यदि मांगे जांचे छल कपट किये से त में मिले तो क्या ही बात है नहीं कुछ स्वल्प मूल्य पर भी प्राप्त होता हो तो छोड़े नहीं वास्तव में यह दोनों गुण (अष्टकपारीपन और दरिद्रीपन) ऐसे हैं कि गृहण करने में कुछ कठिनाई नहीं है और काम बड़े २ निकलते हैं और यदि विचार के देखिये तो यह गुण ईश्वर को भी इतने प्रिय हैं कि वह त्रैलोक्य का स्वामी होने पर भी लक्ष्मीपति होने पर भी पूर्णकाम होने पर भी दीनबन्धु कहलाता है तथा कोई निज का काम न रहने पर भी सारे संसार के सृष्टि स्थिति संहारात्मक बखेड़े मुड़ियाये रहता है वरंच पुराणों का तत्व समझिये तो जान जाइयेगा कि वेदोद्धार दैत्यसंहार एवं प्रेमलीला विस्तार के लिये मत्स्य कच्छप वरंच शूकर बनने तथा भिक्षा मांगने (वामनावतार) तक में बन्द नहीं है! इसके अतिरिक्त जितने लोग जिस २ बात में बढ़े हैं उन्हों ने अपनी बढ़ती के पहिले इन्हीं दो गुणों में से एक अथवा दोनों को ग्रहण किया था ऐसे उदाहरण सब देशों के इतिहास में बहुतायत से मिल सक्ते हैं कि अष्टकपालिताही के कारण अनेक लोगों ने नीच दशा से उत्थान किया है जो लोग इतिहास वेत्ता नहीं हैं उन्हों ने भी बहुधा देखा अथवा विश्वास पात्रों से सुना होगा कि फलाने के घर में भून चबाने का ठीक न था टूटा लुटिया और सत्तू गांठ की डोर बांध के विदेश गये थे वहां से चार छः दस वर्ष में इस दशा को प्राप्त हो आये यदि पता लगाओ तो परदेश में उन्हों ने कृषि वाणिज्य शिल्प सेवादि कामों के करने में किस तरह की कसर न उठा रक्खी होगी इस से इतनी समुन्नति लाभ की! हम नहीं जानते कि ऐसे के सैकड़ों प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द प्रमाण विद्यमान होने पर भी हमारे देश भाई इधर क्यों ध्यान नहीं देते? घर में थोड़ा सा खाने भर का भी होता हुआ तो परदेश जाके उद्योग करने में मानहानि है! थोड़ी सी विद्या सीख ली तो दस पांच की नोकरी करने में बबुआई बिगड़ती है। चार पैसा की जमींदारी हुई तो हजार पांच सौ रुपये से कोई वस्तु बेचना खरीदना नीं घरी है। थोड़ी सी प्रतिष्ठा मिल गई तो मोटा कपड़ा पहिनने से नाक कटती है। अपने हाथ से श्रम

रखे में बंद लगा लेने से बात जाती है किसी सामर्थ्यवान से सहायता लेने में साख घटती है। यह क्यों ? कमबख़्ती! अभाग्य!! बिगड़ने के लक्षण !!! नहीं तो बड़े २ सम्राट भी जब दूसरे देश पर अधिकार किया चाहते हैं तो जा के चढ़ाई ही नहीं कर देते अथवा राज परिकर ही से साम दान नहीं करते एक दो बार हारने पर जन्म भर लाज के मारे मुंह दिखाने का शपथ नहीं खा बैठते पर हमारे शेखीदार लज्जावान भाई थोड़ी सी बसुधा पर फूल के-बांधे मरें कि टका बिक्राय-का उदाहरण बन बैठते हैं इसी के मारे अनेकों घर तबाह होगये पर किसी को कुछ परवा ही नहीं है! वही जब शिर पर आ पड़ती है तब सब कुछ करना पड़ता है पर पहिलेसे-सर्व सग्रह कर्त्तव्य: कालेफलदायक:--की तमीज़ ही नहीं ! यद्यपि सैकड़ों वर्ष से दरिद्र देवता डेरा डाले हुए है लाख को खाक कर चुके हैं और खाक को भी उड़ाने पर कटिबद्ध हैं इससे जान पड़ता है कि यदि यही दशा रही तो सौ दोसौ वर्ष में सर्वस्वाहा की ठहर जायगी तब स्वयं सब की आखें खुलेगी और हिताहित का मार्ग सूझेगा क्योंकि दरिद्र की पराकष्ठा में समझ बढ़ती है Necessity is the mother of invention प्रसिद्ध है --सुख स्यानंतर दुःख दुःखस्यानतर सुख-हमारे महर्षियों का अनुभूत बाक्य है पर यदि अभी से दूर दर्शिता से काम ले के अष्टकपारित्व और दरिद्रित्व का महत्व समझ रक्खा जाय तो आश्चर्य नहीं कि ईश्वर की दया से वह दिनही न देखना पड़े इसी आशा पर अगले लोग कह गये हैं और हम भी स्मरण दिलाये देते हैं कि-अग्रशोची सदा सुखी- रहता है अत:-अष्ट कपारी दारिद्री जहां जायं तहा सिद्धि --के मर्म को समझिये ध्यान दीजिये और आचरण कीजिये तो कुछ दिन में देखियेगा कि सारे दुःख दरिद्र आपसे आप दूर होजायेंगे॥

पौराणिक गूढ़ार्थ ।

६ चन्द्रमा का वाहन मृग है इस से यह तो ज्योतिष की यह बात सूचित होती है उसकी गति अन्य सब ग्रहों से तीव्र है (मृग की चाल तेज़ होती है न) जहां अन्य ग्रह अपनी चाल समाप्त करने में ढाई वर्ष तक लगा देते हैं वहां यह सताईस ही दिन में सारा राशि मण्डल नाप डालते हैं दूसरी बात यह निकलती है कि चन्द्रमा शब्द चदि आह्लाद ने धातु से बना है और आह्लाद के लिये मृग एक उपयोगी वस्तु

है रसिकों के लिये मृग नैनी विरक्तों के लिये मृगाकीर्ण बन तपस्वियों के लिये मृगचर्म संसारियों के लिये मृगशिरा की तपन (मृगशिरा के अधिक तपने से बृष्टि अच्छी होती है और बृष्टि की अच्छाई से समस्त गृहस्थोपयोगी पदार्थ पुष्ट फल होते हैं) तथा अनेक व्यापारियों और परिश्रमियों के लिये मार्गशीर्ष (अगहन) कैसा सुखद होता है? फिर जगत के विश्राम दाता ओषधीश के साथ हमारे सहृदय शिरोमणि पुबैंच मृग का सम्बन्ध क्यों न वर्णन करते?

७ लक्ष्मी देवी का बाहन उलूक है अर्थात् जो लोग यही चाहते हैं कि सारा जगत अंधकार पूर्ण होजाय तो अपना काम चले जो लोग सब को मुआ२ (अर्थात् सर्व सामर्थ्य शून्य होके मर मिटा) पुकारते रहते हैं एवं दिन दहाड़े (सब को जना के) कुछ भी करना नहीं पसन्द करते कोई लाख उल्लू कहै अशुभरूप समझै अथवा चोंचें चलाया करै पर अपनी चाल में नहीं चूकते तथा अजरामरवत जीवन समझ के धन संचय करने में लगे रहते हैं वही रुपया जोड़ सकते हैं इन भगवती का नाम समुद्र कन्या है जिसका तात्पर्य यह है कि जो लोग समुद्र में गमनागमन करते रहते हैं देश देशांतर में आते जाते रहते हैं) अथवा समुद्र की भांति चाहे लाख नदियों को पेट में डाल लें पर बृद्धि का चिन्ह भी न जतावें (घर भरने से तृप्त कभी न हों) चाहे रत्नाकर (रत्नों की खानि जिस के घर में लाखों रत्न हों) ही क्यों न हो जायं पर दूसरे के लिये बूंद भर पानी के काम न आवें पृथवी पर पड़े हुए भी आकाश के चन्द्रमा तक पर हाथ लपकाते रहें वही लक्ष्मी को पैदा कर सकते हैं।

८ भगवान मनोभव का बाहन तथा ध्वजा चिन्ह (जिस देवता का जो बाहन होता है बहुधा वही ध्वजा में भी रहता है) मत्स्य है इसका तात्पर्य वैद्यक के मत में यह है कि मछली खाने तथा काडलिवर आइल (मछली का तेल) पीने से यह बहुत बृद्धि को प्राप्त होते हैं ज्योतिष के मत से मीन राशि के सूर्य में अधिक उन्नत होते हैं कर्मकांड की रीति से मछलियों को चारा देने से अनेक कामना सिद्ध होती हैं तथा हमारे सिद्धांत में—मीन काटि जल धोइए खाए अधिक पियास। तुलसी प्रीति सराहिये मुयेहु मीत की आस—इस महावाक्य का अनुसरण करने से कोटि काम सुन्दर भगवान प्रेमदेव बड़े ही प्रसन्न होते हैं इनके कुसुमायुध नाम का अभिप्राय यह है कि नाना जाति

के पुष्पों का अवलोकन और घ्राण करने से मन्मथ का उद्दीपन तथा विज्ञान दृष्टि से देखने से अनेक सुख संतोष जनक बिचार ऐसे उत्पन्न होते हैं कि इनका अनुभव करो तो जान पड़ता है किसी ने बाण मार दिया ? संसारियों को फूल बूटा तथा मछलियों के चित्र काढ़ने से कीर्ति एव धन का लोभ होता है जिससे सारी कामना सफल होती है और सदा निशाने पर तीर लगता रहता है अर्थात् निर्वाह योग्य बस्तुओं का मनोरथ निष्फल नहीं होने पाता रसिकों के लिये कुसुम कोमल अवयव वालों का दर्शन स्पर्शन तथा मीन चचल नेत्रों का अवलोकन बाण के समान स्पर्शीहृदय होता है ऐसे २ अगणित भव अनुभव करके इस देवता के साथ मत्स्य और पुष्प का सम्बन्ध रक्खा गया है॥

९ युद्ध के देवता स्वामिकार्तिक जी का बाहन मयूर है जिसे सभी जानते हैं कि उड़ता भी है और नाचता भी है जिन्हों ने हमारे यहां का आल्हा सुना होगा वे इस पद से इनके बाहन का तत्व खूब समझ सकेंगे कि—कबहुं बेंदुला भुइँ मां नाचैं कबहूं जोजन भरि उड़ि जाय—अथवा—घोड़ा बेंदुला नाचत आवै जैसे बन मां नचै पुछारि—जब कि युद्ध प्रिय मनुष्यों के बाहन की उपमा पुछारि से दी जाती है तो युद्धदेव का बाहन पुछारि के अतिरिक्त और क्या कहा जाय! इसके सिवा उसका सर्प भक्षण एवं नख चंचु दोनों के द्वारा प्रहार भी रण क्षेत्र के लिये बड़ा उपयोगी है तथा च उनके छः मुख भी यही सूचना देते हैं कि शत्रु सेना में प्रवेश करने वाले को पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण नीचे (सुरङ्ग तथा कपट दीनता सम्पन्न) और ऊपर (घमण्डी अथवा व्योमयानादि पर आरूढ़) के शत्रुओं पर दृष्टि रखनी उचित है इनके जन्म काल में छः युवती पुंश्चलियां से इनके पास आईं और सभों ने दुग्धपान कराने की इच्छा प्रगट की तो इन्हों ने एक साथ छहों का स्तन पान करके सब की रुचि रक्खी यह आख्यायिका भी सच्चे बीरों का स्वाभाविक गुण विदित करती है कि जितनी स्त्री दृष्टि पड़ें सब को मातृवत् सन्मान करे! बहुतों के मत से यह सदा छः वर्ष के रूप में रहते हैं अर्थात् काम क्रोध ईर्षा द्वेष छल कपटादि से न्यारे केवल माता पिता के सहारे बने रहते हैं यदि बिचार के देखिये तो प्रकृतबीर के यही सब लक्षण हैं जो हमारे सुरसेनाध्यक्ष में वर्णन किए गए हैं॥

१० धनाध्यक्ष कुबेर जी नर बाहन

हैं जिसका भावार्थ सब जानते है कि रुपये वाले लोग सदा आदमियों के शिर पर सवार रहते हैं यदि इस में हँसी समझिये तो यह अर्थ समझ लीजिए कि जो धनपति मनुष्य वाहन होते हैं अर्थात् अनेक मनुष्यों का कार्य संचालन करते हैं बहुत लोगों को सहायता की दृष्टि से काम में लगाये रहते हैं वे देवता समझे जाते हैं और शिव जी को प्रिय होते हैं॥ शनैः शनैः

समय का फेर॥

गतांक से आगे॥

पर अब तो हम देखते हैं स्वतन्त्रता की धुन ऐसी समाई है कि किसी को ईश्वर और धर्म का कुछ डरही नहीं रहा यद्यपि स्वतन्त्रता गधे के सींगों के समान कहनेहीं कहने मात्र को है वास्तव में अस्तित्व इत नाही रखती है कि धाय धूप के महंगा सस्ता मोटा महीन खा पहिन लो और रात को सो रहो इतने में बहुधा कोई प्रत्यक्ष बाधा न पड़ेगी पर इतने हीं पर लोगों के दिमाग इतने ऊंचे चढ़ गए हैं कि मानो अब इन्हें कुछ करनाही नहीं है कोई इनके ऊपर हुई नहीं कोई अभाव रहाही नहीं नहीं तो जिसके पूर्वजों की सहस्रों वर्ष की प्रगट एवं प्रछन्न पूंजी नाश होगई हो और बची खुची भी सैकड़ों द्वार से दिन २ नष्ट होरही हो उसे निश्चिन्त हो बैठना चाहिये? सो काम छोड़ अपने उद्धार का मार्ग न ढूंढना चाहिये? पर क्या कीजिए यहां तो जो कोई सुधार की युक्ति बताता है वही सहायता पाने के स्थल पर नष्ट बनाया जाता है उसी के विरुद्ध उद्योग किये जाते हैं अथवा स्वयं कहता कुछ है करता कुछ है इन्हीं लक्षणों से हमें जान पड़ता है कि सब समय का फेर है जिस के मारे होती अवनति जाती है पर तुम लोग उन्नति समझते हो? नहीं, तो जो सुख सम्पति सुचाल हमारे देखे हुए काल में थी वह भी अब नहीं रही तो उन्नति कैसी! हां यह कहो कि परमेश्वर की बड़ी २ बाहें हैं उन्हें सब समर्थ है वे चाहेंगे तो कभी दिन फेर देंगे पर आज तो सब कुछ देख सुन सोच समझ के यही कहते बनता है कि समय का फेर है॥ शुभमस्तु

प्राप्ति स्वीकार॥

मनुस्मृति रत्नावली—नयागंज आगरा निवासी श्री युत लाला लीलापति लिखित और लाला बांके लाल जामा मसजिद आगरा द्वारा प्रकाशित मूल्य ।≠) मनु भगवान के वाक्य रत्नों

की समालोचना ही क्या? यह तो हम हिन्दुओं के धर्म कर्म का मूल है पर लाला साहब का परिश्रम तथ धर्म की रुचि एव देश ममता अवश्य प्रशंसनीय है जिन्हों ने इस कालके लोगों को जबरदस्ती अमृत पिलाने का उद्योग किया है इसमें सात सौ श्लोकों का बड़ो सरल भाषा में (टिप्पणी सहित) अनुवाद है और उत्तमता यह कि चुन २ के उपयोगी बचन संग्रह किये गये हैं ऊपर से सोने में सुगंध यह है किसी मत पर कटाक्ष नहीं है तथा मूल्य इतना स्वल्प है कि सच मुच कागज ही स्याही के दाम है ॥

निस्सहाय हिन्दु—काशी वासी प्रियवर श्री राधाकृष्णदास लिखित उपन्यास मूल्य ।) यह ग्रन्थ गोरक्षा के सच्चे उत्साहियों के लिये अत्यन्त उपयोगी है तथा हिन्दुओं की वर्तमान दशा भी अच्छी रीति से वर्णित है इसे उन्होंने सोलह वर्ष की अवस्था में लिखा था तथापि अपनी आश्चर्यमयी लेख शक्ति दिखला दी है पर हमें पुस्तक देख के जितना हर्ष होता है उससे अधिक सहयोगी हिन्दोस्थान के कथनानुसार यह देख के शोक होता है कि इतना अच्छा सुलेखक ऐसा बज्र आलसी है कि नौ २वर्ष तक लिखने पढ़ने का नाम नहीं लेता सोभी उस दशा में जब कि श्री युत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी का पवित्र नाम पबलिक को समय २ पर स्मरण करते रहना उसके लिये परमकर्तव्य है॥

सूचना ॥

जिन महाशययों ने कृपा पत्र भेज कर ब्राह्मण मङ्गाया है उनको चाहिये कि यह अंक पाते ही दक्षिणा शीघ्र भेज दें नहीं तो आगामी मास में वेल्यू पेयबिल द्वारा ब्राह्मण से भेट होगी॥

मैनेजर—ब्राह्मण

प्यारे पाठको!

जिस प्रकार बाग्सुधानिधि इत्यादि उत्तमोत्तम पत्रों को नादिहन्द ग्राहकों ने भच्छ लिया उसी प्रकार ब्राह्मण को भी ग्रसा चाहते हैं पर यह नहीं सोचते कि ब्रह्म दोषी बनना हिन्दुओं के लिये कैसा है हम उनमें से कुछ नाम यहां प्रकाश करते हैं॥

बाबू मुन्ना लाल चौबे E. I. R इंजीनियर्स आफि—कानपुर

सेठ भोलानाथ गयाप्रसाद बेलनगंज आगरा

लाला मिर्जामल मन्त्री गोरक्षणी सभा फर्रुखाबाद

मुनशी ललन प्रसाद मुखतार आज़मगढ़

पं० रोशन लाल शर्म्मा स्कूल अर्हींग (जि० मथुरा)

पं० प्रेमनाथ चोबे महाजनी टोला गाजीपुर

शेष आगे

मूल्यप्राप्ति ॥

श्री युत पं० लक्ष्मीनारायण भट्टाचार्य कन्नौज १)

राजा नरेन्द्रसिंह पिटहा १)

राय गोपी कृष्ण पटना १)

पं० गङ्गाप्रसाद द्विवेदी सिमरिया ॥=)

गोस्वामी रामकृष्ण पुरी नागपुर २)

बाबू सेठमल शर्म्मा ओवरसियर आगरा १)

पं० शिवनारायण वाजपेई कंट्रेक्टर जबलपुर १)

बाबू विशुन प्रसाद हनोमानगंज १)

पं० माधो प्रसाद तिवारी जमादार शिमला १)

पं० विश्वनाथ शर्म्मा हरदोई १)

बाबू भगवानदीन मिस्त्री कंट्रेक्टर हरदोई १)

राय गुदर बहादुर बखर। १)

राजा किलाकांकर किसमत छत्तीसगढ़ १)

बाबू हरशंकरलाल खत्री कानपुर १)

बाबू टीकाराम सीताराम आगरा १)

बाबू बासुदेवनारायणसिंह जमींदार सूर्य्यपुरा १)

पं० बालमकुन्द शर्म्मा ठाकुरद्वारा १)

महाराजा मांडा मांडा १)

लाला मदारी लाल बृन्दावन मिर्जापुर १)

अनपावनी मित्रसम्बन्धिनी धर्मप्रचारिणी गदगद सभा मसूरी पहाड़ १)

गवर्नमेण्ट रिपोर्टर मारफत सुपरिण्टेण्डेण्ट स्टेसनरी कलकत्ता १)

बाबू जनार्दनराव सर्व्वेयर शिलांग १)

श्री पंडित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हिन्दुस्थान यन्त्रालय कालाकांकर में प्रकाशित हुआ

यचोऽपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोऽपि ॥

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्न धीराः ॥

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 APRIL H. C. 6 } No 9
खण्ड ६ { कानपुर १५ अप्रैल हरिश्चन्द्र सं० ६ } संख्या ६

नियमावली

—o—

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ≈) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) ह० लिया जायगा ॥

३—विज्ञापन की छपाई -) प्रतिपंक्ति लिया जायगा विशेष पूछनेसे मालूम होगा

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिना मूल्य पत्र न दिया जायगा ॥

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर

धन्यवाद ॥

हिन्दी और हिन्द के परम हितैषी तथा हमारे मान्यवर कृपाकर लंदन निवासी श्री फ्रेडरिक पिन्काट महोदय को हम इस अनुगृह के लिये अंत:करण से अनेक धन्यवाद देते हैं कि उन्हों ने विलायत के इण्डिया नामक समाचार पत्र में हमारी—ब्रेडला स्वागत-नाम्नी पुस्तिका का अनुवाद बड़ी सुन्दर सरल एवं साधु अंग्रेज़ी में प्रकाशित किया है इस से हमारे देश की दीन दशा का वहां वालों के जी में बहुत कुछ बोध अथच तद्द्वारा हमारे दुःखों का बहुत कुछ निवारण होने की सम्भावना है ऐसे उत्साही पुरुष रत्नों की अपने ऊपर इतनी ममता और सहानुभूति देख के हमें अपने उद्धार की बड़ी भारी आशा तथाच हृदय को बड़ा भारी संतोष होता है इनकी हिन्दी हितैषिता तो हमारे अनेक देशी भाइयों पर विदित ही है पर इस के अतिरिक्त राजनैतिक विषयों में भी छिपे २ बड़ा भारी उपकार करते रहते हैं इसके लिये हम इन्हें जितने धन्यवाद दें थोड़े हैं परमेश्वर इन के परिश्रमों को सफल करे जिस से हमारे सारे अभाव दूर हों और समस्त भारत सन्तान प्रसन्न चित्त से इन का यश गान करें ?

तथा ॥

खड्गविलास प्रेस के स्वामी बांकीपुर के रईस श्रीमान महाराजकुमार बाबू रामदीनसिंह महोदय ने गत वर्ष सहस्रों की हानि सह के केवल ब ग्राहकों के सहारे—श्रीहरिश्चन्द्रक को प्रकाशित रक्खा पर अन्त में देखा कि देश में निजभाषाहित इतनेही मात्र हैं कि न होने के बर बर ऊपर से प्रांतिक गवर्नमेण्ट ने स हायता देने कही थी सो भी अव नहीं देना चाहती तो उसे बंद कर दिया था किंतु इन दिनों कल के प्रच्छन्न होजाने से दो चार मित्र को महा दुःखी देख के अपने लाभ हानि का विचार छोड़ फिर प्रकाश करना आरम्भ कर दिया है भला इन धैर्य साहस क्षत्रियत्व मित्रत्व एव देशभाषा के अकृत्रिम स्नेह को देख के कौन सहृदय उन्हें अंत:करण से धन्यवाद न देगा ? पर यदि हिन्दी के प्रेमियों ने इतने पर भी उस के ग्राहक बढ़ाने में प्रयत्न न किया तो हम अपनी मातृभाषा के अभाग्य एव स्वदेशियों की शुद्ध शून्यहृदयता और अकृतज्ञता को धन्यवाद देंगे कि बेहयाई हो तो इतनी दृढ़स्थायिनी तो हो कि इतने पर भी न टसके। इतने उत्तम अनमोल रत्न के लिये भी वर्ष भर में ६) रु० न निकाल सके

दो

दकार की दुस्सहता हमारे पाठकों को भलीभांति विदित है और यह शब्द उसी में और एक तुर्रा लगा के बनाया गया है इससे हमें यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि यह भी दुःख दुर्गुणादि का दरिया ही है क्योंकि सभी जानते हैं—नहिं विष बेलि अमिय फल फरहीं—पर इतना समझ लेनेही से कुछ न होगा बुद्धिमान को चाहिये कि जिन बातों को बुरा समझे उन्हें यत्न पूर्वक छोड़ दें किन्तु यतः संसार की रीति है कि जब कोई जानी बूझी बात को भी चित्त से उतार देता है तो उस के हितैषियों को उचित होता है कि सावधान कर दें इसी से हम भी अपना धर्म समझते हैं कि अपने यजमानों को यह दुर्गति दायक शब्द स्मरण करा दें क्योंकि ब्राह्मण के उपदेश केवल हंस डालने के लिये नहीं है बरंच गांठ बांधने से अपना एवं अपने लोगों का हित साधने में सहारा देने के लिये हैं फिर हम क्यों न कहैं कि—दो—पर ध्यान दो और उसे छोड़ दो इस वाक्य में कहीं यह न समझ लेना कि वर्ष समाप्त होने में केवल तीन मास रह गए हैं इस से दक्षिणा के लिये बार२ दो० (दिव २) करते हैं हां इस विषय पर भी ध्यान दो और हमें ऋण हत्या से शीघ्र छुड़ा दो तो तुम्हारी भलमंसी है पर हम यद्यपि अपना मांगते हैं अपने पत्र का मूल्य मांगते हैं तौभी पांच वर्ष में अनुभव कर चुके हैं कि देने वाले बिन मांगेही भेज देते हैं और नादिहंद सहस्र बार मांगने सैकड़ों चिट्ठी भेजने पर भी दोनों कान एवं दोनों आंखबन्दही किए रहते हैं इससे हम ने इस दुष्ट (दो) के अक्षर का बोलना ही व्यर्थ समझ लिया है हां जो दयावान हमारे इस प्रण के पूर्ण करने में सहायता देते हैं अर्थात् दो दो कहने का अवसर नहीं देते उनको हम भी धन्यबाद देते हैं पर इस लेख का तात्पर्य दो शब्द का दुष्ट भाव दिखलाना और यथासाध्य छोड़ देने का अनुरोध करना मात्र है न कि कुछ मांगना जांचना। यदि तनिक भी इस ओर ध्यान दीजिएगा कि-दो-क्या है तो अवश्य जान जाइएगा कि इसको मन बचन कर्म से त्याग देना ही ठीक है क्योंकि यह हई ऐसा कि जिससे कहो उसी को बुरा लगे कैसा ही गहिरा मित्र हो पर आवश्यकता से पीड़ित होके उससे जाचना कर बैठो अर्थात् कहो कि कुछ (धन अथवा अन्य कोई पदार्थ) दो तो उस का मन बिगड़ जायगा यदि संकोचो

होगा तो दे देगा किन्तु हानि सहके अथवा कुछ दिन पीछे मित्रता का सम्बन्ध तोड़ देने का विचार करके। इसी से अरब के बुद्धिमानों ने कहा है—अल् क़र्ज़ मिक़राज़ुल मुहब्बत—जो कपटी वा लोभी वा दुकानदार होगा तो एक २ के दो २ लेने के इरादे पर देगा सही पर यह समझ लेगा कि इनके पास इतनी भी विभूति नहीं है अथवा बड़े अपव्ययी हैं यदि ऋण की रीति पर न मांगे योंही इस शब्द का उच्चारण कर बैठो तो तुम तो क्या हो भगवान की भी लघुता हो चुकी है—बलि पै मांगत ही भए बावन तन करतार—यदि दैवयोग से प्रत्यक्षतया ऐसा न हुवा तौभी अपनी आत्मा आप ही धिक्कारेगी लज्जा कहेगी—को देहीति बदेत् स्वदग्ध जठरस्यार्थे मनस्वी पुमान्—यदि आप कहें हम मांगेंगे नहीं देंगे अर्थात् मुख से दो दो कहेंगे नहीं किन्तु कानों से सुनेंगे तो भी पास की पूंजी गँवा बैठने का डर है उपदेश दीजिएगा तो भी अरुचिकर हुवा तो गालियां खाइएगा मनोहर होगा तो यशःप्राप्ति के लालच दूसरे काम के काम के न रहिएगा इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिल सक्ते हैं जिनसे सिद्ध होता है कि (दो) का कहना भी बुरा है सुनना भी अच्छा नहीं हमारी गवर्नमेण्ट सब बातों में परम प्रशंसनीय है पर इस बात में बदनाम है कि सदा यही कहा करती है यह टिकट दो यह लाइसेन्स दो इसका चन्दा दो इसका महसूल दो और हम यद्यपि डर के मारे देते हैं पर दिन२ दरिद्री अवश्य होते जाते हैं अथच यदि हमारे कोई २ भाई कहते हैं कि हमें भी यह अधिकार दो वह आज्ञा दो तो अनेक हाकिमों को रुष्टता के पात्र बनते हैं तथा अनेक एङ्गलोइण्डियन पत्रों को सकार से तानें के साथ कहते हुए सुनते हैं—और भी इन ढीठ काले आदमियों को विद्या दो! बुद्धि दो! बोलने दो!—कहां तक कहें यह दो सब को अखरते हैं चाहें जिस शब्द में दो को जोड़ दो उसमेंभी एक न एक बुराईही निकलेगी दोख (दोष) कैसी बुरी बात है जिसमें सचमुच हो उसके गुणों में बट्टा लगा दे जिस पर झूठमूठ आरोपित किया जाय उसकी शांति भङ्ग कर दे दोज़ख (नर्क अथवा पेट) कैसा बुरा स्थान है जिससे सभी मतवादी डरते हैं कैसा वाहियात अङ्ग है जिसकी पूर्ति के लिये सभी कर्तव्याकर्तव्य करने पड़ते हैं दोत् कैसा तुच्छ सम्बोधन है जिसे मनुष्य क्या कुत्ते भी नहीं सुनना चाहते दोपहर कैसी तीक्ष्ण बेला है कि ग्रीषम क्या तो ग्रीषम शीत

ऋतु में भी सुख से कोई काम नहीं करने देती दोहरा कैसा ऊकाम कपड़ा है कि दाम तो दूने लगें पर जाड़े में जाड़ा न खो सके गरमी में सह्य न हो सके हां दोहा एक छन्द है जिसे कवि लोग बहुधा आदर देते हैं सो भी जब उसमें से दो की शक्ति हनन करलेते हैं इससे यह ध्वनि निकलती है कि जहां दो होंगे वहां उनका भाव भङ्ग ही कर डालना श्रेयस्कर होगा इसीसे ईश्वर ने हमारे शरीर में जो २ अवयव दो दो बनाये हैं उनका रूप गुण कार्य एक कर दिया है यदि कभी इस नियम में छुट ई लड़ाई इत्यादि के कारण कुछ मात्रुटि होजाती है तो सारी देह दोषपूर्ण होजाती है हाथपाव आंखकान इत्यादि यदि सब प्रकार एक से हों तभी सुविधा होती है जहां कुछ भी भेद हुआ और दो का भाव बन रहा वहीं बुराई होती है इससे सिद्ध है कि नेचर हमें प्रत्यक्ष प्रमाण से उपदेश दे रहा है कि जहां दो हों वहां दोनों को एक करो तभी सुख पाओगे ऋषियों ने भी इसी बात की पुष्टि के लिये अनेक शिक्षा दी है स्त्री का नाम अर्द्धाङ्गी इसी लिये रक्खा है कि स्त्री और पुरुष परस्पर दो भाव रक्खेंगे तो संसार से सुख का अदर्शन हो जायगा इनकी रुचि और उनकी और उनके विचार और इनके और होने से गृहस्थी का खेलही मट्टी होजाता है—खसम जो पूजि दोहरा भूत पूजनी जोय। एके घरमें दो मता कुशल कहां ते होय— इससे इन दोनों को परस्पर यही समझना चाहिये कि हमारा अङ्ग इसके बिना आधा है अर्थात् इसकी अनुमति बिना हमें कोई काम करने के लिये अपने तईं अक्षम समझना उचित है प्रेम सिद्धांत भी यही सिखता है किसी ठाकुर राधाकृष्ण गौरीशंकर मातापिता आदि पूज्य मूर्तियों को दो समझना अर्थात् यह बिचारना कि यह और हैं वह और हैं इनका महत्व उनसे कुछ न्यूनाधिक है महापाप है फारसी में दोस्त का शब्दभी यही द्योतन करताहै कि दो को एक हो रहना ही सार्थकता है नहीं तो दो बहुबचन है उसके साथ(स्त=अस्त) क्रिया न होनी चाहिये थी व्याकरण के अनुसार (स्तन्द=अस्तन्द वा हस्तन्द) होना चाहिये पर नहीं बहुबचन की क्रिया होने से द्वैतभाव प्रकाश होता इससे यही उचित ठहरा कि शरीर दो हों तो भी मन बचन कर्म एक होना चाहिये इसी से कल्याण है नहीं तो जहां दो है वहीं अनर्थ है संसार को हमारे पूर्वजों ने दुखमय माना है—संसारे रे मनुष्या वदतयदिसुखं स्वल्पमप्यस्ति किंचित—

इसका कारण यही लिखा है कि इसका अस्तित्व द्वन्द पर निर्भर है अर्थात् मरना और जन्म लेना जबतक रहता है तबतक शांति नहीं होने पाती इससे यत्न पूर्वक इन दोनों (जन्म मरण) से छुट जाय तभी सदा सुखी अर्थात् मुक्त होता है हमारे प्रेम शास्त्र में भी यही उपदेश है कि इस द्वन्द (मरण जीवन) में से एकका दृढ़ निश्चय कर ले वही निर्द्वन्द अर्थात् जीवनमुक्त होता है या तो प्रेम समुद्र में डूब के मर जाय अर्थात् सुख दुख हानि लाभ निन्दा स्तुति स्वर्ग नर्कादि की इच्छा चिन्ता भय इत्यादि से मृतक की नाईं सरोकार न रक्खे या प्रेमामृत पान करके अमर होरहे। अर्थात् दुःख शोक मरण नर्कादि को समझले कि हमारा कुछ कर ही नहीं सकते बस इसी से सब लोक परलोक के झगड़े खतम हैं! यदि इन शास्त्रों के बड़े २ सिद्धांतों में बुद्धि न दौड़े तो दुनियां में देख लीजिये कि जितनी बातें दो हैं अर्थात् एक दूसरे से सर्वथा असम्बद्ध हैं उनमें से एक रह जाय तो कभी किसी को दुख न हो या तो सदा सुखही सुख हो तो जी न ऊबे या सदा दुखही दुख बना रहे तो न अखरे—दर्द का हदसे गुजरना है दवा होजाना—सदा लाभ ही लाभ होता रहे तो क्याही कहना है नोचेत् सदा हानि ही हानि हो तो भी चिंता नहीं आखिर कहां तक होगी? इसी प्रकार संयोग वियोग स्तुति निन्दा स्वतंत्रता परतंत्रता इत्यादि सब में समझ लीजिये तो समझ जाइयेगा कि दो होनाही कष्ट का मूल है उनमें से एक का अभाव हो तो आनन्द है अथवा जैसे बने वैसे दोनों को एक कर डालने में आनन्द है भारत का इतिहास भी यही सिखलाता है कि कौरव पांडव दो होगये अर्थात् एक दूसरे के बिरुद्ध होगये इसी से यहां की बिद्या बीरता धन बल सब में घुन लग गया यदि एक हो रहते तो सारा महाभारत इति श्री था अंत में पृथिवीराज जयचन्द दो होगये इससे रहा सहा सभी कुछ स्वाहा होगया यदि अब भी जहां २ दो देखिये वहां २ सच्चे जीसे एक बनाने का प्रयत्न करते रहिये तो दो के साथही सारे दोष दुर्भाव दुख दूर होजायँगे नहीं दो तो जो कुछ है सो हम दिखलाही चुके इनसे जो कुछ होता है सो यदि समझ में आगया हो तो आजहां से अपने कर्तव्य पर ध्यान दो नहीं तो इस दांताकिटकिट को जाने दो॥

पौराणिक गढ़ाध्य॥

गतांक से आगे॥

यह सब पौराणिक भलीभांति

जानते हैं कि ब्रह्मा विष्णु शिव इत्यादि नाम भिन्न२ हैं परहैं वास्तव में सब एकही परमत्मा का स्वरूप और उनके हस्तपदादि भक्तों को उमङ्ग एवं कवियों को कल्पना मात्र हैं किन्तु है सब निरवय वजगदीश्वर का वर्णन इसी प्रकार दुर्गाकाली इत्यादि देवियां भी ईश्वर की शक्ति हैं जो किसी भांति प्रथक नहीं हैं जैसे पण्डित जी का पांडित्य मोल्वी साहब की लियाकत इत्यादि पंडित जी तथा मोलवी साहब से भिन्न कोई वस्तु नहीं है वैसेही सरस्वती (विद्या शक्ति) दुर्गा (वीरताशक्ति) इत्यादि भी ईश्वर से प्रथक् कोई सावयव पदार्थ नहीं हैं रहे इनके रूप एवं कौम सो यद्यपि कभी २ ऊपरी शब्दों में सृष्टि क्रम से विलक्षण जान पड़ते हैं पर उनके विषय में तर्क वितर्क उठाना निरी मूर्खता है क्योंकि किसी भाषा के मुहाविरे तथा किसी देश के कवियों की कविता का ढङ्ग एवं उनकी मनसा को जाने बिना झट से कह उठना कि झूठ है! ऐसा नहीं होसक्ता! अथवा ऐसे२ २ कुतर्क उठाना कि ब्रह्मा के चार मुंह हैं तो सोते क्योंकर होंगे एवं —सहस्र शीर्षा—वाली ऋचा पर कहना कि शिर भी सहस्र और आंखें भी सहस्र होंहैं तो सावयव उपास कों का ईश्वर काना ठहरता है क्योंकि एक शिर के साथ दो आंखें होने का नियम है! इत्यादि निरी नीचता है ऐसी बातों से लाभ तो केवल इतना ही मात्र है कि कच्चे विश्वासी तथा बुद्धिहीन लोग अपने धर्म को अप्रमाण समझ के हमें सच्चा समझने लगें तो असम्भव नहीं पर हानि इतनी होती है कि कहते जो शर्ता है कहने वाले की दुष्टता का प्रकाश सुनने वाले को निज धर्म से अविश्वास अथवा आपस के हेल मेल का सत्यानाश सभी कुछ होसक्ता है पर मत वादी लोगों की बुद्धि में न जाने कहां से पत्थर पड़े हैं कि जिन बातों में न अपने लाभ की सम्भावना है न पराये हित की आशा है उन्हीं को सोच २ निकाला करते हैं और देश के भाग में लगी हुई आग पर घी डाला करते हैं नहीं तो ऐसी किस सभ्य देश की भाषा है जिसमें ऐसे वाक्य न होते हों जिनके शब्दों का अर्थ और है पर उस वाक्य का तात्पर्य और है (ऐसे सैकड़ों उदाहरण पाठक गण आप सोच सक्ते हैं इससे लिखना आवश्यक नहीं समझा) पर जिन्हें दूसरों के मान्य पुरुषों को गालियां देने और पलटे में अपने बड़े बूढ़ों को गालियां दिलवाने ही में धर्म सूझता है उन्हें समझावे

कौन? हमारी समझ में यदि ऐसे लोगों को जो सभाओं में बैठ के तथा मेलों और बाजारों में खड़े हो के किसी के मत पर आक्षेप करते हैं सर्कार की ओर से दण्ड नियत होजाय तो अति उत्तम हो पर यतः यह काम उन्हीं लोगों का है जो सच मुच देश में सामाजिक एवं राजनैतिक सुधार के लिये बद्ध परिकर हैं इससे हम उन्हें इस बात का स्मरण दिलाने के अतिरिक्त विशेष बातों पर जोर दें तो हमारे प्रस्तुत विषय में विक्षेप पड़ेगा अतः कुतर्कियों को केवल कविता पढ़ने और संस्कृत के मुहाविरे सीखने की पुनः अनुमति दे के तथा इतना समझा के कि यदि मानही लिया जाय कि सच मुच इन्द्र के सहस्र नेत्र हैं और तुम्हारे कथनानुसार-उनकी आंखें उठती होंगी तो क्या करते होंगे कीचड़ के मारे सारी देह भिनकने लगत होगी-तो भी जब तुम्हें (मतवादी जी को) न उनकी आंखें धोनी पड़ती हैं न अञ्जन पीसने का कष्ट सहना पड़ता है न डाक्टर को फीस देनी पड़ती है फिर मुख क्यों गंदा करते हो? अपनी बुद्धि भ्रष्ट एवं पराई आत्मिकशांति नष्ट करने का वृथा उद्योग क्यों करते हो? अपने मुख्य विषय पर आते हैं जिससे बुद्धिमानों को पुराण कर्ताओं की बुद्धिमता का परिचय और तद्द्वारा अपने सुधार का कुछ आश्रय प्राप्त हो ॥

१ देवताओं अर्थात् निराकार के पौराणिक रीति से साकार कल्पनामय स्वरूपों के बहुधा चार अथवा आठ भुजा होती हैं यह उनकी महासामर्थ्य का द्योतन है हिन्दी में महाविरा है कि जब कोई बड़ा काम शीघ्रता के साथ पूर्णरूप से कोई नहीं कर सक्ता तो अपने उपहासकों से बहुधा कहता है कि भाई अपनी सामर्थ्य भर कर तो रहे हैं कुछ हमारे चार हाथ तो हई नहीं कि एकबारगी कर डालें —हमें उन लोगों पर आश्चर्य आता है जो आप तो दिन भर-चार हाथ २-कहते सुनते रहते हैं पर प्राचीन विद्वानों की लेखनी से चार हाथ (चतुर्भुज) लिखा हुआ देख सुन के आक्षेप करने दौड़ते हैं! यदि कुछ भी बुद्धि हो तो स्वयं समझ सक्ते हैं कि चार अथवा आठ हाथ वाले का अर्थ महासामर्थ्यवान है इसमें तर्क वितर्क का क्या प्रयोजन? इससे हमें यह उपदेश भी प्राप्त होता है कि यदि हम दो अथवा चार मनुष्य मिल के अर्थात् चार वा आठ हाथ एकत्रित करके किसी काम को आरम्भ करें तो अकेले की अपेक्षा अधिक सहज और सुन्दर रीति से कर सक्ते

है जैसा कि कविवर ठाकुर का बचन है—चारि जने चारि हू दिसा ते एक चित्त ह्वैकै मेरु को हलाय कै उखारैं तो उखरि जाय—हमारे मित्रों में बहुत लोग कहा करते हैं भाई—हमारे अकेले दो हाथों के किये क्या होसक्ता है—इसी मूल पर—पञ्च परमेश्वर—वाली कहावत प्रसिद्ध हुई है अर्थात् पांच जने जिस काम को करते हैं उसे मानो परमेश्वर स्वयं कर रहा है फिर यदि हम तथा हमारे पुराण कर्ताओं ने भी कहा कि परमेश्वर (विष्णु शिव दुर्गादि) चतुर्भुज अष्टभुजी अथवा दशभुजी हैं तो क्या झूठ है? कौन नहीं मानता कि परमात्मा महान शक्तिमान है?

२ इसी भांति पुराणों में सिंह वृषभ मूषकादि देवताओं के बाहन लिखे हैं इस पर भी नये मतवाले ठट्ठा किया करते हैं पर यह नहीं विचारते कि संस्कृत में बाहन उसे कहते हैं जिसके द्वारा कोई चले वा जो किसी के द्वारा चलाया जाय जैसे वैद्यक शास्त्र के परमाचार्य भगवान धन्वन्तरि का नाम जलौकाबाहन है इससे यह तात्पर्य नहीं है कि वे जोंक पर चढ़ते हैं किन्तु यह अभिप्राय है कि वे जोंक के चलाने वाले अर्थात् रक्त विकार के हरणार्थ जोंक लगाने की रीति चलाने वाले हैं।

इसी प्रकार सिंहबाहिनी का यह अर्थ है कि जो वीर पुरुष हैं जिन्हें सब भाषाओं में सिंह का उपनाम दिया जाता है उनका काम नाम एवं यश ईश्वर की वीरता शक्ति ही चलाती है हमारे पाठक विचार तो करैं कि ऐसी बातों को झूठ-गप्प-हास्यास्पद कहना विद्या और बुद्धि से बैर ही करना है कि और कुछ? बाहन अनेक हैं पर यदि सब का वर्णन किया जाय तो लेख बहुत बढ़ जायगा इससे मुख्य २ स्वरूपों के बाहनों का मुख्यार्थ लिखते हैं।

३ विष्णु भगवान के बाहन गरुड़ हैं जिनका बेग पवन से सैकड़ों गुणा अधिक है इसका अर्थ यह है कि जिनका काम काज विश्वव्यापी परमेश्वर चलाता है या यों कहो जो लोग केवल उसी के आसरे सब काम करते हैं अथवा सब कामों में उसकी प्रेममयी मूर्ति हृदय में धारण किये रहते हैं वे पवन की गति से भी अधिक शीघ्र कृतकार्य होते हैं अथवा प्रेमदेव अपने लोगों की सहायतार्थ पवन से भी शीघ्र आसक्ते हैं! गरुड़ सांपों के भक्षक हैं अर्थात् ईश्वर के निकटवर्ती लोग ऐसे कपटी जनों के जानी दुश्मन हैं जो ऊपर से कोमल २ चिकना २ स्वरूप रखते हैं पर भीतर विष भरे रहते हैं।

४ गणेश जी अर्थात् समस्त सृष्टि समूह के स्वामी—विद्या वारिधि बुद्धि विधाता—जगत्राता मूषक बाहन हैं अर्थात् ऐसे जीवों (मनुष्यों) के हृदय में आरूढ़ होते हैं अथवा ऐसों का कार्य संचालन करते हैं जो (लोग) देखनेमें छोटे अर्थात् साधारण संसारियोंसे भी वाह्याडम्बर में न्यून हैं पर वास्तव में अभी ऐसे हैं कि जब सारा संसार सोवे तब भी अपना कर्तव्य साधन न छोड़ें बुद्धिमान और खोजी ऐसे हैं कि सात पर्दे की बस्तु को ढूंढ़ ही लावैं और उसके छोटे से छोटे अंश को भी प्रथक् कर दिखवैं तथा चतुर इतनेहै कि शत्रु लाख—मेंबमेंब—करने वाला हो तौ भी उससे सावधान ही रहें इत्यादि चूहे के अनेक गुण हैं जिन्हें विचार लेनेसे भगवान इन्दुर बाहन की अनन्त महिमा का बहुत कुछ भेद खुल सक्ता है ॥

५ भगवान भोलानाथ के बाहन वृषभादि का वर्णन पुरानी संख्याओं में लिखा जाचुका है और—शैवसर्वस्व—नामक पुस्तिका में प्रथक छप रहा है इससे बार २ लिखने की आवश्यकता नहीं है सूर्य और इन्द्र के बाहन घोड़ा और हाथी हैं उन पर किसी को दश न का ठौर ही नहीं है फिर लिखें हीं क्यों दुर्गा जी के बाहन का तात्पर्य लिखी दियागया सरस्वती जीका बाहन हंस है जिसे सभी जानते हैं कि दूध का दूध पानी का पानी करने वाला है चित्रों में पाठकों ने देखा होगा कि जिस हंस पर भगवती भारती देवी आरूढ़ होती हैं उसके मुंह में मोती की माला रहती है इसका भावार्थ वह लोग भलीभांति समझ सक्ते हैं जो जानते है कि मधुर मनोहर कोमल बचन रचना को हमारे देश के लोग मुक्तमाल से सादृश्य देते हैं बहुधा सभी लोग कहते हैं कि फलाना बातें क्या करता है अथवा काव्य क्या रचता है मानो मोती पिरोता है इस कहावत से भी जिसने यह न सोचा कि सरस्वती जी के कृपा पात्र को क्षीर नीर विभेदक एवं—मधुर कोमल कांत पदावली—उच्चारक होना चाहिये उसे हम क्या समझावेगे ब्रह्मा जी तो समझा ले ! शेषम्पुनः

—

समये का फेर ॥

(मुद्रित से आगे)

और सुनो अगले दिनों में सब भले मानस ही न होते थे बेहाड़े फक्कड़ भी बहुत से थे जिन्हे कमाने धमाने की कुछ फिकर न रहती थी पुरखों की कमाई अथवा जजमानी प्रोहिती की आमदनी से गुजारा चला जाता था हर घड़ी दो चार टेलुहों को लिये

गपशप हांका करते थे या चङ्ग बजाया करते थे सांझ सवेरे बूटी छानने तथा गांजा चरस उड़ाने के सिवा कुछ काम न रखते थे आम लोग उनकी सोहबत को अच्छा न समझते थे पर हमारी जान में इस जमाने के भलेमानसों से उनकी जिन्दगी लाख दरजे अच्छी थी क्योंकि उनको अपने कुल के आचार का इतना ध्यान रहता था ब्राह्मण चत्री का लड़का चाहे जितना बिगड़ जाय पर नशा वही खाता पीता था जो उसकी जाति में चल आया हो इसके विरुद्ध इन दिनों (जिसे तुम सुधरा हुवा समय कहते हो) कहो जितने बाजपेयी और उनसे भी बढ़के संख्या सी हम दिखला दें जो जाहिरा में तो बड़े २ पाखण्ड रचते हैं पर छिप २ के होटलों में छत्तिसों जाति के साथ एक ही गिलास में मदिरा पीते और सब खज्ज अखज्ज खाते हैं तथा इस कपट रीति से सारे मित्रों और नातेदारों का धरम लेते हैं यह बात उन फक्कड़ों में लाख कोस न थी इसके सिवा बंधुभाव उनमें इतना था कि यद्यपि बहुधा किसी को कुछ माल न गिनते थे तो भी अपने पड़ोस के तथा जाति के बृद्ध पुरुषों को जिन्हें चचा ताऊ इत्यादि कहते थे उनका इतना संकोच करते थे कि वे नाराज हो के चाहे जैसी कहनी अनकहनी कहलें पर उत्तर देना कैसा आंखें सामने न करते थे तथा जिन्हें अपना मित्र सङ्गी भाई हितैषी इत्यादि मानते थे उनके लिये जान तक देने को तैयार रहते थे बरंच विचार के देखो तो उनके फक्कड़पन का उद्देश्य ही यह पावोगे कि अपने तथा अपनायत वालों के साथ विरोध करने वाले को जैसे बने वैसे नीचा दिखाये रहना क्या यह उत्तम गुण इस काल के भद्र पुरुषों में भी है? हम तो देखते हैं नई उमर के पढ़े लिखे लोग पड़ोसी बुड्ढे को क्या सगे बाप की भी झिड़की अपना सौभाग्य समझ के आदर के साथ नहीं सहते एवं चाहे जैसा गहिरा मित्र अथवा उपकारी क्यों न हो पर उसकी बात अटकने पर टालमटोल हो करते हैं सामर्थ्य होने पर भी किसी आत्मीय के धन मानादि की रक्षार्थ अपने लिये थोड़े फँसाव में डालना भी बेवकूफी समझते हैं सच है नई २ अक्लि के आगे पुरानी बातें बेवकूफी तो हुई हैं! पर याद रक्खो जिस बेवकूफी से अपने धन धर्म एकता प्रतिष्ठा बल बड़ाई का अनुका बना रहे वह बेवकूफी ऐसी समझदारी से लाख विस्वा अच्छी है जिस से ऊपर वाली सभी बातों पर पानी फिरता हो जैसा इस

समय में देख पड़ता है कि आगे के बेवकूफ़ भले बुरे खोटे खरे चाहे जैसे थे पर अपनी बात निभाने के लिए किसी हानि तथा कष्ट से मुँह न मोड़ते थे साधारण लोग भी कहा करते थे कि बात और बाप एक है पर आज कल के अकलमंदों ने इस के विरुद्ध यह कहावत निकाली है कि—मर्द की ज़बान और गाड़ी का पहिया फिरता ही रहता है—यह बात कहते ही नहीं हैं वरंच सौ में नब्बे प्रत्यक्ष दिखा देते हैं कि आज उसी से बात कटी रोटी है कल उसी से हड़पाई का ठहर जायगी मुँह से मित्र भाई चचा क्या कहो बाप बना ले पर जी में यही रहता है कि किसी तरह इसको उड़ाना चाहिये अपनी अटो जमाना चाहिये आगे के लोग कही हुई बात से लिखी हुई का और भी अधिक ध्यान रखते थे सब बहुधा कहा करते थे भाई सुफेदी पर स्याही चढ़ा के धर्म तो न छोड़ेंगे चार जनों के आगे झूठा बनने से मर जाना अच्छा है पर अब बड़े बड़ों से चाहे जो लिखवा लो पर काम पड़ने पर सिवा टाले बाले के कुछ न देखोगे लोक लज्जा तो कोई बात ही नहीं रही अपने जी में जो जैसा चाहे समझा करे कोई मुँह पर कहे थोड़ी आवैगा बस छुट्टी हुई इसी भाँति परलोक का भी खयाल है अगले लोग समझते थे कि और बातों में चाहे जो करना पड़े पर गऊ ब्राह्मण के बीच में बेईमानी करेंगे तो नर्क में भी ठौर न मिलेगा अब इसके विरुद्ध ब्राह्मणों की निन्दा करना बाजे२ समुदायों का धार्मिक कृत्य हो गया है और उनका धन हरना शुक्लाधान्य मान हरना बुद्धिमत्ता एवं येनकेन प्रकारेण नीचा दिखाये रहना परम चातुर्य है तथा गौवें बोल नहीं सकतीं इससे और भी दुर्दशा सहती हैं सैकड़ों ब्राह्मण वैश्य उन्हें प्रत्यक्षवा हेर फेर के साथ बधिकों के घर पहुँचाते हैं बीसियों धर्मध्वजी उनकी रक्षा के बहाने चन्दा समेट २ अपना पेट भरते और अपनी दुराशा की पूर्ति करने वाले समुदाय के आगे भेंट धरते रहते हैं यह हम नहीं कहसक्ते कि अगे छल कपट अधर्म अन्याय का कहीं लेश न था नहीं अच्छे बुरे लोग सतयुग तक में थे पर तो भी दुराचार और कुव्यवहार की एक हद्द थी जिस का उल्लंघन करना वे लोग भी अच्छा न समझते थे जिन का निर्वाह ही बुरीरीति पर निर्भर था यहाँ तक कि डाकू और लुटेरे भी ब्राह्मणों दुर्बलों और अबलाओं को क्षमा देते थे ॥

शेषमग्रे

श्री पंडित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमत्प्रेस
कालाकांकर में प्रकाशित हुआ

प्रेमएवपरोधर्मः
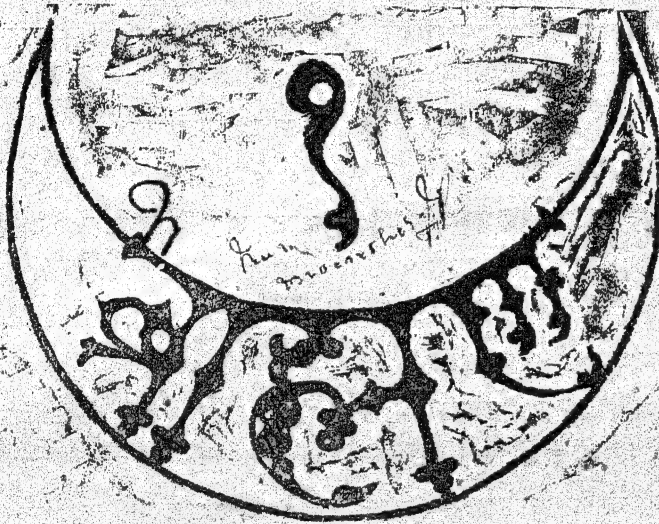
शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्न धीराः ॥

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 MARCH H. C. 6 } No 8
खण्ड ६ { कानपुर १५ मार्च हरिश्चन्द्र सं० ६ } संख्या ८

नियमावली

—०—

१–वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का =) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२–ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ॥

३–विज्ञापन की छपाई -)प्रतिपंक्ति लियाजायगा विशेष पूछनेसे मालुम होगा

४–बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन मूल्य पत्र न दिया जायगा ॥

५–लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर

वृद्ध ॥

इन महा पुरुष का वर्णन करना सहज काम नहीं है—यद्यपि अब इनके किसी अङ्ग में कोई सामर्थ्य नहीं रही अत: इनसे किसी प्रकार की ऊपरी सहायता मिलना असम्भव सा है पर हमें उचित है कि इनसे डरें इनका सन्मान करें और इनके थोड़े से बचे खुचे जीवन को गनीमत जानें क्योंकि इन्होंने अपने बाल्यकाल में विद्या के नाते चाहे काला अक्षर भी न सीखा हो युवावस्था में चाहे एक पैसा भी न कमाया हो कभी किसी का कोई काम इन से न निकला हो तथापि संसार की ऊंच नीच का इन्हें हमारी अपेक्षा बहुत अधिक अनुभव है इसी से शास्त्र की आज्ञा है कि वयोधिक शूद्र भी द्विजाति के लिये माननीय है यदि हम में बुद्धि हो तो इन से पुस्तकों का काम लेसक्ते हैं बरुञ्च पुस्तक पढ़ने में आंखों को तथा मुख को कष्ट होता है न समझ पड़ने पर दूसरों के पास दौड़ना अथवा अपनी ही बुद्धि को दौड़ाना पड़ता है पर इनसे केवल इतना कह देना बहुत है कि हां बाबा फिर क्या हुआ? हां बाबा ऐसा हो तो कैसा हो? बाबा साहब यह बात कैसी है? बस बाबा साहब अपने जीवन भर का आन्तरिक कोष खोल कर रख देंगे इसके अतिरिक्त इनसे डरना इसलिये उचित है कि हम क्या हैं हमारे पूज्य पिता चाचा ताऊ भी इनके आगे के छोकड़े थे यदि यह बिगड़ें तो किस को कलई नहीं खोल सक्ते? किस के नाम पर गट्टा सी नहीं सुना सक्ते? इन्हें संकोच किस का है? बक्की के सिवा इन्हें कोई कलंक ही क्या लगा सक्ता है? जब यह आप ही चिता पर एक पांव रक्खे बैठे हैं कब्र में पांव लटकाये हुये हैं तो इनका कोई करी क्या सक्ता है यदि इनकी बातें कुबातें हम न सहें तो करैं क्या? यह तनिक सी बात में कुपित और कुंठित हो जांयगे और असमर्थता के कारण सच्चे जी से शाप देंगे जो वास्तव में बड़े तीक्ष्ण शस्त्र की भांति अनिष्टकारक होगा जब कि महात्मा कबीर के कथनानुसार मरी खाल की हाय से लोहा तक भस्म होजाता है तो इन की पानी भरी खाल (जो जीने मरने के बीच में है) की हाय कैसा कुछ अमङ्गल नहीं कर सक्ती! इससे यही न उचित है कि इनसे सच्चे अशक्त अंत:करण का आशीर्वाद लाभ करने का उद्योग करें। क्योंकि समस्त धर्म ग्रन्थों में इनका आदर करना लिखा है सार राजनियमों में इनके लिये पूर्ण तथा दण्ड की विधि नहीं है और सोच

देखिये तो यह दया पात्र जीव हैं क्योंकि सब प्रकार पौरुष से रहित हैं केवल जीभ नहीं मानती इससे आंय बांय शांय किया करते हैं या अपनी खटिया पर थूकते रहते हैं इस के सिवा किसी का बिगाड़ते ही क्या हैं हां इस दशा में भी दुनिया के झंझट छोड़ के भगवान का भजन नहीं करते वृथा चार दिन के लिये झूठी हाय २ में कुढ़ते कुढ़ाते रहते हैं यह बुरा है! पर केवल इन्हीं के हक़ में दूसरों को कुछ नहीं फिर क्यों इनकी निन्दा की जाय? आज कल के बहुतेरे होनहार एवं यत्न शील युवक कहा करते हैं कि बुड्ढे खबीसों के मारे कुछ नहीं होने पाता यह अपनी पुरानी सड़ी अक़िल के कारण प्रत्येक देशहितकारक नव विधान में विघ्न खड़ा कर देते हैं पर हमारी समझ में यह कहने वालों की भूल है नहीं तो सब लोग एक से नहीं होते यदि हिक़मत के साथ राह पर लाये जांय तो बहुत से बुड्ढे ऐसे निकल आवेंगे जिनसे अनेक युवकों को अनेक भांति की मौखिक सहायता मिल सकी है रहे वे बुड्ढे जो सचमुच अपनी सत्याभाषी लकीर के फकीर अथवा अपने ही पापी पेट के गुलाम हैं वे प्रथम तो हई के जने? दूसरे अब वह समय नहीं रहा कि उनके कुलक्षण किसी से छिपे हों फिर उनका क्या डर? चार दिन के पाहुन कछुआ मछली अथवा कीड़ों की परसी हुई थाली कुछ अमौती खा के आये हो नहीं कौआ के लड़के हई नहीं बहुत जियेंगे दश वर्ष इतने दिन में मर पच के दुनिया भर का पीकदान बन के दस पांच लोगों के तलवे चाहट के अपने स्वार्थ के लिये पराये हित में बाधा करेंगे भी तो कितनी? सो भी जब देश भाइयों का एक बड़ा समूह दूसरे ठौर पर जारहा है तब, आखिर तो थोड़े ही दिन में आज मरे कल दूसरा दिन होना है फिर उनके पीछे हम अपने सदुद्योगों में त्रुटि क्यों करें जब वह थोड़ी सी घातें की जिन्दगी के लिये अपना बेढङ्गापन नहीं छोड़ते तो हम अपनी बृहज्जीवनाशा में स्वधर्म क्यों छोड़ें हमारा यही कर्तव्य है कि उनकी सुश्रूषा करते रहें क्योंकि भले हों वा बुरे पर हैं हमारे ही! अतः हमें चाहिये कि अदब के साथ उन्हें संसार की अनित्यता अथच ईश्वर धर्म देशोपकार एवं बन्धु वात्सल्य की सत्यता का निश्चय कराते रहें सदा यह भांति रहें कि हमारे तो तुम बाबा ही हो अगले दिनों के ऋषियों की भांति विद्या वृद्ध ज्ञान वृद्ध तभी

बृद्ध हो तो भी बाबा हो और बाबा लोगों की भाँति—आपन पेट हाहू। मैना देहौं काहू—का सिद्धान्त रखते हो तो भी क्यों बृद्धता के नाते बाबा ही हो पर इतना स्मरण रक्खो कि अब जमाने की चाल वह नहीं रही जो तुम्हारी जवानी में थी इससे उत्तम यह है कि इस वाक्य को गाँठी बांधो कि—चाल वह चल कि पसे मर्ग तुझे याद करें ! काम वह कर कि जमाने में तेरा नाम रहे—नहीं तो परलोक में बैकुंठ पाने पर भी उसे थूक २ के नर्क बना लोगे इस लोक का तो कहनाही क्या है! अभी थूक खखार देख के कुटुम्ब वाले घृणा करते हैं फिर कृमि विट भस्म की अवस्था में देख के ग्राम वासी तथा प्रवासी घृणा करेंगे और यदि वर्तमान करतूतें विदित होगईं तो सारा जगत सदा थुड़ु २ करेगा ! यों तो मनुष्य की देह ही क्या जिसके यावदवयव घृणामय हैं केवल बनाने वाले की पवित्रता के निहोरे श्रेष्ठ कहलाती है नोचेत् निरी—खारिज खराब हाल खाल की खलीती है—तिसपर भी इस अवस्था में जब कि—निबृत्ता भोगेच्छा पुरुष बहु मानो बिगलिता समानाः स्वार्याताः सपदि सुहृदो जीवित समाः। शनैर्यं ष्ट्युत्थान घन तिमिर रुद्धे पि नयने अहो दुष्टा काया तदपि मरणापाय चकिता—यदि भगवच्चरणानुसरण एव सदाचरण न होसका तो हम क्या हैं राह चलने वाले तक धिक्कारेंगे और कहेंगे कि—कहा घन धामैं धरि लेहुगे सरा मैं भए जीरन जरा मैं तहू रामैं ना भजत हौ-यदि समझ जाओगे तो अपना लोक परलोक बनाओगे दूसरों के लिये उदाहरण के काम आओगे नहीं तो हमें क्या है हम तो अपनी वाली किये देते हैं तुम्हीं अपने किये का फल पाओगे और सरग में भी बैठे हुए पछिताओगे लोग कहते हैं बारह बरस वाले को वैद्य क्या ? तुम तो परमात्मा की दया से पच गुने छगुने दिन भुगताए बैठे हो तुम्हें तो चाहिये कि दूसरों को समझाओ पर यदि स्वय कर्तव्याकर्तव्य न समझो तो तुम्हें तो क्या कहैं हमारी समझ को धिक्कार है जो ऐसे वाक्य रत्न ऐसे कुत्सित ठौर पर फेंका करते हैं ॥

—0—

पौराणिक गूढार्थ ॥

अंग्रेजी ढङ्ग की शिक्षा पाने वालों में न जाने यह दोष क्यों होजाता है कि जो बातें सहज में नहीं समझ पड़तीं उन्हें मिथ्या समझ बैठते हैं यदि इतना ही होता तो भी इसके अतिरिक्त कोई बड़ी हानि न थी कि थोड़े से लोग कुछ का कुछ समझ लें पर खेद यह है कि वे अपनी अनुमति

देने में अपने पूर्वजों की प्रतिष्ठा का कुछ भी ध्यान न करके बिन समझी बातों के विषय में भी बहुधा ऐसी निरंकुश भाषा का प्रयोग कर बैठते हैं जिसमें विद्वानों को खेद और साधारण लोगों को क्षोभ उत्पन्न हो के परस्पर की प्रीति में बड़ा भारी धक्का लगता है आज कल सब समाजें आपस के हेल मेल को आवश्यक समझती हैं एवं विचारशील लोग सारे धर्म कर्मादि से एकता को श्रेष्ठ समझते हैं पर इन ऐक्यभावुकों में भी बहुत से लोग ऐसे विद्यमान हैं जो अपने यहां के महाविरे और प्राचीन काल के रङ्ग ढङ्ग से अनभिज्ञ होने के कारण जब तब कह बैठते हैं कि पुराण मिथ्या हैं प्रतिमा पूजन वाहियात है यह सब पंडितों के ढकोसले हैं ऐसी २ बातें आदि में पादरियों ने प्रचार की थीं पर यतः उन का मुख्य अभिप्राय इस देश के भोले भाले लोगों को अपनी जथा में मिलाना मात्र था हमारे देश जाति धर्म भाषादि से ममता न थी इस से उन के कथन पर हमें कोई आक्षेप नहीं है विशेषतः इस काल में जबकि उनका प्राबल्य बहुत कुछ क्षीण हो गया है और काल भगवान से आशा है कि कुछ दिन में कुछ भी न रक्खेंगे इसके अनन्तर दयानन्द स्वामी तथा उनके सहकारियों ने ऐसाही उपदेश करना स्वीकार किया था पर उन्हें भी हम कोई दोष न देंगे क्योंकि उन का मुख्य प्रयोजन भारत संतान को घोर निद्रा से जगाना था जिस की युक्ति उन्होंने यही समझी थी कि कुछ कष्ट देने वाली तथा कुछ झुंझलाहट बढ़ाने वाली बातें कहके चौकन्ना कर देना चाहिये पर इस काल में परमेश्वर की दया से कुछ चैतन्यता आ चली है अपना भला बुरा सूझने लगा है इस से हमारे भाइयों को उचित है कि अब विरोध बढ़ाने वाली बातों को तिलांजुली दें और अपने को अपना समझें हम देव प्रतिमा पर सारा धन चढ़ा दें तो भी घर का रुपया घरही में रहैगा ब्राह्मणों को सर्वस्व दान कर दें तो भी देश का धन देशही में रहैगा फिर इस में क्या हानि है श्री सुरेन्द्र नाथ बनर्जी को देखिये कि न कभी किसी मंदिर में दर्शन करने जाते हैं न मूर्ति पूजकों का सा व्यवहार वर्ताव रखते हैं पर सन् १८८३ में एक शालग्राम शिला के पीछे कारागार तक हो आए क्योंकि वे भलीभांति समझते हैं कि अपने गौरव का संरक्षण इसी में है। प्रतिमा पूजन के निषेधक श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती उन दिनों जीते थे पर सुरेन्द्रो बाबू

के विरुद्ध एक अक्षर भी न कहा जाता काम पड़ता तो मुंशी इन्द्रमणि की भांति इन की सहायता में भी अवश्य कटिबद्ध होजाते क्योंकि गौरव संस्थापन का तत्व उन्हें अविदित न था! यदि इन आदरणीय पुरुषों के ऐसे २ कामों से हम शिक्षा ग्रहण करें तो बतलाइए क्या हानि है? फिर अपनी बातों को बुरा कहके अपने भाइयों में बुरा बनना कौन सी भलाई है? पुराण यदि सचमुच दूषित हों तो भी हमारे आदरणीय पूर्वजों के बनाए हुए हैं अतः माननीय हैं! कुछ न हो तो भी उनके द्वारा संस्कृत के अनेकानेक महाविरे मालूम होते हैं फिर क्यों उन की निन्दा कीजाय? क्या चहारदर्वेश और राबिन्सन क्रूसो की कहानियों के समान भी वे नहीं हैं? जिन के पढ़ने में लोग महीनों आंखें फोडते हैं! जिन्हें विचारशक्ति से तनिक भी काम लेना मंजूर न हो उन्हें भी यह समझ के पुराणों की प्रतिष्ठा करना चाहिये कि सैकड़ों ब्राह्मण भाइयों की गृहस्थी उन्हीं से चलती है सैकड़ों हिन्दू भाइयों को लोक परलोक बनने का विश्वास उन हीं पर निर्भर है! फिर एक बड़े समूह को कुंठित करना कहां की बुद्धिमानी है? विशेषतः जो लोग चाहते हैं कि देश में एका बढ़े और देशहित के कामों में सर्वसाधारण से सहायता मिले उनके लिये! अभाग्य वशतः हमारे संस्कार बिगड़ गये हैं विदेशी भाषाओं के मारे संस्कृत का पठन पाठन छुट गया है अपने यहां की उत्तम बातों का खोजना अनभ्यस्त होरहा है नहीं तो हम समझा देते वरंच सब लोग आप समझ जाते कि जिन सज्जनों ने संसार के सारे झगड़े केवल परमेश्वर का भजन अथवा जगत का उपकार करने के लिये छोड़ दिये थे जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग विद्या पढ़ने और ग्रंथ बनाने में बिताया था उन की कोई छोटी से छोटी बात भी निर्थक नहीं है फिर पुराण तो बड़े २ ग्रंथ हैं उनमें ऐसी बातें क्योंकर होसकी हैं जो आत्मिक सामाजिक अथवा शारीरिक लाभदायिनी न हों. इस लेख में हम थोड़ी सी उन्हीं बातों का मुख्य अभिप्राय दिखाया चाहते हैं जिन्हें लिखने वालों ने बड़ी बुद्धिमता से हमारे ज्ञान मान कल्याण की बृद्धि के लिये लिखा है पर कविता न पढ़ने के कारण हम समझते नहीं हैं और बिना समझे बूझे दांत बाया करते हैं ईश्वर धर्म विद्या बीरतादि की कल्पित मूर्ति उनके वेष वाहनादि का वर्णन शिव दुर्गा इत्यादि के चरित्र यद्यपि

हम मनुष्यों के रूप रङ्ग चाल व्यवहार से विलक्षण है पर ऐसे नहीं हैं कि उनके श्रवण मननादि से कोई न कोई उपदेश न प्राप्त हो हां यदि हम उधर ध्यान ही न दें वरंच हठ के मारे हँसी उड़ावैं तो पुराणों का क्या दोष है? हमारी ही मूर्खता है! यदि कुछ दिन काव्य पढ़िये और कल्पना शक्ति से काम लेना सीखिये अथवा हमारी निम्न लिखित पंक्तियों को ध्यान से देखिये और ऐसीही ऐसी बातों में बुद्धि दौड़ाइये तो निश्चय होजायगा कि पुराणों की कोई बात मिथ्या नहींहै वरंच जहां२ मिथ्या की भ्रांति होती है वहां गूढ़ार्थ भरा हुवा है जिसे अङ्गीकार किये बिना भारत का कल्याण नहीं होसक्ता ॥ शेषआगे

—o—

समय का फेर ॥

(५ खण्ड की ११ संख्या से आगे)

अब तो हम देखते हैं कि किसी को संतुष्टता हई नहीं छोटे धंधेवालों का तो कहनाही क्या है बड़े २ कोठी वाल हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं यह तो बहुधा सुन लीजिए कि आज फलाने बिगड़ गये आज ढिकाने का दिवाला निकल गया पर यह बरसों से सुननेही में नहीं आता कि फलाने फलाने रुजगार में बने बैठे योंही नोकरी करने वालों की कौन कहे उन की जड़ तो धरतीसे सवा हाथ ऊपर (अधड़ में) रहती ही है जो रईस कहलाते हैं जिनके यहां दस बीस जने नोकरी करते हैं वे स्वयं हाथ २ में फंसे रहते करैं क्या विचारे आमदनी आगे कीसी रही नहीं खर्च कम करैं तो चार जने उंगली उठावैं पुरखों का नाम धरा जाय। सम्पतिथोरी पति बड़ी यहै विपति इक आय। ज्यों त्यों भामाला बांधे बैठे रहते हैं पता लगाओ तो ऐसा बिरला ही अमीर होगा जो कर्ज में न डुबा हो लोगों की नियत का यह हाल है कि आगे कौन किसके यहां से कितना रुपया कब उधार ले आता है कब दे आता है कोई जानता भी न था लेने वाला समझता था कि न देंगे तो पांच पंच में मुंह कैसे दिखावैंगे मर के भी परमेश्वर के यहां देना पड़ेगा। ऋणहत्यानमुच्यते। इससे चाहे जो हो लहनदार से पीछा छुड़ाही लेना चाहिये यहां तक कि बाप दादे के हाथ का बीसियों बरस का देना निपटा के जो गया कर आता था वह समझ लेता था कि अब सुचित हुये इसी भांति लहनदार समझता था कि फलाने भले मानस हैं जब उनके पास होगा वे देंगे नहीं न करैंगे चार जने के आगे एक्का फजीती से क्या फायदा भाग

का होगा तो मिली रहैगा नहीं तो पुरबुले में एक २ के सौ सौ मिलैंगे और जो हमीं अगले जनम के ऋणी होंगे तो उरिण होगये पर इस जमाने में पुरखों का कर्ज तो कौन देने आता है (बरुक गया गदाधर पूर्ब जन्म इत्यादि पाखण्ड समझे जाते हैं) खास अपने हाथ का लिखा तमस्सुक तीन बरस बीत जाने पर रद्दी कर देते हैं गवाहों को झूठा बनाते हैं बीच में मांगने वाला मांगे तो आंखें दिखलाते हैं, मुकद्दिमा होने पर बारिस्टर ढूंढते हैं जिसमें कोई राह निकल आवै औजमा हजम होजाय इधर पाने वाला जिस समय उधार देता है तभी सोच लेता है कि बियाज का छियाज जोड़के एक २ के छः छः लेने चाहिये यदि कोई सूरत निकल आवै तो इसका घर और जेवर भी हाथ लग जायगा कहीं किसी तरह १५ दिन को बड़े घर भेज सकें तो सदा आंख नीची रक्खैगा भला इन नीयतों में कभी किसीका भला हुआ है? अविश्वास इतना फैल गया है कि हम अपनी जवानी में अमुक सज्जन से हजारों का गहना गुरिया मांग लाते थे और दे आते थे हमारे घर की सारी चीजें सदा आज इसके यहां पड़ी हैं कल उसके यहां पड़ी हैं पर कभी एक चांदी के छल्ले को भी भूल न पड़ी पर आज कल तो किसी को कुछ दे दीजिए! यदि मार न रक्खैगा तो भी अस्त व्यस्त अवश्य ही कर देगा और जो किसी के यहां कुछ मांगने जाओ तो दी हुई बस्तु के अवयवों की गिनती करेगा चार जनों के सामने लिख लिखा के देगा तथापि जी में समझेगा कि किसी प्रकार कुछ भी बिगड़े तो एक २ के दो दो लेना चाहिये ऊपर से कायल करना चाहिये इस कलजुगहापन का कारन यह है कि तभी लोग अपनी और पराई इज्जत एक समझते थे पर अब जिसे देखो अपनी २ पड़ी है दरिद्र दिन २ बढ़ता जाता है लोगों के दीन धरम का ठिकाना नहीं है फिर किस का कौन होता है? तुम लोग एका एका चिल्लाया करते हो पर हम जानते भी न थे कि एका किसे कहते हैं तिस पर भी अपने गांव की लड़की जहां ब्याही होती थी वहां के कुये का पानी न पीते थे किसी का समधी दमाद आता था तो उसे अपना निज सम्बन्धी समझ के तन मन धन से सेवा में हाजिर रहते थे गांव में जिस के यहां बरात आती थी उसे आटे की तो चिन्ता ही न होती थी सभी भलेमानस दस २ पांच २ सेर पिसवा के भेज देते थे घी दूध जिस के यहां होता था वह पहुंचा देता

था बरञ्च कभी २ रुपये की ज़ूरूरत पड़ने पर भी कोई कानोंकान न जानता था लड़की वाले के यहां पहुंच जाता था इसी से एक दूसरे के लिये जी देने को तैयार रहता था क्या तुम भी ऐसा करते हो ? कि छाती ठोंक २ के लेकचर ही देना जानते हो ! गाढा समय आने पर सांथ पड़ोसी हेती ब्योहारी को घूल न उड़ाओ यही गनीमत है काम पड़ने पर अपने पास से देना दूर रहा दूसरे की गांठ न टटोलो यही बहुत है इसी से कोई तुम्हारे किसी अवसर पर भी साथ नहीं देता कौन साथ दे कहीं एक हाथ से ताली बजतीहै

शेष आगे

नया सम्वत्

धनि धनि धनि करुणा निधि केशव करी कृपा अतिभारी। आजु हमें नव वर्ष दिखायो सकल विघनगन टारी ॥ यों तो असन बसन धन जीवन देत रहत सब सोई। जितो अधिक धनि वाद दीजिए तितो अलप अति होई ॥ तदपि आजु तो सम्वत उनइस से सैंतालिस लाग्यो। यह विशेष हरि दया देखि चित चाहिय अति अनुराग्यो ॥ ऐसे अवसर कस न कहिय जय जय जय त्रिभुवन स्वामी। तव पावन पद पंकज हेतु नमामि नमामि नमामी ॥ औरौ उचित आज सब कहँ जे भारत पुत कहावैं। सब चिन्ता तजि घर बाहर की मङ्गलमोद मचावैं॥ देवी पूजा माहिं मगन ह्वै करहिं पाठ अगियारी। बरतहिं नयो अन्न पट भूषण निज समरथि अनुसारी ॥ अगिले लोगन के समान निजहित परहित अभिलाखैं। एक दूसरे सों हिलिमिलि कै बरष शुभोगम भाखैं ॥ लेहु बधाई प्यारे भाई यह शुभ सम्वत आयो। जेहि कहं जगत जीति भुजबल सों बिक्रम देव चलायो ॥ सकलदुष्ट दुर्जन विषम करि हरि सब पीर प्रजा की। भरि भारत घर २ सुख सम्पति नीव धरी उन याकी ॥ पहिले पहिल उजैन माहिं जब अनुष्ठान यहि करौ। भयो होयगो तब को आनन्द सोइ जानहि जिन हेरो ॥ पै इन बातन माहिं कहा अब कहत महत दुख लागे। सपन सम्पदा कथा बृथा है सब सुभाग जब भागे ॥ अब तौ हाय हमारो सम्बत रह्यो पतरन माहीं। अथवा लिखहिं बहिन महं बनिया जे जानत कछु नाहीं ॥ दूजे लोग नये बतसर महं आनन्द अमित मनावैं। हम निज पापी पेट हेत उनही के पीछे धावैं। धन बल बैभव सब उन ही को हमरे हाथ कहा है। हयां तो अपनो दुखहू रोवत उपजत शंक महा है ॥ उन हीं के नव वर्ष हर्ष में हमहू

धाय मिलि जाहीं। हमरो सम्बत कब आवत कब जात जानियत नाहीं। जा सम्बत सों कछु तनिकहू नहिं सम्बन्ध हमारो। निज देसिन के सुमिरन हित परदेसिन जाहि संचारो॥ प्रकृतिहु के अनुकूल नाहिं जो होत कुरितु के माहीं। जब पतझर सों विटप अशोभित होहिं लोग सिसिआहीं। तामें तो हम निज २ वित भरि घर २ मोद मनावैं॥ हाय दीनता हाय ख़ुशामद नाना नाच नचावैं॥ पै जो हमरो संबत है! जेहि हमरे पुरिखन थाप्यो। जेहि महँ सहजहि जगत रहत है नव शोभा सुख ब्याप्यो॥ ताको गमन आगमन हू हा! केतिक लोग न जानैं। जे जानैं तेऊ निजता बिन उचितप्रमोद न ठानैं॥ केवल निरधन बिप्र उदर हित द्वार २ जे डोलैं। टका दच्छिणा हेत सु काहु २ सम्बत पत्रहि खोलैं॥ सोऊ कोऊ २ बूढ़े दयावान-सुनि लेहीं। नव शिच्छित देखतहि दूरि ते दुतकारत चलि देहीं॥ हा द्विज कुल! जेहि बड़े २ नृप रहे नवावत माथा। सो विडम्बना सहि कुकाल बस इत उत ओड़त हाथा॥ शक्ति रही नहिं काहू बिधि की पूजन का को कीजे। हा अभाग! निज देश माहिं रहि परदेशी सम जीजे॥ कर अरु चन्दा पय हा लछमी! जाय विदेश बसी है। नोन तेल लकरिहु के हित नित रहति प्रजा तरसी है॥ हाय सरस्वति! तोहि भारती कहत रहे सब कोई। सो अब लन्दन गए विना तव सिद्धि न कैसे हू होई॥ हा दुर्गा! तव नाम सुने सब काम्पत रहे सुरारी। सोऊ पृथीराज के साथहि हम कहं छोड़ि सिधारी। अब सब भांति अशक्त हवन हित कहां अन्न घृत पावैं। हम तो साग पात सों हा! हा! जीवन काल बितावैं। ऐसी दीन दशा में सूझै सम्बत सुख केहि भांती। सुधि विक्रमादित्य की करि कै ओरो दरकति छाती॥ जिन के राजमाहिं सब धरती रही धर्म धन छाई। तिनकी कथहु दैव वस अब हा! कतहुं न परत सुनाई॥ केवल टूटे फूटे खण्डहर लखि उजैन के माहीं। छाती पर पाथर धरि २ कै सहृदय जन रहि जाहीं॥ प्रभु को नाम पतितपावन है होति याहि ते आशा। कबहूं निज दिशि देखि करहिंगे दुख दुरगति कर नाशा॥ सुमति सहोदरभाव सिखैहैं सुख सम्पति सब देहैं। तबहीं हम नववर्ष मनैहैं जब नवजीवन पैहैं॥ राजा प्रजा बृद्ध बालक नर नारि सबै मिलि साथा। करिहैं जैजैकार मुदित मन जोरि २ जुग हाथा॥ जय सुखदायक जय जगनायक जय२ हृदय बिहारी। जय जय जय प्रिय पूज्य प्रेममय बलिहारी बलिहारी॥

प्राप्ति स्वीकार॥

इश्क चमन–श्रीनागरीदास रचित और श्रीराधा चरण गोस्वामी द्वारा प्रकाशित निछावर)॥ इसका क्याही कहना है प्रत्येक दोहा प्रेमियों के लिए गुरुमंत्र रसिकों के लिये अमृत का घूंट और सहृदयों के लिये स्वर्ग बाटिका का दृश्यहै॥

दीप निर्वाण उपन्यास–श्री मुंशी उदितनारायण वकील द्वारा अनुवादित और बाबू रामकृष्ण खत्री भारतजीवन सम्पादक कर्तृक प्रचारित मूल्य ।≈) महाराज पृथिवीराज के समय भारत सन्तान की क्या दशा थी तथा किसी देश के सौभाग्य का दिया क्योंकर बुझता है? यह देखना हो तो इसे देखिये। उक्त मुंशी जी छिपे हुए नागरी देवी की गद्य पद्य मय पुष्पों से वह पूजा कर रहे हैं जिसके लिये धन्यबाद न देना कृतघ्नता है॥

तन मन धन गुसाईं जी के अर्पण–श्रीराधाचरण गोस्वामी लिखित रूपक मूल्य ≈) छोटी सी पुस्तक थोड़ी देर जी बहलाने को बहुत अच्छी है तथा श्री बल्लभ कुल के गुरुओं और सेवकों के लिये वर्तमान काल के अनुसार अच्छी सलाह भी है पर यदि सचमुच अपना भला चाहते हों तो. यह पुस्तिका कुछ बड़ी होती तो अच्छा था॥

भारत सौभाग्य–श्रीबाबू बदरी नारायण चौधरी आनन्द कादम्बिनी सम्पादक निर्मित कांग्रेस सम्बन्धी दृश्य काव्य दाम ॥) यद्यपि नाटकीय दोषों से रहित नहीं है पर कबिता मनोहारिणी है और देश के स्नेह से पूर्ण है अतः उत्तम ग्रंथ अवश्य है विशेषतः खोटी कांग्रेस वालों के मनोभाव बड़ी अच्छी तरह दिखाये गये हैं सब बातों के ऊपर इतनी बड़ी और ऐसी सुन्दर छपी हुई पुस्तक इन दामों सेंत है॥

हास्यतरङ्ग–जबलपुर निवास बाबू गुलाबसिंह द्वारा संगृहीत दाम ≈) थोड़ी देर हँसी चोलगी में समय बिताने को उत्तम है शुभचिन्तक प्रेस में मिलती है॥

श्री रामचरितमानस

अर्थात

श्री तुलसी कृत रामायण।

यह ग्रन्थ बड़े परिश्रम से श्री तुलसीदास जी की लिखी हुई प्रति से शोध कर छापा गया है। इस भय से कि कदाचित् कोई असम्भव समझे गोसाईं जी के हाथ की प्रति के १० पृष्ठ का फोटो भी लगा दिया है और उस की दृढ़ पुष्टि के लिये उनके हाथ के लिखे हुए पंचनामे का फोटो भी संग है जिसमें लोगों को यह न कहना पड़े कि गोसाईं जी के हाथ के लिखे हुए का प्रमाण ही क्या है? और लोगों की भांति मैं नहीं चाहता कि इश्तिहार में निरी प्रशंसा ही भरदूं क्योंकि जो इसके गुण ग्राहक हैं उनके लिये इतना ही बहुत है। इस ग्रन्थ में तुलसीदास जी का जीवन चरित्त भी दिया गया है और अक्षर बड़ा वो कागज अच्छा है विद्यानुरागी परम गुणवान श्रीमान् आनरेबुल राय दुर्गा प्रसाद साहब बहादुर की गुणग्राहकता से यह ग्रंथ १६ नवम्बर १८८८ को गोरखपुर की प्रदर्शिनी में भी रक्खा गया था और लोगों ने आश्चर्य से देखा। तीन सौ वर्ष पर यह अलभ्य पदार्थ हाथ लगा है जिन को रामरस का अपूर्व स्वाद लेना होवे न चूकें नीचे लिखे पते से मँगा लें। नहीं तो अवसर निकल जाने पर पछताना होगा॥

मूल्य फोटो सहित रामायण का ६) रुपया बिना फोटो की रामायण का ४) रुपया डांक महसूल १॥)

खड्गविलास प्रेस बांकीपुर } साहब प्रसादसिंह

मूल्यप्राप्ति॥

श्रीयुत पं० बालमुकुन्द दूबे—जेनरल राजधानी इन्दोर १)

श्रीयुत पं० चन्द्रिकाप्रसाद तिवारी एजेण्ट आफिस बम्बई १)

बाबू नारायण प्रसाद वकील मंत्री विहार हितैषी पुस्तकालय पटना १)

पं० दीनदयाल तिवारी डिप्टी इंस्पेक्टर मदारिस मैनपुरी १)

श्री शंकर कबि दीक्षित मुसाहब राजा सचेंडी बनारस १)

श्री० पं० सूर्यबली बाजपेई हेड पं० हाईस्कूल सिहोर १)

श्री० पं० रामनरायण तिवारी लोको मोटिव आफिस गोरखपुर १)

पं० सत्यनारायण पांडे—लंगरपुर १)

बाबू मुनपतदास मिश्र मं० गोरपुर १)

सेठ रामसरनदास—डिबाई १)

पं० जमुनाप्रसाद शुक्ल मझगावां १)

पं० भैरवदत्त जोशी झिझाड़ अलमोड़ा१)

श्री ठाकुर भैरवसिंह वर्म्मा जारकला१)

श्री पंडित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमत्प्रेस कालाकांकर से प्रकाशित हुआ
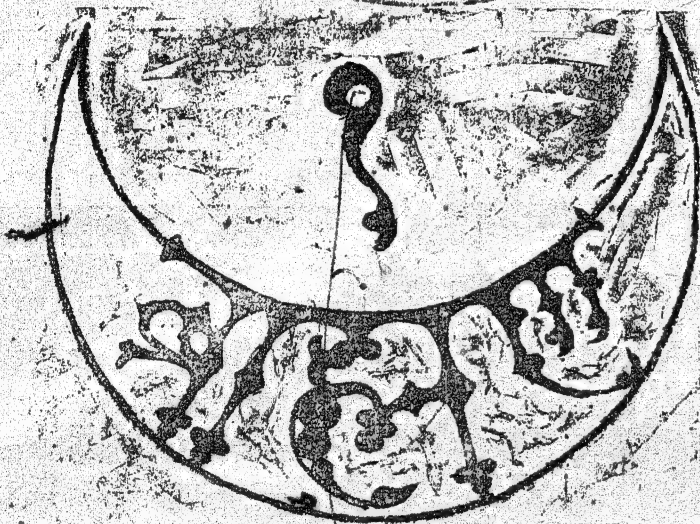
प्रेमएवपरोधर्मः

शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥

मासिकपत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्न धीराः ॥

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 CAWNPORE, 15 FEBRUARY H. 6 No 7
खण्ड ६ कानपुर १५ फरवरी हरिश्चन्द्र सं० ६ संख्या ७

नियमावली

—o—

१—वार्षिक मूल्य १) एक प्रति का ≈)
नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२—ग्राहक होने से तीन महीने
क मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २)
० लिया जायगा ॥

३—विज्ञापन की छपाई ≈) प्रति पंक्ति लियाजयगा विशेष पूछनेसे मलूम होगा

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जयगा बिन मूल्य पत्र न दिया जयगा ॥

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मेनेजर ब्राह्मण
कानपूर

होली है अथवा होरी है॥

बीती सीत काल की सांसति ब्यार बसन्ती डोली है। फूले फूल बिपिन बागन के चोंह कोकिलन खोली है॥ बदली गति मति जड़ चेतन की सुखमा सुखद अतोली है। भयो नयो सो जगत देखियत अहो आय गइ होली है १ यों तो मांह सुदी पांचें ते उर उमङ्ग नहिं थोरी है। राग रङ्ग रस चहलपहल की चरचा चारहु ओरी है॥ पै अब तो फागुन महिना है मस्ती को *जु निचोरी है। यामैं कौन अभागी ऐसो जाहि चढ़ति नहिं होरी है॥२॥ जब ह्वै चुक्यो होलिका पूजन चढ़ि भइ अच्छत रोली है। तब काहे की लाज कौन डर सब बिधि उचित म खोली है॥ आओ चलि देखिए कहां कहं कैसी २ टोली है। केहि २ के सिर कौन २ से बाहन आई होली है ३ आहा! अजब रङ्ग है सब पै देह न तनिको कोरी है। कारे पीरे लाल रङ्ग सों लथपथ पाग पिछोरी है॥ कर मुख पै लपिट्यो लखात काजर गुलाल अरु रोरी है। नख ते सिख लौ छाय रही बहु रङ्ग रँगीली होरी है ४ कतहु कीच उछरै कहु पानी कहु २ माटी घोली है। जूती उछरै धूरि उड़ै कहुं गाली गीत ठठोली है॥ कतहूं बिंदुली देत समय—आए २—की बो[...] है। बिना खरच हू हँसी सुखी [...] दिवस बितावति होली है ५ को[...] डफ कोउ ढोल बजावत कोउ भाँ[...] की जोरी है। कोऊ गावत कोउ बक[...] निलज ह्वै बातैं फोरी २ है। को[...] बेढँग नाचि रह्यो कोउ पीटत बू[...] थपोरी है॥ बैठे ठाढ़े चलत मिल[...] जग भाखत होरी २ है॥६॥ कहु पि[...] कारी चले रङ्ग की कहु अबीर की झो[...] है। कहु कबीर कहु फाग होति क[...] हाँसी बोली ठोली है॥ कहू दूधिय[...] भङ्ग छनै कहु जाती बोतल खोल[...] है। जित देखो तित भांति २ [...] मोद मचावति होली है ७ कोऊ भा[...] बन्यो डोलै है सङ्ग मैं भाटिनि गो[...] है। सुथरेसाँई बन्यो फिरै कोउ [...] इण्डन की जोरी है॥ साहब मे[...] कञ्जरी कञ्जर कुंजड़ा सिड़ी अघोरी है [...] गलियन २ विविध रूप के स्वांग दिख[...] वति होरी है ८ नृत्यसभा में न[...] रसिकन की लहति रङ्गीली टोली है [...] बीच बिराजति बारबधूटी सूर[...] भोली २ है॥ देति महा सुख बात[...] में निधरक हँसी ठठोली है। हो[...] हरति वह गोरे मुख सों मधुर सु[...] की होली है॥९॥ निज २ बित अनुसा[...] सबन के सुख सामा इकठोरी है। [...] सल मनावत बरस २ की जाको बु[...] नहिं कोरी है॥ बालक युवक बृद्ध [...]

*जो निचोड़ ही है॥

नारिन अति उछाह चहुं ओरी है। सब के मुख सुनियत घर बाहर होरी है भई होरी है १० याहू अवसर देश दसा की सुधि दुख देति अतोली है। सब प्रकार सों देखि दीनता लगति हिये जनु गोली है॥ दिन दिन निर बल निरधन निरबस होति प्रजा अति भोली है। हाय कौन सुख देखि समु झिये अजहु हमारे होली है ११ कहँ कञ्चन पिचकारी है कहँ केसर भरी कमोरी है। कहँ निचिन्त नर नारिन को गन बिहरत ह्वै इकठोरी है॥ चोआ चन्दन अतर अरगजा कहँ बर सार केहि ओरी है। ह्वैगई सपने की सी सम्पति रही कथन में होरी है १२ कटि गये कटे जात किंसुक बन बि कति लकरियो तोली है। टेसू फूल मिलत औषधि इव पैसा पुरिया घोली है॥ महँगी और टिकस के मारे सगरी बस्तु अमोली है। कौन भांति त्योहार मनैये कैसे कहिये होलीहै १३ भुखोमरत किसान तहूं पर कर हित डपट न थोरी है। गारीदेत दुष्ट चपरासी तकति बिचारीछोरी है। बात कहे बिन लात लगति है गरदन जाति मरोरी है। केहि बिधि दुखिया दिल समझावै कैसे जाने होरी है १४ बिन रुजगार बनिक जन रोवैं गांठ सबन की पोली है। लाग्यो रहत दिवाला को डर सबते कोठी खोली है॥ अधाधुंध टिकस चन्दा ने सारी सम्पति ढोली है। ताहूपर—तशखीस—करैया द्वार मचावत होली है १५ दीन प्रजहि घृत दूध अन्न की आस रही इक ओरी है। सागपात सँग नोन तेल हू की तरसनि नहिं थोरी है। परयो झोपड़ी माहिँ छुधित नित रोवत छोरा छोरी हैं॥ ज्यों त्यों करि काटत दुख जीवन को सूझति तेहिहोरी है १६ ह्यां की रीति नीति दुख सुख सों मति गति जिन की पोली है। हम पर मन मानी प्रभुता की राह आय उन खोली है॥ प्रजापुंजममता बिन तिनहिन जो चेती कर सोंली है। बरबस बि बस हिंद बासिन की कहा दिवाली होली है १७ राजकुअरदरसनआ स्रित की काहू इज्जत बोरी है। निर अपराधिन को काहू ने कैद कियो बर जोरी है॥ काहू ने मंदिर ढहवायो हठ सों मूरति तोरी है। यह गति देखि कौन सहृदय के जिय में जरत न होरी है १८ राह चलत हंटर हनिबो कोउ समझत सहज ठठोली है। कोउ बूट प्रहार करत कोउ निध रक मारत गोली है॥—जबरजस्त की बीसों बिसुवा—कोउ सकत न बोली है। हाबिजयिनि! तव प्रजा भाग में चहुं दिस लागी होली है १९ हा अ भाग! तव हाय अधोगति छाय रही चहुं ओरी है। ताहू पर घर २ जन २

में मतविवाद मुड़फोरी है॥ जाने काह कियो चाहत बिधि अविधि न दीसति थोरी है। मेरे चित याही चिन्ता सों जरत रहति नित होरी है २० अहोप्रेमनिधि प्रान नाथ! व्याकुलता मोहि अतोली है। जग है सुखित दुखित मैं, यहि छिन कौन पौन धौं डोली है॥ मेरे प्यारे जीवन धन! बस अब नहिं उचित बतोली है। धाय आय दुख हरो बेगि नहिं मेरी सब गति होली है २१ अरे निठुर छलिया निरमोही! कौन बानि यह तोरी है। पीर न जानत काहू की बस एक सिखी चित चोरी है। ऐसेहु अवसर दया करत नहिं अजहुँ वैसिही त्योरी है॥ हा हा कहा अजंहु तरसैं हम? अरे आज तो होरी है २२ अब नहीं सही जात निठुराई अत भई बस हो ली है॥ अपने सों ऐसी नहि चहिए बहुत करी करि जो ली है! बास दिना को दिन है प्रियतम! यह शुभ घरी अमोली है। चूक छमो निज दिसि देखो आओ मिलि चाओ होली है २३॥ आज लाज को काज कहा है फाग मची चहुँ ओरी है। भेंटो मोहि निसंक अंक भरि कछु काहू की चोरी है। छुवन देहु ससि मुख गुलाल मिस यहै साध बस मोरी है। गारी गाओ रँग बरसाओ मोद मचाओ होरी है २४ हम तुम एक होंहि तन मन सों यह आनन्द अतोली है। या मैं कोऊ कछू कहै तो समझैं सहज मखोली है। प्रेमदास अति आस सहित यह मांगत ओड़े ओली है। पुजो इतो मनोरथ प्यारे आज बड़ोदिन होली है २५

शुभमस्तु

आत्मीयता॥

संसार में सुख दुःख उन्नति अवनति बृद्धि क्षय सबको होती ही रहती है सदा एक रस केवल जगदीश्वर है दूसरा कोई पदार्थ वा पुरुष नहीं है जिसकी दशा का परिवर्तन न होता हो पर जो व्यक्ति अथवा जाति सब दशा में आत्मीयता का बिचार रखती है उसकी कभी दुर्दशा नहीं होती आज भारत के दिन गिरे हुये हैं (इस बात को समस्त भारत संतान जानते और मानते हैं इससे एतद्विषयक व्याख्या करके समय खोना व्यर्थ है) पर इस पतित अवस्था में भी जो २ समुदाय इस दिव्य गुण को अंगीकार किये हैं वे दूसरों से अच्छे हैं यह वह सुलक्षण है जो विद्या बल धन सबसे अधिक सुखदायक है कभी किसी देश के सब के सभी लोग सर्व गुण सम्पन्न नहीं होते, पर जहां इस सर्वोत्कृष्ट गुण का अभाव नहीं होता वहां काम पड़ने पर किसी को निरा

शया नहीं होती अतः हमारा सिद्धांत है कि जो लोग इसको सब बातों से बढ़कर समझते हैं उन पर परमेश्वर की बड़ी कृपा समझनी चाहिये क्योंकि उनके निर्बाह में त्रुटि नहीं होती अथच सदा सब ठौर सब अवस्थाओं में एक समीचीन सहारा बना रहने के कारण यह आसरा रहता है कि कभी दिन अवश्य फिरेंगे वे लोग धन्य हैं जो अपने को अपना जानते हैं अपनी जाति अपने देश की यावत् वस्तु यावत् गुण यावत् पुरुष हैं सब को दूसरों की अपेक्षा श्रेष्ठ समझना ही आत्मीयत्व है जिसमें यह न हुआ उससे कभी कुछ न होसकेगा पाठक महाशय! यदि अपना भला चाहते हो तो सब धर्म कर्म मान प्रतिष्ठा सुख सम्पति से अधिक इसको समझो! ईश्वर का मुख्य गुण यही है यद्यपि वह सारे जगत् का पालन पोषण करता है पर अपने प्रेमी अपने भक्त अपने आश्रित का सम्भार सब से अधिक रखता है इस बात का प्रमाण ढूंढने नहीं जाना स्वयं सच्चे तदीय हो के देख लो, ईश्वर के नीचे राजा का पद होता है उसका भी गुण यही है वर्तमान प्रभु को प्रत्यक्ष देख लीजिये न्याय प्रजापालन समदृष्टित्व सब का बाना बांधे हैं पर अपने गौरांग भाइयों एवं स्वदेशीय विद्या धर्म शिल्पादि के आगे परदेशियों का कभी पक्ष न करेंगे इस प्रकार के व्यवहार से ताड़ित हो के हमारे कोई २ भाई कभी २ इस गुण की निन्दा कर बैठते हैं पर चित्त को एकाग्र करके सूक्ष्म दृष्टि से देखिये तो यह स्वभाव निन्दनीय नहीं बरंच आदर पूर्वक गृहण करने योग्य है जिसने जितनी अधिकता के साथ इसे स्वीकार कर रक्खा है वह उतनाही अधिक सुविधा सम्पन्न है बंगाली भाइयों को देखिये सब बातों में हमारे हैं पर एक साधारण बंगदेशी के सन्मुख श्रेष्ठ से श्रेष्ठ हिन्दुस्तानी का कुछ भी ममत्व न करेंगे मुसल्मान भाई भी इस सदाचार में इन से न्यून नहीं हैं इसी कारण हमारी अपेक्षा सुखित एवं प्रतिष्ठित हैं यह दोनों जाति भी हमारीही भांति ब्रिटिशराज की प्रजा हैं इन में भी निर्बल निर्धन निर्बुद्धि दुराशय मनुष्यों का दुष्काल नहीं है जन संख्या में यह हम से अधिक नहीं हैं पर यह गिर के सँभल जाते हैं दैव बश किसी विपत्ति में कोई पड़ जाता है तो सहायकों का अभाव नहीं देखता कुछ लोग एकचित हो के तन मन धन बचन से उसके उद्धार में संलग्न हो जाते हैं यही कारण है कि जहां इनका समुदाय होता है वहां इन की जाति

वाला कोई कहीं से आजाय निराश्रय नहीं रहता इनमें से किसी व्यक्ति के साथ कोई सहसा अनीति भी नहीं कर सक्ता क्योंकि अपनायत का संरक्षण करके यह किसी दूसरे की दाल गलने का अवसर नहीं देते हमारे माडवारी भाई यद्यपि विद्या सभ्यतादि के अधिकतः अधिकारी नहीं हैं केवल व्यापार में सुचतुर हैं पर अपनपौ का इतना निर्बाह करते हैं कि कोई निरुद्योग सजातीय कहीं से आजाय तो भाईभाई मिलके उसे कमाने खाने के योग्य बना लेते हैं एवं आपस में सद्व्यवहार को यहांतक दृढ़ रखते हैं कि कोई दिवाला निकालता है तो भी अपने लोगों की कौड़ी नहीं रखता इसी से जहां जाइये इन को दरिद्रता ग्रस्त न देखियेगा पर खेद है आक्षेप है हमारे पश्चिमोत्तर देशीय हिन्दुओं पर जो इस गुण से सर्वथा वंचित हैं न जाने किस ऋषि का शाप है न जाने किस ग्रह की कुदृष्टि है कि सब बातों में सब से न्यूनास्पद होने पर भी इन्हें अपने भाई से ममता करने की बुद्धिही नहीं है अपनों का पक्ष करना सूझता ही नहीं है आपस वाले की बुराई करने में कहो बीसियनों खड़े होजायं पर भलाई में दिया लेकर देखिये तो भी कोई न देख पड़ेगा इसी से जो जिस के जी में आता है इनके साथ कर उठाता है धर्म न्याय क़ानून कोई इनका सहायक नहीं होता हो कहां से जो अपनी और अपनों की सहायता प्रतिष्ठा तथा ममता आप नहीं करता उसकी दूसरे क्यों करने लगे? दूसरों के जीपर अपना गौरव तभी जम सकता है जब हम अपने गौरव को आप ध्यान रक्खें नहीं तो सदा सबकी दृष्टि में तुच्छ बने रहेंगे और यों हीं लातें खाते रहेंगे ॥

काल ॥

संसार में जो कुछ देखा सुना जाता है सब इन्हीं दो अक्षरों के अन्तरगत है इसका पूरा भेद पाना मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर है क्योंकि यदि—नृपति सेन सम्पति सचिव सुत कलत्र परिवार। करत सबन को स्वप्न सम नमो काल करतार—के अनुसार इसे ईश्वर का रूपान्तर न मानिये तो भी इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अनादि और अनंत एवं अनेक रूपधारी तथापि अरूप यह भी है इसी कारण बहुत से महात्माओं ने परमात्मा का नाम महाकाल रक्खा है पर हमारी समझ में जो स्वयं महत्व विशिष्ट है उसके नाम में महा का शब्द जोड़ना व्यर्थ नहीं तक

रीति से हंसी करना है ब्राह्मण को महाब्राह्मण कहने से कोई प्रशंसा का द्योतन नहीं होता अत: केवल काल ही कहने से पूरी स्तुति होजाती है जिन्होंने परमात्मा को—अकाल—कहा है वे भी न जाने क्या समझे थे नहीं जो सब काल में बिद्यमान है वह अकाल क्यों? उसे तो नित्य कहना चाहिये काल से यहां हमारा अभिप्राय मृत्यु से नहीं किन्तु समय से है मृत्यु का यह नाम केवल इसलिये पड़गया है कि उसके लिये एक निश्चित और अटल काल नियत है पर सूक्ष्म विचार से देखिये तो सभी बातें काल के आधीन हैं वृक्ष लगा के सींचते २ सिर दे मारिये जब तक उसके फलने का काल न आवेगा फल का दर्शन न होगा इसी प्रकार जिधर दृष्टि फैलाइये यही देखियेगा कि सब कुछ काल के आधीन है बिना काल कभी कहीं कुछ होही नहीं सक्ता यों उद्योग करना पुरुष का धर्म है उसमें लगे रहो आलस्य बड़ी बुरी बात है उसे छोड़ो पर यह भी स्मरण रक्खो कि काल बड़ा बली है वह अपने अवसर पर सब कुछ करा लेता है या यों कहिये आप कर लेता है आप बड़े उद्योगी हैं पर तन मन धन निछावर कर दीजिये हम आपको और दृष्टि भी न करेंगे साथ देना कैसा? हम बड़े भारी आलसी है पर जब पास पल्ले कुछ न रहेगा और स्वाभाविक आवश्यकताएं सतावैंगी तो झख मारेंगे हाथ पांव अथवा जिह्वा किसी काम में लगावैंगे जिस से निर्वाह हो इसी से बुद्धिमान लोग कह गए हैं कि मनुष्य को काल का अनुसरण करना चाहिए—जमाने के तेवर पहिचानना चाहिए—जो लोग ऐसा नहीं करते वे या तो बीते हुये काल की दशा पर घमण्ड करके अपने लिये कांटे बोते हैं अथवा आगामी काल की कल्पित आशा में पड़ के हानि सहते हैं पर यह दोनों बातें मूर्खता की हैं हमें चाहिये कि जो कुछ करना हो वर्त्तमान काल की गति के अनुसार करें जो लोग अपने काल के अनेक पुरुषों की चाल ढाल परिवर्त्तित कर देने के लिये प्रसिद्ध हो गए हैं वे वास्तव में साधारण व्यक्ति न थे उन्हें मूर्ख समझिए चाहे म नीषी कहिये पर थे बड़े! किन्तु उस बड़प्पन का कारण काल ही के अनुसरण पर निर्भर था जिन्हों ने यह विचार कर काम किया कि हमारे पूर्व इतने दिनों से जनता इस ढर्रे प झुक रही है अत: इधर ही के अनुकूल पुरुषार्थ दिखाना उत्तम होगा उनकी मनोरथ सिद्धि बड़ी सरलता से हुई क्योंकि जिस बात को वे चलाना

चाहते थे उसके अवयव पहिले ही से प्रस्तुत थे इस कारण वे अपने काम में बड़े सन्तोष के साथ कृतकार्य हुए पर जिन्होंने कालचक्र की चाल और सहकालीन लोगों की रुचि न पहिचान कर अपना काम फैलाया वे मरने के पीछे चाहे जैसे गौरवास्पद हुए हों उनके उत्तराधिकारियों ने चाहे जितनी कृतकृत्यता प्राप्त की हो पर अपने जीवन काल को उन्होंने अपमान कष्ट और हानि ही सहते २ बिताया ! वे आज हमारी दृष्टि में प्रतिष्ठास्पद हैं पर विचार शक्ति उनमें यह दोष लगा सक्ती है कि या तो उनमें जमाने के तेवर पहिचानने की बुद्धि न थी या जान बूझ कर नेचर के साथ लड़ाई ठान के उलझेड़े में पड़े ! उपर्युक्त दोनों प्रकार के उदाहरण प्रत्येक देश के इतिहास में अनेक मिल सक्ते हैं पर उन्हें न लिख के भी यदि हम अपने पाठकों से पूछें कि इन दोनों में आप को कौन मार्ग रुचता है तो निश्चय यही उत्तर पावेंगे कि काल की चाल के अनुकूल चलने वाला ! क्योंकि सदा सब देश में बड़े २ लोग थोड़े होते हैं जो प्रत्येक कष्ट और हानि का सामना करने को बद्धपरिकर रहें पर ऐसे लोगों की संख्या अधिक होती है जो साधारण रीति से संसार के नित्य नियमों का पालन मात्र अपनी सामर्थ्य का निचोड़ समझते हों और ऐसे लोगों के लिये यही ढर्रा सुभीते का है कि जिधर अनेक सहकालिकों की मनोवृत्ति झुक रही हो उधर ही ढुलके रहना, इसमें हानि अथवा निन्दा का भय नहीं है बरञ्च यदि व्यय परिश्रम सहनशीलता आदि में थोड़ी सी विशेषता निभ जाय तो अपना तथा अपने लोगों का बड़ा भारी हित होसक्ता है महाबली काल की सहायता मिलती रहती है इस से जिन्हें हमारे उपदेश कुछ रुचिकारक हों उनसे हम अनुरोध करते हैं कि बड़े २ विचार छोड़ के यदि सचमुच देश जाति का भला चाहते हो तो तन मन धन (कुछ न हो सके तो) बचन से थोड़ा बहुत कोई ऐसा काम नित्य करते रहो जो वर्तमान समय के बहुत से लोगों ने अच्छा समझ रक्खा हो बस इसी में बहुत कुछ हो रहेगा जिस काल में यह सामर्थ्य है कि सारे जगत के सर्वोत्कृष्ट प्रकाशक सूर्य को आधी रात के समय ऐसा अदृश्य कर देता है कि दुरबीन लगाने से भी न देख पड़े जिसमें यह शक्ति है कि जड़ चेतन मात्र को प्रफुलित करने वाली सब के जीवन को एक मात्र आधार प्रातः पवन को जेठ बैसाख की दुपहर

में ऐसा बना देता है कि लोग उससे घी चुराते हैं वह यदि तुम्हारा साथी होगा अथवा यों कहो कि तुम यदि उसके अनुगामी होगे तो क्या कुछ न हो रहेगा! इस की वह महिमा है कि जो बातें कभी किसी के ध्यान में नहीं आतीं बरंच सोचने से असम्भव जचती हैं उन के लिये ऐसे२ योग लगा देता है कि एक दिन वैसा ही हो रहता है ऐसे महा सामग्री से यह तो विचारना ही न चाहिये कि अमुक बात न होसकेगी जो बिना भर के बालक को बली धनी विद्वान मनुष्य और बड़े से बड़े पुरुष रत्न को राख का ढेर बना देता है वह क्या नहीं कर सक्ता? उसके तनिक से भ्रूसंचालन में जो न हो जाय सो थोड़ा है आप के शरीर में चाहे सहस्र हाथियों का बल हो पर काल भगवान एक दिन की अस्वस्थता में लाठी के सहारे उठने बैठने योग्य बना सकते हैं किसी के घर में लाखों की सम्पत्ति भरी हो पर एक रात्रि में चोरों के द्वारा यह भिक्षा मांगने के योग्य कर सकते हैं फिर इन के सामने किस का घमण्ड रह सक्ता है? जिस भारत में अर्जुन से महारथी युधिष्ठिर से सत्यवादी एवं कहां तक कहिए भगवानकृष्णचंद्र ऐसे सर्व गुण सम्पन्न विद्यमान थे उसे इन्होंने महाभारत की कल घुमा के विदेशियों का लतमर्द कर दिखाया था तथा जिस हिन्द में इतनी परबशता थी कि अपने धर्म का नाम लेते शिर कटता था उसे इन्होंने आज इतना बना दिया है कि अपने जेता और नेता के विरुद्ध अभियोग उपस्थित कर सकता है उसकी ओर से किसी बात के लिये निराश होना निरी भूल है जो लोग समझते हैं कि हमारा देश अमुक २ बिषयों से दुःखी है उन्हें विश्वास रखना चाहिये कि कालचक्र (समय का पहिया) प्रतिक्षण घूमता ही रहता है और उसका नियम है कि जो आरा ऊपर है वह अवश्य नीचे आवेगा तथा जो नीचे है अवश्य ऊपर जायगा अत: रात्रि में यह सोचना कि दिन होही गा नहीं बड़ी मूर्खता है आप कुछ न कीजिये तो भी सब कुछ हो रहेगा पर यदि हाथ समेटे बैठा रहना न भाता हो तो अनेक काम हैं जिनमें से एक२ में अनेक २ लोग लगे हुये हैं आप भी किसी में जुट जाइये पर इतना स्मरण रखिये गा कि जिस काम में काल की गति परखने वाले लगे हों उसी में लगने से सुभीता रहेगा विरुद्ध कार्यवाही में अनेक विघ्नों का भय है यदि उन्हें झेल भी जाइये तो भी अपने जीते जी तो पहाड़ खोद के

चूड़ाही निकालियेगा पीछे से चाहे जो हो उसमें आपका इजारा नहीं वह काल भगवान की इच्छा पर निर्भर है इसी से अगले लोग कह गये हैं कि —काल का स्मरण सब कालकरते रहना चाहिये--यदि यह वाक्य निरस जान पड़े तो गोस्वामी जी का यह परम रसीला बचन कंठ रखिये "लव निमेष परमान युग वर्ष कल्प शर चण्ड॥ भजसि न मन तेहि राम कहं काल जासु को दण्ड, इसके द्वारा लोक पर लोक दोनों सुधर सकेंगे और काल की अमूल्यता आप से आप समझ में आती रहेगी जिसका समझना मुख्य धर्म है॥

संतान॥

श्रीहरिऔध लिखित॥

पूर्व प्रकाशिता नंतर॥

बैरिहु को जनि सुत बियोग होवै जग माहीं। काहु दीन को बस्यो धाम उजरै इमिनाहीं। होय पीर सब बिधि की पै हिय पीर न होवै। हे हरि अपनी नैन जोतिबिन कोउ न जोवै।हरि औधराज तिहु लोक को मिलै तऊ सब धूर है जीवन असार अतिही अहै जौन तात सुखमूर है ९ नृप दसरथ सों जो बिछुर्यो रघुनाथ पियारो। रहे औरहू पूत एक बिछुर्यो मनवारो। दुखसों सब सुख छुट्यो जरा में जीवन हार्यो॥ हायतात मोबिलग बिलखि बहुबार पुकारो॥ नहिं परत चैन दिन मैं रह्यो नींद नाहि निसि मैं लह्यो। दुख सों बिहरत हियरो हुतो करक करेजे मैं रह्यो १० यदपि तात नहिँ काम कछू काहू के आवत। याके हित पितु काहिं रैन दिन दुःख सतावत॥ पै यह है वह चिन्ह नाम जासों जग रहई। छन बिछुरे प्रिय तात दुखःसों जीवन दहई॥ आपनी कमाई सोंकबहुं नहिं निरास बैरिहु बने। हरि औध पास धन होय नहिं पै होवै प्यारो तनै ११ दोहा॥ तात! तात जिनको कहत तिन सब ते यह तात। तनते मनते तकनते तकत तकत अधिकात १२ शुभम्

प्राप्तिस्वीकार॥

धर्म शिक्षा॥

इस नाम की पुस्तक श्री बाबू अजीज़ुररहमान खां एम. ए. सेक्रेटरी लिटरेरी इंसटीट्यूट इलाहाबाद द्वारा प्राप्त हुई है। सब मताव लम्बियों के लिये यह उत्तम ग्रंथ है इस में ६ विषय हैं (१) ईश्वर महिमा (२) धर्म निरूपण (३) धर्म का आचरण (४) धर्म प्रतिपालन करने की आवश्यकता (५) धर्म के विभाग (६) अपनी ओर हमारा धर्म (७) औरों के प्रति हमारा धर्म (८) परमेश्वर की ओर हमारा धर्म (९)

माता पिता के लिये अन्तिम उपदेश यह नौ विषय ऐसी उत्तमता से लिखे गये गये हैं कि किसी मत से सम्बन्ध नहीं रखते। इलाहाबाद इंस्टीट्यूट के मेम्बरों का यह प्रयत्न प्रशंसनीय है। ऐसी पुस्तकों की स्कूलों में आजकल बड़ी आवश्यकता है यदि सरिश्ता तालीम के अधिकारी इसे जारी करदें तो विद्यार्थियों को बड़ा उपकार हो हिन्दी जानने वालों को इस की एक २ प्रति मंगाकर अवश्य पढ़नी चाहिये। मूल्य केवल ।)मात्र है मैनेजर स्कूलबुक डिपो इलाहाबाद को लिखने से मिलेगी॥

खड़ी बोली का पद्य॥

इस नाम की पुस्तक बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री द्वारा प्राप्त हुई है। इस में खड़ी बोली के पद्यों का संग्रह है पढ़ने से कुछ फल होगा या नहीं यह पढने वाले स्वयं समझलेंगे परंतु यह बात हम अवश्य कहेंगे कि विलायत में छपने से इस की सुन्दरता में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं है और संग्रहकर्ता महाशय यदि कुछ कविता सीख के ऐसा उत्साह दिखावें तो देश का बड़ा उपकार हो पुस्तक का दाम हमें मालूम नहीं बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री मुजफ्फरपुर को लिखने से मिलेगी॥

मूल्यप्राप्ति स्वीकार॥

पं० दाऊदत्त पांडे शेखपुर २)
गवर्नमेण्ट रिपोर्टर लखनऊ ।≈)८
सम्पादक ब्राह्मणलोकोपकारिणी सभा जौनपूर १)
लाला ईश्वरीप्रसाद नायब मुदर्रिस अकबरपूर १)

लाला लालाराम मुदर्रिस पूरा १)
बाबू देवीप्रसाद उपाध्याय राम नगर १)
बाबू अजायबसिंह नैपाली खपरा बनारस १)
लाला रामचन्द्र वैश्य कोहाट १)
पं० गौरीशंकर सिग्नेलर सिरसा १)
पं० गङ्गाप्रसाद नायक पल्टन नं० ३० हैदराबाद १)
पं० सकलनारायण शर्मा गोरक्षिणी सभा आरा १)
बा० कालीचरणराम महाजन रघु बरगञ्ज १)
बाबू धनपतराव इन्स्पेक्टर कानूनगोयां लखनऊ १)
पं० सुन्दरलाल आगरा ≡)६
लाला कुनरपाल जी आगरा ≡)
ला० कन्हैयालालजीमुनीमआगरा≡)
श्रीयुत सेठअमरसिंहजी बिहार १)
बाबू लछमीचन्द नैनीताल १)
बाबू दुर्गाचरण मखनिया अल्मोड़ा १)
बाबू उदितनारायण वकील गाजीपुर १)
लाला परसन कलवार इलाहाबाद १)
डाक्टर मोहनलाल डिप्टी सुपरिंटेंडेंट लनटिक एजीलय जबलपुर १)
बाबू अयोध्याप्रसाद पेशकार मुजफ्फरपुर १)
पं० हनोमान प्रसाद पांडे बिजै राघवगढ़ १)
लाला छोटेलाल गयाप्रसाद कानपुर १)
सेक्रेटरी पीपुल्स एसोसियेशन दरभङ्गा १)
बाबू शिवप्रसाद खजाञ्ची कानपुर १)
श्री नवलबिहारी वकील बाजपेयी इलाहाबाद १)
टी. मेरी. मुथु, आनरेरी सेक्रेटरी लिटरेरी क्लब जबलपुर १)
बाबू शिवप्रसाद शर्मा जलालाबाद १)
राजा अमानसिंह जी गोटा १)
बाबू भवानराव सुपरन्यूमेरारी इन्सपेक्टर इन्दौर पोस्ट आफिस १)
पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय निजामाबाद १)
चौधरी बाबूराम बजाज मूसानगर १)
बाबू दामोदरदास सेक्रेटरी पेकोको सरक्यूलेटिङ्ग लाइब्रेरी पेकाकू १)
पं० हरिनारायण भट्ट आगरा १)
बाबू विपिनबिहारी मुकरजी मुंसिफ गाज़ीपुर १)
पं० भारतप्रसाद बाजपेई देवहू १)
पं० जगन्नाथ चौबे काशीपुर १)
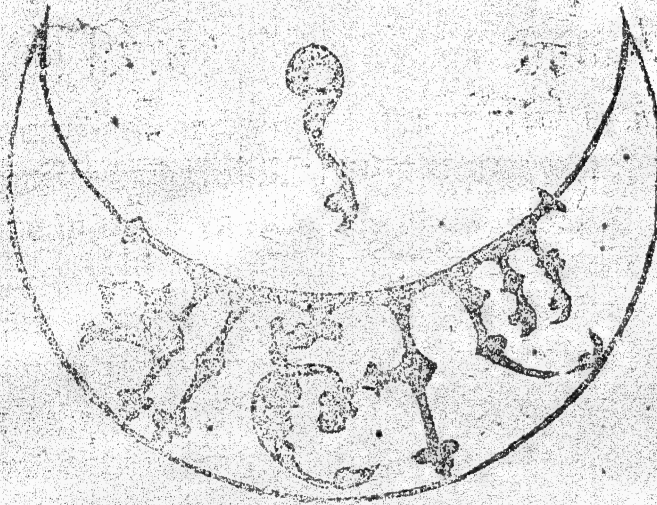
श्री पंडित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमतसिंह कालाकांकर में प्रकाशित हुआ।

प्रेमएव परोधर्मः ।

शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदिवा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः ॥

राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 | CAWNPORE, 15 JANURY H. 6 | No, 6
खण्ड ६ | कानपुर १५ जनवरी श्री हरिश्चन्द्र सं० ६ | संख्या ६

नियमावली

१—वार्षिक मूल्य १) एकप्रति का ≈) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ॥

३—विज्ञापन की छपाई ≈) प्रतिपंक्ति लियाजयगा विशेष पूछनेसे मलूम होगा

४—बैरङ्ग पत्र न लिया जयगा बिन मूल्य पत्र न दिया जयगा ॥

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पदक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त
मेनेजर ब्राह्मण
कानपूर

विज्ञापन

सब लोगों को सूचना दी जाती है कि श्री मान् युवराज कुमार प्रिंस एलबर्ट विक्टर ऑफ वेल्स महोदय यावत्काल पश्चिमोत्तर प्रदेश और अवध प्रांत में विराजैंगे उस अवसर में श्रीयुत का कोई दर्बार अथवा लेवी न होगी और न मुलाकात होगी॥

स्थान कैम्प श्री मान लेफ्टिनेंट गवरनर बहादुर २२दिसम्बर सन् १८८८ ई० | हस्ताक्षर जे०स्ट्रैची महाशय प्राइवेट सेक्रेटरी श्री युक्त लेफ्टिनेंट गवर्नर बहादुर पश्चिमोत्तर तथा चीफ़ कमिश्नर की आज्ञानुसार

———

ज़रूरत है॥

ब्राह्मण के लिये एजेंटों की ज़रूरत है जो साहब कम से कम पांच कापी बेंचना अङ्गीकार करेंगे उन्हें बीस रुपया सैकड़ा कमीशन दिया जायगा अधिक बेचने वालों को पच्चीस रु० सैकड़ा जिन्हें मञ्जूर हो इस पते पर पत्र भेजें॥

बृजभूषणलाल गुप्त
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर

समालोचना॥

कविवर गोल्डस्मिथ कृत डेजर्टेड विलेजका पद्यमय अनुवाद, इस-ऊजड़ गाम-नामक ग्रंथ को हमारे प्रियमित्र पण्डित वर श्रीधर पाठक ने बड़ी रसज्ञता से लिखा है भाषा का माधुर्य कविताका लावण्य सहृदय मनोहारित्व इत्यादि गुणों के अतिरिक्त यूरोपीय विचारांशों का एतद्देशीय लोगों को पूर्ण स्वादु देने में भी सच्ची दक्षता दिखलाई है हमारी समझ में यह कहना भी अत्युक्ति नहीं है कि जिस आभूषण को इङ्गलैण्डीय स्वर्णकार (गोल्डस्मिथ) ने बड़ी चतुरता के साथ केवल हरिबर्षीयललना (अंग्रेज़ी भाषा) के लिये निर्माण किया था उसे पाठक जी ने रत्न जटित करके नागरी देवी के श्रृङ्गार योग्य कर लिया है मूल्य एक रुपया, बारह आना, और दश आना है, जितने अधिक दाम लगाइयेगा उतनी ही सुन्दर पोथी पाइएगा अहियापूर प्रयाग में मिलेगी॥

———

श्री हरिश्चन्द्र कला॥

विषयक

फर्य्याद॥

हिन्दी भाषा के रसिक तथा भारतेन्दु

श्री हरिश्चन्द्र जी के प्रेमीजनों के निमित्त मैंने साहस पूर्वक—हरिश्चन्द्रकला—द्वारा उनके बनाये संग्रहकिये और लिखे हुये ग्रन्थों को छापना आरंभ किया और ईश्वर की कृपा से दो वर्ष में अनेक विषय प्रकाशित होचुके तौभी भारतेन्दु जीके बहुतसे विषय अभी छपने कोहैं। और अनुमान किया जाताहै कि कम से चार वर्ष और लगेंगे परन्तु दो वर्षमें मुझे जो २ कष्ट उठाने पड़े और जो कुछ हानि हुई उसका प्रगट करना मानो अपनी हँसी करानीहै। मैं कईबार हतोत्साह होचुका था परन्तु फिरभी हरिश्चन्द्रजी के उपकारों को स्मरण कर के उनकी कीर्तिध्वजाको साहस बश सम्हालता जाता था किन्तु खेदहै कि अब भार असह्य होता जाता है। मैं समझाथा कि प्यारे हरिश्चन्द्रजीके मित्र और अनुरागी इतने अधिक हैं कि यदि कला की एक २ प्रति लेवेंगे तो कला का सितारा चमकता रहैगा पर खेदहै कि उनके बड़े२ धनिक और विद्यानुरागी मित्राभिमानियों के रहते भी मुझे इसके चलाने में आपत्ति मालूम होती है। कहांहैं वे लोग जो उनके स्मारक चिन्ह का उद्योग करते थे और अब ६) रु० साल देते हुए भी सकुचते हैं हा! जिस के हजारों मित्रहों उस की कीर्ति स्थापन के लिये १०० भी न दिखलाई दें। अबतक तो मैं किसी प्रकार से इस काम को करता गया परन्तु अब यदि २०० ग्राहक इस के न होंगे तो पश्चाताप के साथ कला को बन्द करना पड़ैगा। प्यारे हिन्दी भाषा के आंसू पोंछने वालो आप लोग किधर सोये हुये हो चन्द्रास्त के दुःख से तो अब तक दुःखित होरहे हो क्या अब उस की बची हुई कला को भी निश्शेष किया चाहते हो? आप लोग थोड़ी २ सहायता करते रहैं तो मैं हिम्मत न छोड़ूंगा और आप लोगों को नित्त नये २ विषय अर्पण करता रहूंगा। बचे हुये बिषय एक से एक अपूर्व और हरिश्चन्द्रजी के यशके बढ़ाने वाले हैं। इसलिये रसिकजनों से सविनय प्रार्थना है कि यदि आप लोग एक पैसा रोज निकालते जायं तो भी कला निर्विघ्न चल सकी है। अब तक जितने विषय छपे हैं क्रमशः हैं परन्तु आगे से इस बात पर ध्यान न दिया जायगा जो विषय वा लेख प्राप्त होते जायंगे वे क्रम रहित छपते जायंगे क्योंकि ऐसा न करने से एक२ विषय के लिये महीनों रुक जाना पड़ेगा अतएव उचित भी यही है कि जो २ ग्रन्थ वा लेख ज्यों २ मिलते जायं छपते जायं अधिक कहना ब्यर्थ हैक्योंकि बुद्धिमानों को संकेत मात्र बहुत है

प्रकाशकखड्गविलास प्रेस

सोश्यल कान्फरैन्स ॥

जैसे राजनैतिक विषयों के संशोधनार्थ नेशनल कांग्रेस की आवश्यकता है वैसेही सामाजिक सुधार के निमित्त सोश्यल कान्फरेन्स की भी आवश्यकता है पर परमेश्वर की दया से हमारी जातीय महासभा ने तो पांच वर्ष में बहुत कुछ (आशा से अधिक) योग्यता प्राप्त कर ली और निश्चय है कि योंही उत्तरोत्तर बृद्धि करती रहेगी इसके द्वेषियों ने जब प्रसिद्ध किया कि यह केवल बाबू कांग्रेस अथवा हिन्दू कांग्रेस है तब इसने एक से एक प्रतिष्ठित मुसल्मानों को सङ्ग लेके दिखला दिया कि यह कथन निरा निर्मूल है! जब यह उड़ाया कि सर्कारी कर्मचारियों में से कोई इसका सहानुभूति करने वाला नहीं है तब अब की बार श्रीमान् सर डबल्यू वेडरबर्न महोदय ने सभापति के आसन को शोभित कर के इस कुतर्क की भी जड़ काट दी! पारसाल जब इसके विपक्षी बरसात के मेढकों की भांति ऐसे बढ़े थे कि जान पड़ता था कि कुछ होने ही न पावेगा तब महासमाज ने—जस २ सुरसा बदन बढ़ावा। तासु दुगुन कपि रूप दिखावा—का उदाहरण दिखला दिया! अब की बार रुपये के अभाव से बहुतेरे द्वेषी दांत बाते थे और हितैषी भी चिंता में थे कि चालीस सहस्र मुद्रा प्रति वर्ष व्यय के लिये न मिलेंगे तो काम चलना कठिन है पर बम्बई में आध घण्टे के बीच तिरसठ हज़ार रु० इकट्ठे होगये इससे प्रत्यक्ष होगया कि कांग्रेस—सर्वेषामपिदेवानान्तेजोराशिसमुद्भवा—दुर्गाही नहीं बरंच क्षण भर में सारे दुःख दारिद्र हरने हारी लक्ष्मी भी है इन लक्षणों से विश्वास होता है कि एक दिन इसके समस्त उद्देश्य सफल होके राजा प्रजा दोनों का वास्तविक हितसाधन करैंगे और इसके कारण महात्मा ब्रैडला एवं ह्यूम बाबा की सत्कीर्ति भारत और इङ्गलैण्ड में सूर्य चन्द्रमा की स्थिति तक कृतज्ञता के साथ गाई जायगी पर समाज संशोधनी महा सभा (जो गत दो वर्ष से कांग्रेस ही के मण्डप के नीचे अंतिम दिन एकत्रित होती है) जो इसकी सगी बहिन है अभी निरी भोली है! यद्यपि इसके संचालक भी वही लोग हैं जो जातीय सभा के शक्तिदाता हैं पर यतः समाज का सुधारना राजकाज के संशोधन से भिन्न विषय है और सब बातों की पूर्ण योग्यता प्रत्येक पुरुष में नहीं होती अतः सोश्यल कान्फरेन्स की कृतकार्यता के लिये वर्तमान प्रणाली हमारी समझ में ठीक नहीं है और

इसी कारण इसके लिये दूसरे मार्ग का अवलम्बन अत्यावश्यक है समाज में किसी नवीन बात का प्रचार करना उन सज्जनों को अधिक सुख साध्य होता है जिन के चरित्र समाज की रीति नीति से विरुद्ध न हों अस्मात जो लोग विलायत हो आए हैं अथवा यहीं रह के खान पानादि में बिलायत वालों का अनुकरण करते हैं व सामाजिक धर्म छोड़के बिदेशी धर्म ग्रहण कर लिया है वे अपनी बिद्या बुद्धि एवं लोकहितैषिता के लिये चाहे जैसे समझे जांय पर समाज की दृष्टि में आदर नहीं पासके अथच उनके बड़े २ विचार पढ़े लिखे लोगों के चित्त को चाहे जैसे जचैं पर समाज में प्रचलित होना निरा असम्भव चाहे न हो किन्तु महा कठिन अवश्य है। इसके अतिरिक्त यह भी बहुत ही सत्य है कि जिन बातों की ओर जिस समाज के अधिक लोगों की अरुचि है वह चाहे जिस प्रतिष्ठा के लोग चला या चाहें सुख से नहीं चल सकीं इन उपर्युक्त बातों पर पूरा ध्यान दिये बिना कोन्फरेन्स कभी फलवती न होगी। यह यद्यपि कांग्रेस की बहिन है और प्रभाव भी उसी का सा रखती है पर स्वभाव इसका अन्य प्रकार का है यह कांग्रेस की भांति हिन्दू मुसलमान क्रिस्तानादि सब धर्म के लोगों का एक होना नहीं चाहती इसे केवल इतनाही अभीष्ट है कि हिन्दू हिन्दुओं की रीति नीति सुधारें मुसलमान मुसलमानों की चाल ढाल ठीक करें न इनके कामों में वे हस्तक्षेप करें न उनकी बातों में ये बोलें क्रिस्तानों के विषय में हमें कुछ वक्तव्य नहीं है क्योंकि उनके यहां इङ्गलैण्डीय जाति का सा वर्ताव है जिसमें बाल्यबिवाहादि कुरीतियां हई नहीं फारसियों के सामाजिक व्यवहार का हमें पूरा ज्ञान नहीं है इससे कुछ कह नहीं सकते रहे हमारे हिन्दू मुसलमान भाई उनके विषय में हम प्रण पूर्वक कहते हैं कि अपनी ही जाति के उन लोगों के विचारांश का आदर न करेंगे जो भोजनाच्छादनादि में पृथकता रखते हैं फिर भला दूसरों की तो क्यों मानने लगे! अबकी बार कान्फरेन्स की कार्य्य प्रणाली से अधिकतर लोग प्रसन्न नहीं हुए इसके बड़े कारणों में से एक तो यह था कि सत्यानन्द स्वामी और पण्डिता रामाबाई ने हिन्दुओं के विषय में वक्तृता की, जबकि आर्य समाजी जो वेद को भी मानते हैं और खाद्याखाद्य का भी विचार रखते हैं वेही समाज में पूर्ण रूपेण आदरणीय नहीं हैं मूर्ति पुराणादि के न मानने के कारण दुरदुराये जाते हैं तो उप

युक्त स्वामी जी तथा पण्डिता जी की बातें किसी को क्या रुच सकती थीं ! दूसरा कारण यह था कि चार रिजोल्युशन पास हुए चारों में—माछू घुटना फूटै आंख— का लेखा था पहिला रिज़ोल्युशन थां कि—१४ वर्ष की अवस्थातक दूल्हा दूलहिन का सङ्ग न होने पावे यदि कोई इस नियम के विरुद्ध चले वह सर्कार से दण्डित किया जावे—हम पूछते हैं सर्कार किस २ के घरमें पहरा बिठलावैगी ? यदि माता पिता इस अवस्था में ब्याह ही न करें अथवा बिवाह होने के पीछे सात वर्ष वा पांच वर्ष से पहिले गवना न किया करें तो ऐसा अनर्थ क्यों हो ? सर्कार को दुहाई देने का क्या काम है ? दूसरा प्रस्ताव यह था कि—यदि कोई पुरुष समाज संशोधन का प्रण करके और इस सभा का मेम्बर होके नियम विरुद्ध चले तो दण्डपावे—खैर यह एक मामूली बात है कोई विशेषता नहीं है. तीसरा प्रस्ताव—१८५६वाले बिधवा बिवाह आईन के सुधार—पर था यह निरा व्यर्थ था अच्छे हिन्दू मुसल्मान अभी बिधवा बिवाह के समर्थक ही नहीं हैं जो इने गिने हैं भी वे समाज में सन्मानित नहीं हैं और यदि बाल बिवाह की प्रथा उठ जाय तो बिधवा बिवाह की बड़ी आवश्यकता ही न रहे फिर यह कुसमय की रागिनी छेड़ना समय की हत्या करना न था तो क्याथा? सच तो यहहै कि मरे हुए पति की सम्पत्ति अन्यगामिनी बिधवा को दिलाने के लिये सर्कार का आश्रय लेना देशमें दुराचार के आधिक्य में सहाय देना है इसमें समाज का क्या भला होगा ? चौथा प्रस्ताव अतिही विचित्र था अर्थात्—बिधवा होने पर जबतक स्त्री पञ्चों और मजिस्ट्रेट के सामने अपने केश कटवाने की सम्मति न दे दे तबतक उस के बाल न काटेजायं यदि कोई उसकी इच्छा के बिना ऐसा करै तो राजनियम का अपराधी हो—वाहरी नई सभ्यता ! भारतीय विधवा न ठहरीं बारांगना ठहरीं ! इसमें उसे कष्ट क्या होता है ? हानि क्या होती है ? सड़ी २ बातों के लिये कानून बनवाने से देश का क्या हित होगा ? जो बातैं प्रजा स्वयं करसक्ती है उन में राजा को हाथ डालना कहां की नीति है ? यदि यही सुधार है तो अगले वर्ष एक यह विचार होगा कि ब्याह के समय लड़कों को रंगीन जामा पहिनना पड़ता है इस से वे लिल्ली घोड़ी का सा स्वांग बनजाते हैं वह स्कूल के पढने तथा कोट पतलून पहिनने वाले लड़कों की रुचि के विरुद्ध है इस से कानून बनना चाहिये कि जबतक लड़का बड़े लोगों के

सामने मजिष्ट्रेट के आगे सम्मति न प्रकट करै तबतक माता पिता उसे भँगवा पहिना के स्वांग न बनावैं नहीं तो सजा पावैंगे! भला ऐसी बातों से समाज का कौनसा अभाव टल जायगा? हमारे राजनैतिक प्रतिनिधियों को चाहिये कि इस विषय में चुने २ पंडितों और मौलवियों को उत्तेजना दें कि वे प्रत्येक समुदाय के मुखिया लोगों को इस ओर झुकाते रहें कांग्रेस की भांति समय २ पर ठौर २ एतद्विषयक व्याख्यान दिये जायं समाचार पत्रों में लेख लिखे जायँ चंदा एकत्र किये जायँ छोटी २ पुस्तकें थोड़े मूल्य पर वितरित हों अवसर पर नगर २ समूह २ से प्रतिनिधि भेजे जाया करें तब कुछ होसकेगा नोचेत् जो बात कांग्रेस ने पांच वर्ष में प्राप्त करली है वह कान्फरेन्स को पचास वर्ष में भी दुर्लभ रहेगी स्मरण रहे कि समाज को जितना सम्बन्ध ब्राह्मणों तथा मौलवियों से है उतना गवर्नमेण्ट से कदापि नहीं है गवर्नमेण्ट यदि कुछ लोगों को या धन को एकत्र किया चाहे तो बीस उलझाव पड़ेंगे बीस बाद विवाद उठैंगे तब कहीं—जबरदस्त का ठेंगा शिर पर—समझ के लोग सहमत होंगे, पर यदि हमारे पण्डित महाराज आज्ञा करदें कि अमुक दिन अमुक पर्व है उस में अमुक स्थल पर स्नान दानादि का महात्म होगा, फिर देख लीजिये ठीक समय पर उसी ठौर कितनी प्रसन्नता से कितने लोग तथा कितना कुछ इकट्ठा हो जाता है! यह प्रत्यक्ष महिमा देखकर भी जो लोग विप्रवंश का आश्रय न लेकर अन्यान्य रीतियों से समाज के सुधार का यत्न करते हैं वह भूलते नहीं तो करते क्या हैं? इस विषय में जितनी शीघ्रता और सुन्दरता के साथ ब्राह्मणों के द्वारा कार्यसिद्धि होगी उतनी गवर्नमेण्ट एवं तत्स्थापित कानून द्वारा कभी न होसकेगी यों बात २ में पराधीनता का प्रेम फस फसाता हो तो और बात है! इस के निमित्त यदि आदरणीय पण्डित अयोध्यानाथ जी मान्यवर पंडित मदनमोहन मालवीय महोदय श्री मान पं० दीनदयालु तथा भारतधर्म महा मंडल एवं विप्रवंश महोत्सव के अन्यान्य उत्साही सद्व्यक्ति कटिबद्ध होंगे और तन मन धन से उद्योग करेंगे तभी कुछ हो सकेगा नहीं तो कान्फरेन्स में सदा खिलवाड़ही होता रहेगा हम इन सज्जनों से अनुरोध पूर्वक विनय करते हैं कि शीघ्र इस ओर दत्तचित हों इस में कांग्रेस का भी बहुत भारी उपकार सम्भावित है हमें पूर्ण आशा

और महान अभिलाषा है कि उपर्युक्त महानुभावों के प्रसाद से आगामी वर्ष में कान्फरेन्स को भी सर्वगुण सम्पन्न देखेंगे ॥

रत्नप्राप्त

श्रीमत् कवि कुल कुमुद कलाधर साहित्याकाश प्रभाकर महारससिद्ध कवीश्वर भगवान तुलसीदास जी गोस्वामी महानुभाव कृत रामायण के विषय में किसी सभ्य देश का कोई सहृदय न होगा जो—हृदय सरोहत बचन न आवा—की दशा का अनुभव न करता हो. विशेषत: भारत संतान के लिये तो सच्चे गौरव एवं उचित अहंकार का एक मात्र आधार संसार भर के अमूल्य रतनों का भण्डार नीति धर्म व्यवहारादि के यावत् ग्रंथों का सार लोक परलोक के समस्त सुख सौभाग्य रूपी राजभवन का द्वार यही तुलसी कृत रामायण है! इस की विशेष प्रशंसा करना—मन मति रंक मनोरथ राज—का उदाहरण बनना है अत: हमारी समझ में हमारे माननीय मित्र श्री पण्डित अयोध्या सिंह उपाध्याय (हरि औध) जी का यह बचन बस है कि—जैसोई रुचिर चारु चरित सियापति को तैसोई कलित कल काव्य तुलसी को है—जबकि देश भर में ऐसा अभागा घर कोई ही होगा जिस में एक प्रति इसकी न रक्खी हो अथच ऐसा भाग्य हीन हिन्दू कदाचित् लाखों करोड़ों में एक ही आधा निकलेगा जिसने जन्म भर में एक बार भी इसे पढ़ा वा सुना न हो तो हमारे इस कथन में क्या अत्युक्ति है कि जैसे प्रत्येक शरीर के रोम २ में प्राण रम रहे हैं और जगत भरमें परमेश्वर व्याप्त हो रहाहै ठीक वैसे ही आर्यावर्त में गोसाईं जी की रामायण रमण कर रही है! पर खेद का विषय है कि देश के दुर्भाग्य ने जैसे और अनेक उत्तम गुण एवं पदार्थ नष्ट भ्रष्ट कर डालेहैं वैसेही हमारी रामायण को भी अस्त व्यस्त कर दिया था व्याकरणी पंडितों की भाषा काव्यानभिज्ञता ने सीधी साधू सरल सरस चौपाइयों में संस्कृत के कर्णकटु कठोर शब्द ठूस दिये! अपनी पण्डिताई दिखलाने की धुन में आके गुसाईं जी की चोखी चीनी के बीच २ गंगा जी की रेणु का प्रबिष्ट कर दी! कबिता के पांचवें सवारों ने हमारी पुष्पशय्या के मध्य रंग बिरंगे पाषाणमय बेल बूटे रख दिये! ऊपर से लिखने और छापने वालों ने अबोध आलस्य एवं लोभ के मारे मक्षिका स्थाने मक्षिका से काम लिया बस

सर्व साधारण को रामायण का सच्चा स्वाद तो दूर रहा सच्ची पुस्तक ही मिलना दुर्लभप्राय होगया और इसी कारण से जैसा जहां जिसकी समझ में आया वैसा गढ़ लिया एक महात्मा कहते हैं—कर्म प्रधान विश्व करि राखा—अशुद्ध है क्योंकि जिसने विश्व में कर्म को प्रधान कर रक्खा है उस कर्ता का नाम तो निकलता ही नहीं है अतः—कर्म प्रधान विष्णु करि राखा—चाहिये! दूसरे महा पुरुष कहते हैं—कछु दिन भोजन बारि बतासा—कैसे बन सकत है पारबती जी तपस्या करती हैं दिन भरि बतुँ करैं का परत है जो बतासा औ बारि कहें जलु पोहें तो सखरमा (श्लेषमा) न ह्वैजाई? तेहते अस चही कि—कुछुदिन भोजन चारि बतासा—तीसरे बुद्धि के सागर छापते हैं—सकल कहैं कब होइहि काली बिप्र बुलावहिं देव कुचाली—हा श्री तुलसीदास जी के अकृत्तिम पदों और सरल रसीले भावों की यह दशा देख के किस हृदयवान अनुभावुक का चित्त चाहि २ न करता होगा! भगवान रामचन्द्र हमारे प्रेमाधर महाराज कुमार श्री बाबू रामदीन सिंह का भला करैं जिन्हों ने सहस्रों रुपया लगा के और महान परिश्रम उठा के श्री गोस्वामी जी की अलौकिक कमाई तीन तेरह होते हुए बचाई तथा श्री रामभक्तों कबिताप्रेमियों एवं भारतसुपत्रों की बड़ी भारी असुबिधा मिटाई अर्थात् श्री तुलसीदास जी के करकमल की लिखी हुई रामायण की अति शुद्ध अथच परम सुन्दर प्रति छपवाई है जिसके द्वारा भारतवर्ष का सच्चा एव अतीव उपकार होना सम्भव है इसमें गोस्वामी जी का जीवन चरित्र तथा कई एक सत्कवियों की लिखी हुई रामायण की उचित प्रशंसा भी है और दृढ़ प्रमाण के लिये गोस्वामी जी के द्वारा लिखित एक पञ्चनामा और आदिमलेख (original manuscript) के पन्द्रह सोलह पत्रों की फोटो (छाया चित्र) भी प्रकाशित किया है इसके अतिरिक्त श्रीरामजन्म का एक ऐसा मनोहर प्रतिबिम्ब दिया है कि बस—गिरा अनैन नैन बिन बानी—का आनन्द आता है! कहां तक कहिये पोथी देख के यही जी चाहता है कि कलेजे में धर लें! इसके लिये हम बाबू साहब को लाखों धन्यबाद देते करोड़ों भांति स्तुति करते तो भी तृप्ति न होती पर इससे संतोष होताहै कि हमारे गोस्वामीजी बिनय पत्रिका में स्वयं उचित प्रशंसात्मकभविष्यतबाणी कर गयेहैं कि—ऐसे रामदीनहितकारी—अतः यहभार हमीं पर निर्भर नहीं रहा देखने वाले आप

कृतज्ञता सहित रीझ २ के अपने हित कारी को धन्यवाद दे लेंगे क्योंकि वस्तु अमूल्य है पर निछावर केवल ६) रु० हैं (बिना फोटो वाली पुस्तक की ४) ही और डाकव्यय १॥) (नहीं २) प्रेमियों का तो तन मन धन निछावर है! जिन्हें काव्य रसास्वदान की कुछ भी रुचि अथच गोस्वामी जी के बचनामृत की कुछ भी तृषा हो उन्हें हम अनुरोध करते हैं कि खड्गबिलास प्रेस बांकीपुर से शीघ्र यह दिव्यरत्न मँगावैं और घर में धरी हुई पोथियों को शुद्ध करलें मूल्य कुछ भी नहीं है तथापि बाबू साहब से हमारी प्रेम प्रार्थना है कि इसे गुटिका के रूप में छोटे हरफों में भी छपावैं जिसमें अल्प सामर्थी लोग भी इसके स्वादु से बञ्चित न रहने पावैं॥

तिल॥

(चलती फिरती बोली में)

हमार जजमान मनमां कहत ह्वै हैं कि आजु कालिह मांह का महीना आय बाह्मन देउता तिलवन का ढोलु डार रहे हैं पै हम इन दुइ अच्छरन मां औरउ कुछु दखावा चहित है याके दांय हमरे पराग वाले पुरिखैं (हिन्दी प्रदीप सम्पादक) कहा ता कि—लकार ककहरा भरे का अमितु आय—औ हमरे राम लिखा लेइन कि—तकार—तेही की बहिनी आय फिरि भला जेहमां ल औ त दूनौं होयँ तेह का ऐसे वैसे समझाबु कहां कै भलमंसी आय हो ? पर मथुरा कैति की बोली मां—लत—कै कथा लिखी गैती आसौं तिलन का महातमु न लिखतेन तो कैसे बनत यहू मां तो वोई अच्छर हैं ! बाहरे तिल जेह के बिना पितर पानी नाहीं पावति देउतन का होमु नाहीं होत तेहि कै बड़ाई मनई कैसे कर सकत है ? ई दखई का छत्राट होत हैं पै गुन बड़े २ भरे हैं भ्यनहीं के पहर उठि कै पैसा प्याला भरि चबाय लीन्ह करै की तौ नेनू (मक्खन) के साथ खाय लीन करै तो कौनौं रोगुदोखु नेरे न आवै तेलु एहिका अस दूसर होतै नाहींना. सब फुलेल एही मे बनत हैं जिन के बिन बड़े २ रसिया औ बड़ी २ सुन्दरिन का चिकनपटु नाहीं होत. फुरी पूछौ तो तैलफुलेल मे अक्याल सिंगारुइ नाहीं होत आंखिन कै जोतिउ बाढ़ति है माथे मां जुड़वनिया होति है औ दांह भरि निरदोखिल ह्वै जाति है हम जानित रहे पारसी पढ़ैया तेले का रोगनु औ रोसनाई झूठुइ मूठु कहत हैं पै जब हमरे हियां के बैदौ कहत हैं कि तिल खाय मां औ तेल लगावे मां बड़े २ गुन हैं तौ कैसे न कहन कि यौ बड़ा भारी पदारथु आय! तेलु बहुतौ बस्तुन

मां निकरत है पै जो पण्डित मह राज ते पूछौ तौ यहै बतैहैं कि —तिलाज्जायतेतैलं—फिरहमरेकहैं मां का झूठ है कि मुक्खि चिकनई येही मे होति है न मानो कुछ दिन खाय लगाय कै देखिलेव काया दिपौं २ होय लागै तब मान्यो! नाहीं जा नित उइ कैस मनईहैं जो कहा करत हैं कि—तिल गुर भोजन तुरुक मिता ई। पहिल मीठ पाछे करुआई—ऐसे है कौनो रोगु होय तौ बात दुसरि है नाहीं तिलवा के ऊपर पानी न पियौ तौ कबौं औगुन धरिबै न करी औ आगे के दिनन मां जी पापी वि स्वासु बढ़ाय कै घटिहई करत रहैं उनकी बातैं जाय देव तौ अकबर ऐसेन के तौ मिताई का पूजापा होति रहै आजौं कालि्ह ऐसेकौनो वेहनाओह ना जोलहा मोलहा चहै तुरकई करत होय पै ऊंचो जाति के औ बड़ वंस कै मुसलमान भलेमंसे होतहैं दाख्यो न दुइ बर्स ते बड़केवा सभा (कांग्रेस) मां कस तन मन ते द्यास की भलाई मां लाग हैं तेह ते हमरी जान मां कोहू का दूखबु नीक नाहीं होत नीक औ नागा सब जातिन मां होतहैं हिन्दुनौं मां सेकरन ऐस परे हैं जिनका भोरहीं नांउ लेव तो दिन भरि अन्न ते भ्यांट न होय ऐसे सब बस्तुनो का त्याख्या है रीति २ ते

खात्र तौ संखिया लगे गुन करति है तिलन का तौ कहई का का है? हमरे कहैं का परोजनु यो है कि ऊपर वाली कहावति सब ठांय न लगावा चही मुसल्मान हमारे भाईआंय उनते बिगारु करत हैं, तौ नीक नाहीं करत! औ तिल बड़ी भारी निधि आयं उनहुन के निंदा करबु अक्कि ल का कामु न आय बरह्मा बाबा जो कुछु बनावा हैनि अनइस नाहीं बना यनि हमहीं पंच अपनी बैलच्छि ते चहै जेहका अनइस कै लेन! नाहीं तौ तिल कै महिमा यती बड़ी है कि बरम्हैं उनका हमरी तुम्हरी आंखिन मां धरा है भुइँ औ अदरे पर जौनु कुछु देखि परत है आंखिन वाले तिले के सहारे देखि परतहै जिनकी आँखी क्यार तिलु तनको बिगरि जात है उनका चारिउ खूंट अँधियार लागत हैं कबौं कुछु सुझिहौ नाहीं परत. राम करै सब के आंखी दीदा बने रहैं इनहिन मे सब कुछ है! औरु सुनो जिन का दई अपने हाथ गढ़ा है जिनका रूपु देखिके मेहरियन मंस वन के भूख पियास हरति है उन के गोरे २ गाले पर बौधां करिया २ बुँदका अस होत है वहौ तिलुई कहा वत है जेहिके ऊपर रसिया जिउ प रान काढ़त है औ बड़े २ कबेसुर याक २ जीभ लाख २ बडाई करते है कहो तौ

याक्र सेर सुनायु देनपै तुम कहे लगिहौ कि अलबी तलबी बवालत है येहते आगूड कहें देइत है

तुम्हरे गाले वाला करिया तिलु हमरी आँखी क्यार तिलु आय काहे ते कि यह के बिना दिन दुपहरी हमरे लेखे अँधेरिया राति रहतिहै* हमका नेहचो है कि ऐसी २ बातन के तौ मन दौरै हौ तौ कबौं तिलन का निदरैहौ न बरुक यौ समझे रहिहौ कि मनुक्खि का जलम बार २ नाहीं मिलत यहते जौनी बातन मां अपने गांव द्यास के मनइन का भला होत होय उन मां तिलौ भरि कसर मसर न कीन चही औ कौनौ नीक कामु करैं मां यौ न बिचारा चही कि—तिल च्वराऊ तौ पापु गुरु च्वराऊ तौ पापु— जैसे बनै तैसे अपने लरिका बालेन का अपने भैयाचारेन का कुछु सुभीता के जावा चही यहै मन्सई का धरमु आय औ जेतरे बड़े २ ह्वैगेहैं सब हिन येमै कीन है यहते हमारि बात मानौ औ या बात गांठी बांधौ कि हमरी जाति पांति मां जेते लरिका पुरिखा हैं हम सब के करिया तिल खाये हैं जलम भर इनकै सेवा न करिबे तौ जमराज के हियां तिल २ मांसु नुचावा जाई ! यहते जहां लगे अपने बूते होय अपनेन का भला कीन चही यौ न स्वाचा चही कि अकेले हम कहां लगे का २ करिबे नाहीं तिल २ जोरे पर्वतु होत है कालिह का तुम्हरी हिसकन और चार जने त्यांव ढंग लागि जैहैं तौ सब दुख दलिद्र टर जाई ! तिलुआ लगाय के हमरे बताये कामन का करत रहिहौ तौ याक दिन देउतन कौ नाहीं पूजे जैहौ नाहीं तौ पीना अस मुंह बनाए बैठ रहि हौ कबौं इन तिलन मां तेल न निकरी ! कहौ कुछ तिलौ भरि मनमां बैठ है ? जौ बैठ होय तौ आजु तें यौ समुझि राखौ कि हम सकठन क्यार तिलबोकुन आहिन कि चहे एकु लरिकौ दूब के बौंड़ा मैं मुड़ी काटि लै हमते मिमिआतौ न बनी ! नाहीं हम धरम के तिलङ्गा आहिन अपने द्यास की निति औ अपनी सरकार की नितिनि काम परे पर—पांव पछाड़ू हम धरिबे ना चाहे तन धजी २ उड़ि जाय— येही मां तिलोकीनाथ हमार मरतौ जियत भला करिहैं ॥

*रोज़ रोशन भी है मुझको शबे तार इस के बग़ैर । आंख का तिल है तेरा खाले सियह बर आरिज़ ॥

नादहन्दों के नाम और मूल्य प्राप्ति अबकी बेर स्थानाभाव से नहीं छप सकी पाठक अगले मास तक क्षमा करैं ॥

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमत्प्रेस कालाकांकर में प्रकाशित हुआ ॥

प्रेमएव परोधर्मः

शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदिवा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः ॥
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

CAWNPORE, DECEMBER 5 H, C

VOL. 6 — No, 5

खण्ड ६ — कानपुर १५ दिसम्बर श्री हरिश्चन्द्र सं० ५ — संख्या ५

नियमावली

१—वार्षिक मूल्य १) एकप्रति का ≈) है नमूना भी सेंत न भेजा जायगा

२—ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २) रु० लिया जायगा ॥

३—विज्ञापन की छपाई -)प्रतिपंक्ति लियाजायगा विशेषपूछनेसेमालूमहोगा

४—बैरङ्ग पत्र न लियाजायगाबिन मूल्य पत्र न दिया जायगा

५—लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धो पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहियें और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृजभूषणलाल गुप्त—
मैनेजर ब्राह्मण
कानपुर

स्वागतन्ते महात्मन् !

स्वागत श्रीयुत ब्रैडला! प्रेम प्रतिष्ठा धाम ! पलक पांवड़े करि रहे तव हित देशी माच ॥१॥ स्वागत सज्जन चार्ल्स ब्रैडला ! परम पियारे। स्वागत स्वागत ब्रिटिश बंश विधु जग उजियारे ॥ स्वागत स्वागत स्वागत श्री भारत हितकारी। आवहु निर्भ्रमन्याय निरत नित सतपथचारी ॥ आवहु आवहु भली करी इहि ओर पधारे। बहुत दिनन के भए मनोरथ सफल हमारे ॥ चिर दिन सों अति आश रही तव मुख दरशन की। धन्य विधाता आजु साध पूजी नयनन की॥ प्रियवर ! तुम कहँ रोग ग्रसित सुनि पायो जबते। रहे मनावत देव पितर चिन्तित चित तब ते॥ धन्य आजु कर दिवस तुम्हैं लखि हृदय जुड़ान्यो। जगिहैं भारत भाग बेगि निहचै हम जान्यो॥ जब अनेक जन एक होय कछु करन विचारैं। काज सिद्धि विश्वास तबहिँ सहृदय हृदि धारैं॥ पाँच बरस ते सो कांग्रस महँ परत दिखाई। जुरत आय जहँ देश भक्त तन मन धन लाई॥ ताहू पर सोनो सुगन्ध लखियत इहिबारा। इङ्गलिशजाति सहानुभूति कर चारु प्रचारा॥ ताहू महँ तुम सरिस सुदृढ़ निष्पक्ष नीति प्रिय। करि करुना इत आय दियो अतिशय धीरज हिय॥ कस न करहिँ हम हुलसि हिये सुख आश अनंता। जिन कर निहचै-बिन हरि कृपा मिलैं नहिँ संता-॥ जदपि अनीश्वरबाददोष सब तुमहिं लगावैं। पै प्यारे तव मुख्य मर्म बिरले कोउ पावैं॥ लाखन जन मुख ते नित ईश्वर २ कहहीं॥ पै स्वारथ सनि पर सरबसु कहं हरतहि रहहीं॥ जे परधन परभूमि हरहिं पर निन्दा करहीं। मरन अनन्तर तहूं मुक्ति आशा उर धरहीं। सांचहु वे सब जगतपिता कर करहिं बिड़म्बन। जे न कपट तजि करहिं जगतहित पथ अवलम्बन॥ तुम सम पर दुख देखि द्रवहिं सोई हरि कहं प्यारे। का जानहिं यह परम धरम लघुमति मतवारे॥ जिन छलियन के-हाथ सुमिरिनी बगल कतरनी। कछु न हानि जो वे शतधा निन्दहिं तव करनी। पै हमरे बिश्वास माहिं तुम परम सुजाना। दीनदयाबिस्तरन बपुष धृत बुध भगवाना॥ उन बल रहित अबोल पशुन के प्रान बचाये। दीन दुखित भारत प्रजाहि रक्षण तुम आये॥ यहि शुभ अवसर आनन्द बश कछु कहि नहिं जाई। तव अभिवादन करैं किधौं निज भाग बड़ाई॥ अहो कह यहि समय निछावर तुम पर कीजै। रह्यो नाहिं अगिलो सो धन है सोउ

नित छीजै। हों तव दरसनसुख अँसुआ रहि २ बहि आवहिं। निज बित भरि एई मुक्ताहल नयन लुटावहिं॥ हृदय कमल उपहार ग्रहण कीजै हित कै कै। लैकै आये हैं जु प्रेम प्रफुलित हमह्वै कै॥ कहिय कहा तुम आये हौ केवल कछु दिन कहँ। सोऊ भारतनगरशिरोमणि मुम्बापुर महँ॥ यातें ह्यांकी सत्य दशा दिखराय न सकहीं। महा मनोरथ धारि अवहिं हम वह दिन तकहीं॥ जब सब बिधि सों सुचित होय कबहूं फिर ऐहौ। कछुक काल यह देश देखिबे के हित रैहौ॥ तब लखिहौ जहँ रह्यो एक दिन कञ्चन बरसत। तहँ चौथाई जन रूखी रोटिहु कहँ तरसत॥ जहँ आमन की गुठली अरु बिरछन की छालैं। ज्वार चून महं मेलि लोग परिवारहि पालैं॥ नोन तेल लकरी घासहु पर टिकस लगै जहं। चना चिरौंजी मोल मिलैं जहं दीन प्रजा कहं। जहां कृषी बाणिज्य शिल्प सेवा सब माहीं। देशिन के हित कछु तत्व कहुं कैसेहु नाहीं॥ कहिय कहां लगि नृपति दबे हैं जहं रिनभारन। तहं तिन की धनकथा कौन जे गृही सधारन॥ जहं महीप लगि रजीडेंट सों यहि डर डरहीं। अस न होय कहुं तनक रूठि धन धामहिं हरहीं। तहँ साधारन लोगन की तौ कहा चलाई। नित घेरे ही रहत दुसह दारिद दुचिताई॥ यहि कर केवल हेतु यहै जो नए २ नित। कर अरु चन्दा देन परैं प्रति प्रजहि अपरिमित। कछु काम कोउ करै कहूं ते कोऊ आवै। कहु कछु घटना होय हिन्द ही द्रब्य लगावै॥ लेनहार सुख दुःख आय व्यय कबहु न पूछैं। देत २ सबभांति होहिं हम छिन २ छूछैं॥ जे अनुसाशन करन हेत इत पठये जाहीं। ते बहुधा बिनकाज प्रजा सों मिलत न जाहीं। जिते दिवस ह्यां रहहिं तिते कहु लघु अवसरमहं। जनर जन हित करहिं न स्वीकृत कछुक कष्ट कहं। तनिकहु भोग बिलास माहिं त्रुटि करन न चहहीं। नेकहि ग्रीषम लखे पर्वतन कर पथ गहहीं॥ यातें ह्यां की रीति नीति कर ज्ञान गहैं बिन। सर्वं सधारन लाभ हानि कर खोज लहैं बिन॥ निज इच्छा अनुसार करहिं सब हेत कृष्ण कृति। कछु दिन महँ चलि देहिँ बिलायत यह कुजोग अति। चलत जिते कानून इहां उनकी गति न्यारी। जस चाहहिं तस फेरि सकहिँ तिन कहं अधिकारी॥ बड़े २ बारिस्टर बहुधा बकि २ हारैं। पै हाकिम जन जस जिय चाहै तस करि डारैं॥ निर्धन निहछल निस्सहाय कर कहुं न निबाहू। धनिक चलाक सपच्छ पुरुष पावहिं जय

लाहू ॥ प्रजा न जानहिं कौन इक्क ट केहि अर्थ बन्यो कब। पै यह अचरज ! तेहि बन्धन महं कसे रह हिं सब ॥ समय परे पर खोय मान धन दण्ड सहैं हैं। घर बाहर के काज छोड़ि दौरतहि रहैं हैं। अन जाने फल हेत कष्ट श्रम परत महा है। पै न खुलत गोरखधन्धे कर भेद कहा है ॥ अस अदभुत आईन जहां अनु शासक ऐसे। तहं शासित समुदाय कहो किन निबहै कैसे ॥ केवल जे हाकिम लोगन के अहैं सजाती। अथवा उनकी करैं सबिधि सेवा दिन राती ॥ तेई सुख सुख्याति सुपद लहि स्वारथ साधैं। औरन कहं तो लगी रहैं बहु धाही व्याधैं ॥ निज पर धन सों लघु गुरु उद्यम कियो जु चहहीं। बिनबिचार करभार भरे बिन वे न निबहहीं ॥ जे विद्या अरु गुन सीखत बहु बर्ष बितावैं। बिना सिपारिस उचित नोकरी सोउ न पावैं ॥ उदर हेत जे शिर बेचन पलटन महँ जाहीं। गोरेरँग बिन ठीक आदरित वेऊ नाहीं ॥गोरस्यामरँगभेदभाव अस दस दिसिछायो। जिहिँ–नेटिव–नामहि कह तुच्छ प्रतिच्छ दिखायो। वे बधहू करि कबहुं २ कोरे बचि जाहीं। पै ये कहु २ लकुट लेतहू धमकी खाहीं ॥ उनके सुख हित जतन करत सब हाकिम रहहीं। इनके जिय शत शंक उठहिं जब निज दुख कहहीं ॥ जद्यपि कछु शक नाहिं न इनकी राज भक्ति महं। मानहिं शक्र समान भूप कहं अरु ईश्वर कहं ॥दियो कारकट युद्ध माहिं प्रत्यक्ष दिखाई। देशी जोधन मांड़ पान करि करी लड़ाई। तन्दुल थोरे देखि दिये सब अँगरेजन कहँ। आप अमल मन प्रविशि परे रिपुगनसेना महँ ॥ सन सत्तावन माहिं जबहिं कछु सेना बिगरी। तब राजादिशि रही सुदृढ़ ह्वै परजा सिगरी ॥ दुष्ट समुझि अपने भाइन कहं साथ न दीन्हो। भोजन बिन बिद्रोहिन कर दल निरबल कीन्हो। ठौर २ निज घर लुटवाए अरु फुंकवाये।प्रान खोय बहु ब्रिटिशबर्ग केप्रान बचाए। पक्षपातप्रिय लोग कहहिं कहिबो जो चहहीं।पै सांचे भूपालभक्त भारतसुत अहहीं॥ रामचन्द्र कहँ, अकबर कहँ,अरु लाट रिपन कहँ। को आदर सों नहिं सुमिरत आरजअवनी महँ ? पै सरकारहि केहि प्रकार कोउ यह समझावै। महरानिहि केहि भांति करेजो काढ़ि दिखावै ॥ तुमहीं ते इक आश अहो समुदार शिरोमनि ! देखि जाहु हिन्दुस्तानिन की गति निज नयननि ॥ जे सब भांति दरिद्र दलित ठकसन नहिं पावैं। जिनकहं फिरि २ दुख दुकाल दुरदशा सतावैं ॥ निज तन रक्षा हित जिन हाथ हथ्या

रहु नाहीं। लूटि लेहिं घर चोर चहैं जब जेहि निशि माहीं ॥ नृप हित आतम त्याग करन की कौन कहानी। जहँ संशय युत अपनेहि तन धन हेत बरानी॥ अस असमय लहि जाहिं पुलिस दिस जे सरनाई। तिन औरहु निज कोठ माँहिं जनु खाच बढ़ाई ॥ चोरी चोर डकैत पता कब कौन लगावै। उलटी धन के स्वामी पर आपद इक आवै॥ तासु परोसी इष्ट मित्र गन चासे जाहीं। बिथित भय बिन भेंट दये बिन छूटहिँ नाहीं ॥ जेहि अशिष्ट अन्याय दैव बश कबहुँ सतावत। सो धाय बिन धन खरचे बिन न्याय न पावत। कहा कहिय कहि जाति न ह्याँ की अकथ कथा है। जब कबहूँ ऐहो रैहो पैहो तब थाहै। यही आश तव अधिक समय अब लियो न चहहीं। लखहु बम्बइहि एक बार इतनोई कहहीं। इहि सम उत्तम नगर बिना कशमीर और नहिं। पै लखिहो निरधन भिक्षुक जन कतिक याहु महिं ॥ औरहु देख न जोग बात ह याँ देखहु इक छिन। पुतरीघर दस पाँच रचे हैं मिल जुरि देशिन। जदपि अधिकतर मोटेहि वस्त्र बनैं इन माँहीं। पै म्यनचेस्टर बासिन कहँ सोउ भावत नाहीं॥ निज स्वारथ बस सरकारहि नित रहहिं दबावत। इनके घाटा हेत अनेक उपाय उपावत ॥ अगनित उठत अजोग रहहिं जहँ ऐसे २। तहँ धन जीवन जतन करहिं दुखिया जन कैसे ॥ यहि महँ संशय नाहिं जु श्री विजयिनि महरानी। सुनत रहैं भारत बासिन की आरत बानी। तौ अवश्य अति दया मया उनके उर आवै। जाते सहजहिं सब हमार संकट कटि जावै॥ सन अट्ठावन माँहिं बचन उन जो कछु भाखा। अवसि तासु अनुसार करहिं पूरन अभिलाखा॥ पक्षपात बिन पाय उचित पद भारत संतति। सुख सुविधा युत रहहिं कहहिं नित जय २ श्रीमति॥ पै अबहीं तो इङ्गलिशपुर, को बड़ी सभा महँ। मन लगाय नहिं सुनत सबै हमरी चरचहु कहँ॥ अबहीं तो हम याही हित सुर सुकृत मनावैं। कैसेहु कौंसिल महँ निज प्रतिनिधि पठवन पावैं॥ प्रिय! जेहि दिन तुम्हरे प्रताप ते वह दिन ऐहै। हमरे सुख की अचल नीव वहि दिन जमि जैहै॥ तब हम जियते जै जै कार तिहारी करिहैं। रोमहि रोम असीस देइ उर आनँद भरिहैं॥ जयति चार्ल्स ब्रेडला जगत हित निरत सदाहीं। जिनहिं न्यायपथ चलत ईश्वरहु कर डर नाहीं॥ जय २ इङ्गिशजातिसुजश बिस्तारनहारे। जिन कहँ प्यारे दीन दुखिन कहँ जे अति प्यारे। जय जय जय भारत

आरत गति गारतकारी। सरल सनेह निबाहनिपुण नित दृढ़ प्रनधारी॥ जब लग नभ महं ससि सूरज द्युति दीपत रहई। जबलग जमुना गङ्ग धार औरजमहि बहई। तबलग जीवत रहौ लहौ सब बिधि सुख सम्पति। प्रेम सहित भारती रहहिं गावत तव कीरति॥ तव प्रसाद मनसा कांग्रेस की पूरन होई। रहै सबिधि सन्तुष्ट सदा सब थल सब कोई॥ हम तुम अरु जग कहैं एक स्वर हिय हर्षित ह्वै। श्री बिजयिनि जै! श्री बिजयिनि जै!! श्री बिजयिनि जै!!!

हरिशशिसम्बत पांच में बड़े दिवस के भोर। कांग्रेस महं श्री चार्ल्स दिय दरस अनन्द अथोर॥१॥

शुभमस्तु

मूलन्नास्ति कुतः शाखा॥

हमारे अनेक देश भक्त गण अनेकानेक उत्तम विषयों के प्रचार के लिये हाय २ किया करते हैं, समाचार पत्रों के सम्पादक तथा सम्बादादाता और समाजों के अधिष्ठाता एवं सभ्य सदा समाजसंशोधन राजनैतिक उद्बोधन धर्म प्रचार विद्या सभ्यता उद्योग एकतादि के संचार के लिये दिन रात उपाय किया करते हैं पर हमारी समझ में पश्चिमोत्तर देश वालों की भलाई के लिये शिर पटकना निरा व्यर्थ है! सच पूछिये तो पशु और मनुष्य में बड़ा भारी भेद केवल भाषा का है भय प्रीति क्रोधादि हार्दिक भाव पशु पक्षी भी अपने सजातियों को भली भांति समझा लेते हैं यदि इतनीही विशेषता मनुष्य में भी हुई तो कौन विलक्षणता है? भर्तृहरि जी के इस वाक्य में कोई सन्देह नहीं है कि—संगीत साहित्य कलाविहीनःसाक्षात् पशुः पुच्छ विषाण हीनः—फारसी के विद्वान भी मानते हैं कि—हैवाने नातिक—हैवाने मुतलक—से केवल भाषा ही के कारण श्रेष्ठ होते हैं उस भाषा की एतद्देशवासियों को कुछ भी ममत्व नहीं है इसका बड़ा भारी प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि अंग्रेजी और उर्दू (जो यहां की भाषा न है न होगी) के पक्षी की तो बड़ी २ पूछ है पर देवनागरी जो त्रिकाल में इनकी भाषा है और किसी बात में किसी बोली से न्यून नहीं बरंच हम तथा हमारे सहयोगी अनेक बार सिद्ध कर चुके हैं और काम पड़े तो दिखला सक्ते हैं कि सब से सरल सब से सरस सब से शुद्ध होती है उसका मोह तथा अभिमान करने वाले यदि हैं भी तो उंगलियों पर गिनने लायक सो भी नितांत निस्सहाय एवं निरुत्साह! जिसने कोई समाचार पत्र चलाया होगा उसका जी ही जानता होगा. भला इस

दशा में क्योंकर आशा होसक्ती है कि इस देश के लोग कभी सुधरेंगे ! कब कहां किस जाति ने अपनी भाषा का गौरव बढ़ाए बिना किसी बात में उन्नति की है? कोई बतावे तो! हम दृढ़ता पूर्वक कहते हैं और कोई हठी हमारे बिरुद्ध कुछ कहेगा तो प्रमाणित कर देंगे कि हिन्दू समुदाय जब तक हिन्दी के स्वादु ग्राही हिन्दी की ममता एवं सहानुभूति में तन मन धन से सच्चे उत्साही न होंगे देशी बिदेशी प्राचीन नवीन सुलेखकों के समस्त भाव हिन्दी में न भरेंगे तब तक कभी किसी के किये कुछ न होगा अभी तो यह इतना भी नहीं जानते कि हमारी भाषा क्या है कैसी है उसके सम्बन्ध में हमें क्या कर्तव्य है उसके द्वारा हमारा क्या हित हो सक्ता है तथा अपने हितैषियों के साथ हमें कैसा आचरण रखना चाहिये? जब तक यह लोग इन बातों में पक्के न होजांय तब तक अन्य बातों का उद्योग करना ऐसा है जैसे बिना जड़ के बृक्ष को सींच के फल की आशा करना जिन महात्मा हरिश्चंद्र ने हिन्दी और हिन्दुओं के उद्धारार्थ अपना लाख का घर खाक कर दिया बरञ्च मरते २ भी हिन्दोस्थान ही के अभ्युत्थान की चिन्ता करते २ लीला बिस्तार गये उनका तो अभागे हिन्दुवों ने कुछ गुणग्राही न जाना उनको परोत्तम पुस्तकों को तो कुछ आदर ही न किया दूसरे लोग क्या आशा कर सक्ते हैं कि हमारे परिश्रम से यह कुछ उपकार लाभ कर सकेंगे। जो भली बात की महिमा ही नहीं जानते भलाई करने वालों को माननीय ही नहीं मानते उनसे वे लाभ क्या उठा सकेंगे, हाय कहते हुये कलेजा फटता है कि श्री बाबू हरिश्चंद्र के अमूल्य ग्रंथों को महाराजकुमार श्री रामदीन सिंह (खड्ग बिलास प्रेस बांकीपूर के स्वामी) ने प्रकाशित करके दो वर्ष तक सहस्रों रुपये खोये महान् परिश्रम किया पर अंत में जब देखा कि केवल बारह ग्राहक हैं तो निराश हो के बैठ रहे क्या भारत भूमि इतनी निर्बीज हो गई कि उसके बीस कोटि संतान में से हरिश्चन्द्र कला के लिये दो तीन सौ मनुष्य भी वर्ष भर में ६) रुपये न दे सकें! बाबू रामदीनसिंह को हम कुछ नहीं कह सकते उन्हों ने बित्त बाहर साहस दिखला दिया सर्कार को भी कुछ कहना व्यर्थ है कि उसने ८० कापियां खरीदने से क्यों मुंह मोड़ा उसे हमारी भाषा से ममता ही क्या है दो वर्ष सहायता दी वही क्या थोड़ा अनुगृह था? पर—जिन लोगों

को हिन्दी की रसिकता का अभिमान है जिन के बिचार में हरिश्चंद्र का सन्मान है उन्हें इससे बढ़ के लज्जा का विषय क्या होगा कि उनके जीते जी उनकी प्यारी भाषा के परमाचार्य। उनके प्रेम के परमाधार (नहीं २) पर माराध्य के जन्म भर का परिश्रम इस दशा को पहुंचे ! हाधिक ! क्या कोई कमर बांधने वाला नहीं है? फिर किस बिरते पर बड़े २ मनमोदक बनाये जाते हैं ? यदि किसी को कुछ भी पच हो तो सब से पहिले —कला—के पुनः प्रकाश का उद्योग करे अथवा अन्य बातों का नाम लेना छोड़दे नहीं तो संसार उपहास पूर्वक कहेगा कि मूलन्नास्ति कुतः शाखा॥

—०—

स्वप्न ॥

यह सपना मैं कहौं बिचारी।
ह्वैहै सत्य गए दिन चारी ॥

ज्यों ज्यों कांग्रेस के अधिवेशन का समय निकट आता जाता है त्यों त्यों देश भक्तों के हृदय में नाना भांति के बिचार उत्पन्न होते रहते हैं हमारे पाठकों को यह तो भली भांति बिदित ही है कि ब्राह्मण का संपादक बल बुद्धि बिद्या और धन के नाते केवल रामजी का नामही रखता है तिस पर भी प्रेमदेव की दया से प्रत्येक बिषय में पांचवां सवार समझा जाता है विशेषतः अपने मन से तो—घुओं के घौरहर—बनाने में कोई नहीं चूकता फिर यही क्यों चूके ? अतः जहां बड़े २ लोगों को देशहित की बड़ी २ चिंता उपजती रहती हैं वहां इसके जी में भी अनेकानेक तरङ्गैं उठा करती हैं विशेष कर के जब से सैकड़ों सहृदयों के द्वारा यह निश्चय होगया है कि राजा प्रजा दोनों का अच्छा हित कांग्रेस के उद्योगों की सफलताही पर निर्भर है तब से इसी का ध्यान अधिक तर आया करता है तिसपर भी जब यह समझा जाता है कि अब आगामी समारोह के थोड़े ही दिन रह गये हैं तब दूसरी बातों का अधिक बिचार होना जाति स्वभाव के बिरुद्ध है अतः कभी यह उमङ्ग उठती है कि अब अवश्य भारत के दिन फिरेंगे क्योंकि चारों ओर चतुर लोगों में देशोद्धार ही की चर्चा रहा करती है। कभी यह सूझती है कि 'बारह बरस पीछे घूरे के भी दिन फिरते हैं', फिर हम तो मनुष्य हैं और पृथवीराज (बरञ्च कौरवों पांडवों के युद्ध) के समय से दिन २ दुर्गति ही भोग रहे हैं अतः यदि 'सुखस्यानन्तरन्दुःखन्दुःखस्यानन्तरम् सुखम्' सत्य है तो अब परमात्मा अवश्यमेव हमारी सुध लेगा ! कभी यह

सनक चढ़ती है कि अभी थोड़े दिन हुये जो लोग (आस्ट्रेलिया वाले) सभ्यता में पशु पक्षियों से अधिक न थे वे भी आज विद्यादि सद्गुणों में उन्नति कर रहे हैं हम तो इतने गिर भी नहीं गए हमारा उठना क्या असम्भव है? कभी यह तरङ्ग आती है कि मरणानन्तर कल्पित सुखों की आशा पर हमारे बहुत से भाई सहस्रों की सम्पति और समस्त वर्त्तमान सुखों का मोह छोड़ देते हैं तो क्या हमें अपने देश के भावी सुखों की दृढ़ आशा पर अपने तन मन धन का लोभ करना चाहिये? कदापि नहीं! कभी यह विश्वास आता है कि हमारे प्रेम शास्त्र के अनुसार अनेक प्रकार के लोगों का कुछ एक बातों में मनसा बाचा कर्मणा एक मत होजाना ही अभ्युदय का मूल है और कांग्रेस में यह बात प्रत्यक्ष देख पड़ती है कि सैकड़ों कोस से सैकड़ों भांति के लोग आते हैं और सारी भिन्नता छोड़ के परस्पर भ्रातृत्व दरसाते हैं एवं एक स्वर से देश दुर्दशा निवारण एवं राजा प्रजा में सरल स्नेह सञ्चारण के गीत गाते हैं इसका फल क्या कुछ न होगा? अवश्य होगा। कभी ध्यान आता है कि महात्मा ह्यूम जो न हमारे देश के हैं न जाति के पर हमारे भले के लिये तन मन धन अर्पण कर दिया कर रहे हैं करेंगे क्या इनके उपकारों को हम कभी भूल जायंगे? क्या इनके साहस में हमारे देश बन्धु योग न देंगे? जब कि कुत्ते भी अपने हितैषी के लिये प्राण दे देते हैं तो क्या भारतसंतान उनसे भी गये बीते हैं कि केवल धन का मुंह देख के ऐसे निष्कपट शुभाकांक्षी को कुंठित कर देंगे? नहीं ह्यूम बाबा हम लोग कभी तुम्हारे उद्देश्य से जी न चुरावेंगे। हम भारत माता के पुत्र हैं जो अपने उपकारियों की प्रतिमा पूजन में परम धर्म समझते हैं सारा संसार हँसा करे कुछ पर्वा नहीं पर जिसे हम समझ लेंगे कि हमारा है उससे बिमुख होंगे तो मुख दिखाने योग्य न रहेंगे अतः कभी किसी दशा में तुम्हारा जी छोटा न होने देंगे। हम जानते हैं कि तुम्हारी प्यारी तथा हमारी हितसाधनहारी भारत की जातीयमहासभा एवं इङ्गलिश एजेंसी को चालिस सहस्र रुपया वार्षिक ब्यय निश्चय चाहिये इसके बिना यह दोनों महत्कार्य नहीं चल सकते पर ईश्वर न करे जो कहीं इन में कुछ भी बाधा हुई तो फिर सौ पचास वर्ष हिन्दोस्थान का संभलना कठिन है! यह भी हम मानते हैं कि हमारे पूजनीय बुड्ढे ह्यूम मह

दय) ने बिन बाहर धन लगा के अब तक कांग्रेस का काम चलाया है और यहां वालों से यथोचित सहारा नहीं पाया है बरंच बंबई वालों ने रुपये के लोभ से हमारे ह्यूम का जी कुढ़ाया है पर क्या चिंता है—उद्योगिनम्पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी—बंबई की महासभा में जब इसका आन्दोलन होगा तो अवश्य कोई उत्तम राह निकल आवेगी! अपने सच्चे उपकार के लिये तीनसौ पैंसठ दिन में चालिस सहस्र रुपया एकत्र होना कठिन चाहे हो असंभव नहीं है! यदि एक बार बीस लक्ष मुद्रा एकत्रित होजाय तो उन के ब्याज से सारे दुःख दरिद्र टल जायंगे हर साल की हाव २ मिट जायगी हम बीस कोटि भारत बासी यदि धेलार इकट्ठा करेंगे तो(२००००००) हो सकताहै बहुत से लोगों ने वर्ष भर तक एक रुपया प्रति मास देने का एवं अन्य लोगों को इसी निमित्त कटिबद्ध करने का प्रण कर लिया है इसके अतिरिक्त अभी ग्रामों में एतद्विषयक चर्चा भली भांति नहीं फैली यदि सौ पचास लोग अपने आसपास के ग्रामों में फिरने और उचित रीति से सर्वसाधारण को कांग्रेस की उत्तमता एवं आवश्यकता समझाने तथा उनसे सहायता लेने का उद्योग करें तो बहुत सहज में सब कुछ होसकता है उपाय में न चूकना चाहिए सिद्धि तो ईश्वर आपही देगा—मनुष मंजूरी देत है कब राखैंगे राम—हमारे प्यारे ह्यूम हतोत्साह क्यों होते हैं धैर्य और साहस से क्या नहीं होसकता? जिस कांग्रेस के लिए हिन्द और इङ्गलिस्तान के एक से एक बिद्वान सज्जन छटपटा रहे हैं उसमें कभी त्रुटि होगी यह कैसे होसकता है इसी प्रकार के बिचार करते २ एक दिन आंख लग गई तो क्या देखते हैं कि दुपहर का समय है सूर्यनारायण की प्रखर किरणें शीत के प्राबल्य को ललकार २ के साहस दिला रहीहैं पर उसे भागते हुए कुवां खातर भी नहीं सूझता ऐसे में हम और हमारे नगर निवासी एक नवयुवक मित्र न जानै किस काम से निवृत्त हुए घर आरहे हैं और सड़क पर एक ग्रामीण भाई वृक्ष के नीचे बिश्राम लेरहे हैं इनकी अवस्था चालीस वर्ष के लगभग है और अंबौआ की मिरजई गुलाली से गहरी रंगी हुई मारकीन की धोती शिर पर ढाई तीन आने गज वाली मलमल का मुरेठा पासही गठरी के ऊपर पिछौरी चढ़ी हुई मोटी लाल रंग की बनात और एक अधोतर के अंगोछे में बंधी हुई लुटियाडोर तथा पान की थैली देखने से स्पष्ट बिदित होता था कि किसी गांव के साधारण भले

मानस हैं कई कोस की सफर किए आरहे हैं इस से शरीर शिथिल हो रहा है पैरों में धूल चढ़ रही है अभी २ जूता उतार के बैठे हैं पर मुख पर एक प्रकार का उत्साह दिखलाई दे रहा है जिस से जान पड़ता है कि अपने बिचार के आगे थकाहट को कुछ चिंता नहीं करते इस जमाने में इस वय के पुरुष में ऐसी दृढ़ता देख के हमारा कौतुकी चित्त इन महाशय से बात चीत किए बिना न माना अत: पास जाके बार्त्तालाप छेड़ा

वह बातें फिर सुनावें गे

देखिये ! देखिये !! अवश्य देखिये !!!

चौथी कांग्रेस (प्रयाग) की रिपोर्ट हिन्दी में भी छप गई लखनऊ अमीनाबाद में श्री मुनशी गङ्गाप्रसाद वर्मा (हिन्दोस्थानी पत्र के स्वामी) के यहां मिलती है सुन्दर पुष्ट कागज पर टाइप की छपी ३०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य डाकव्यय सहित १=) बहुत नहीं है विशेषत: नागरी के रसिकों तथा कांग्रेस के प्रेमियों को तो अवश्य शीघ्र मंगाना चाहिये नहीं तो बिक जाने पर पछताना पड़ेगा और जिन्हीं कांग्रेस का ज्ञान न होने के कारण अनेक भ्रम उठा करते हैं उन्हें भी उचित है कि इसे देख के अपनी दुविधा दूर कर डालें इसकी भाषा भी ऐसी नहीं है कि कोई समझ न सके हमारे प्रिय मित्र मुनशी बालमुकुन्द साहब (एसिस्टेण्ट एडीटर हिन्दोस्थान) ने केवल देशोपकारार्थ रातों को जाग २ कर अति शीघ्रता में इसे अनुवाद किया है एवं उपर्युक्त वर्मा महाशय ने सैकड़ों रुपये लगा के और महा परिश्रम करके अलप काल ही में छपवांयाहै अत: यदि कहीं २ मात्रादि की भूल रह गई हो तो मार्जनीय है यदि देश भक्तों ने इस बेर अनुबादक अथच प्रकाशक का उत्साह बढ़ाया तो आगामी अधिवेशन की रिपोर्ट अति शीघ्र अतीव सुन्दर तथा अत्यंत सुहावनी भाषा में मुद्रित की जायगी वर्तमान ग्रंथ के द्वारा हमें देखना है। कि भारत में अपनी मातृभाषा और मातृ भूमि के हितैषी कितने हैं ॥

सन्तान ॥

श्री पण्डित अयोध्यासिंह उपध्याय (हरि औध) कृत छप्पै ॥

कोउ स्वाद न भलो सरस फल सम दरसावे । कोउ गन्ध न भलो कल कुसुम सौंह जनावे ॥ कोउ सुख है भलो होय सुख के सम नांहीं ॥ कोउ धन है भलो नांहिं सुत सों जग मांहीं ॥

घायल हिय हित संकट परै यही सुखद औषध अहै। तन प्रान यही पंकज यही सोमलता रस है यहै १ याही सों पित मात हीयकलिका बिकसाहीं। याहि सुमन बल गृह बिलोकि बाटिका लजाहीं। याही सों सब सुख प्रमोद की है अधिकाई। याही सों है बसत धाम नर को छबि छाई। जेहि भांति रहै बिकसित हियो जो न होय प्यारो तनै। घरको मसान हूं ते बुरो तात बिना जग जन गनै २ जरठ रहत जासों जवान यह लकुट अहै सो। रहत जाहि सों प्रान पीन यह मुकुतक है सो। जगत जाहि सों रहत नाम यह चिन्ह अहै सो। दिपत रहत जासों अगार यह दीपक है सो॥ हरि औध याहि धनको कबहुं नहिं खोवहिं धन धाम हित। बदि के बदले या लाल के मोती देहिं लुटाइ नित ३ तेज यही बल यही प्रबल परताप यही है। ओप यही दुति यही पति यही दाप यही है। बिभौ यही बित यही धन यही माल यही है। हीर यही मनि यही अमोलिक लाल यही है। हरि औध होय ढिग सुअन तो निकट नहीं दुख बान है। कछु अहै पास नहिं जो न यह चारु पदारथ पास है ४ अहै तात सों मात पिता को सुख अरु आसा। अहै तात सों दुखहू में जीवन सुख रासा। अहै तात सों जोति नैन लोहू तन माहीं। अहैतात सों भये बृद्धहू बल हिय काहीं। चित के सुचैन मनको प्रमुद प्रान काहि पूख न अहै। हरि औध तरुन मम तात है जरा मांहि यह बल रहै ५ सो सुबस्तु है रहत सबै जासों मुद पागे। सो सुचैन है रहत सुख घटी जासों आगे। सो मानिक है रहत धनी जासों जिय आसा। सो मोती है रहत प्रान जासों सहुलासा॥ हरि औध होय सुख सक्ति बल सदा साथ याके अहै। जेहिओर जातयह बिलगह्वै सोई पथ प्रानहुं गहै ६ उजरन पूंछहु भरेधाम की यह पति पाहीं। पूछहु घर वारेन सों यहि अंतर दुख काहीं। बिगरन पूछहु भाग केर माता पितु पासा। नृप दसरथ ते पूछहु बिछुरन रमा निवासा॥ हरि औध दिखावैं देस नहिं कबौं सोक प्रिय तात को॥ बहि जात नैन पथ ह्वै रुधिर होय सहित सब गात को ७०॥ हे प्रभु आपत न होय कामना तरु काहू को॥ बिना दीप को कबहू न होवे घरु काहू को। मात पिता से बिलग तात नव बय नहिं होवे। छूटै जगत पै सुत बियोग कोऊ जनि जोवै॥ जो विन भैखग है जगत मे होय दाग ही तो अहै॥ सो घर मसान से है बुरो जहां जोति दीपक न है ८।

शेषआगे
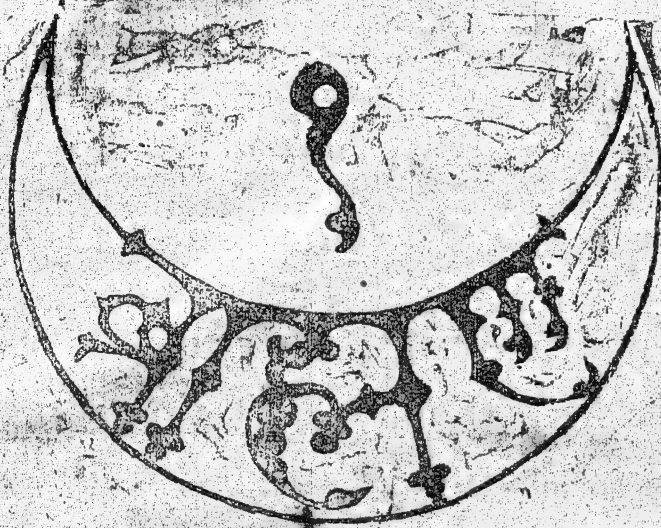
श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार हनुमत्प्रेस कालाकांकर में प्रकाशित हुआ

प्र मएव परोधर्मः

शत्रोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि

मासिक पत्र

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त

VOL. 6 { CAWNPORE, NOVEMBER 5 H. C. } NO. 4,
खण्ड ६ { कानपुर १५ नवम्बर श्री हरिश्चन्द्र सं० ५ } संख्या ४

नियमावली

१--वार्षिक मूल्य १) एकप्रति का ॥)
नमूना भी सेंत न भेजा जायगा॥

२--ग्राहक होने से तीन महीने
के मूल्य भेजेंगे उन से १) पीछे २)
लिया जायगा।

३--विज्ञापन की छपाई ।) प्रति पंक्ति
लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा।

४--बैरङ्ग पत्र न लिया जायगा बिन
मूल्य पत्र न दिया जायगा।

५--लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी
पत्र सम्पादक के नाम भेजने चाहिए
और मूल्य नीचे लिखे पते पर

बृज भूषणलाल गुप्त--
मेनेजर ब्राह्मण
कानपुर

युवराजकुमार! स्वागतंते॥

स्वागत! स्वागत!! परम प्रिय श्रीयुवराज किशोर। भली करी निज दरस दै सुख छायो चहुँ ओर १

स्वागत! स्वागत!! चिरञ्जीव युवराज कुँअरवर। स्वागत स्वागत ब्रिटिशराज बरबंश उजागर। स्वागत स्वागत श्री विजयिनि के प्रान पियारैं। स्वागत प्रिंसेज़ आफ़ वेल्स अँखियन के तारे॥ आवहु आवहु भली करी इहि दिशि पग धारे। तव बिधु बदन विलोकि भए धनि भाग हमारे। भारत माता आज तुम्हैं उर लाय जुड़ानी। जुगर जीवहु हृदयकमलसूरज सुखदानी॥ अहो तुम्हैं लखि कहि न सकहिं हम जो सुख पायो। अहो धन्य जगदीश आज भल सुदिन दिखायो। यहि शुभ अवसर अहो कहा हम तुम पर वारैं। निज तन मन धन सकल तुच्छ-तम हृदय विचारैं॥ भेंट धरन के जोग परत कहुं कछु न दिखाई। मिलतो कहुं जु सुमेरु समझते सोउ हम राई॥ बड़े २ नृपबरन दिए अनमोल पदारथ। विद्वानन दीन्हे अभिनन्दनपत्र यथारथ॥ हमतो आशिरबाद बिना कछु पुंजी न राखैं। विप्रबचन परमान होउ सत चित ते भाखैं॥ जबलग जगमहँ गङ्ग जमुन जल धार सुहाई। तबलग जीवत जु तनिक रूठहिं मनमाहीं, तौ त्रिलोक

रहौ लहौ बर त्रिभव बड़ाई॥ जीवहिं तव पितु मातु कका काकी अरु आजी, जिन की फूली फुलवारी तुम ते रुचि राजी॥ बढ़ै वंश परिवार सुजस सुख सदा तिहारो। कहै बिधाता-एवमस्तु-सुनि बचन हमारो॥ दै असीसहू अबहिं उमग औरहु मन माहीं। चाहहिं सेवा कियो जातिगुण यद्यपि नाहीं॥ दूजी सेवा करन हेत द्विज नहिं जग जाए। तुमहिं दिखैहैं हिन्द जाहि देखन तुम आए॥ सजि भूषण बसन जु आवहिं निकट तुम्हारे। वे भारत की सत्य दशा न दिखावहिं प्यारे॥ निज स्वारथ हित ठकुरसुहाती बात बनावहिं। कछु को कछु दिखराइ तुम्हैं सांचेहु फुसिलावहिं॥ नतु आए तुम तीर जिते राजा महराजा। लै अमोल उपहार बिबिधि बिधि सजि २ साजा॥ भाँति २ के राग रङ्ग घर बाग दिखाई लाखन को धन खरचि करी जिन तव पहुनाई॥ देखहु ध्यान समेत हाल सांचे इन केरे। पैहौ सब कहु रजीडण्ट साहब के चेरे॥ इन कर सब कछु सेत स्याम उनके कर माहीं। तारन बोरन हार वही इनके शक नाहीं॥ आजु जु ये आनन्द बित बाहर दरसावैं। केवल उनहीं कर आयसु प्रत्यच्छ जतावैं। बिन अपराधहु वे

जु होई। तौ तिनकी यंत्रणा कहै कैते करि कोई। जब ज्यों त्यों करि पलटि उहांते घर मह आवहिं। तब देबो देवता पूजि धनि भाग मनावहिं। जब कोउ हाकिम कबहुं गांव मह दौरा करहीं। तब ये स्वागत हित इतउत नित दौरत मरहीं। अण्डा मुरगी घास पात लकड़ी पहुंचावत॥ पल कल पावत नाहिं ग्राम बासिन कलपावत। जमीदार हू ते बढ़ि कै गति ग्राम जनन की। बिधि बिरची है उनहिन की छाती बज्रन की॥ जिनकी पूंजी केवल हर पुर खुरपा खारा। घास फूस के घरन मांहि जे करहिं गुजारा॥ गोबध के परभाव बैल बहुमोल बिकाहीं। याते तिनहिं खरीदि सकत सब कोउ नाहीं॥ जे कहुँ पावहिं करज खरीदहिं वे इक जोरी। अपर मांगि लावहिं इत उत सों मोरी तोरी॥ या बिधि खेती करि कुटुम्ब कर पालन करहीं॥ नतरु मजूरी जाय उदर ज्यों त्यों करि भरहीं॥ राति दिवस करि कठिन परिश्रम बहुल माहीं। तबहूं कबहूं-नहिं कटि पट नहिं पेट अघाहीं-। साग पात संग रूखोसूखो अन्न खाहि नित। नोन महँगअति मिलत रहहिं तरसत तिहि के हित॥ गाय भैंसि जो होति तासु घृत दूध न खाहीं। ताहि बेंचि कछु अन्न लाय डारहिं घर माहीं॥

मठा होय, अथवा काहू के घरते आवै। सोइ काची पाकी रोटिन कर साथ पुरावै॥ बहुधा परत अकाल अन्न नहिं मिलत इनहिं जब। तब विरछन की छाल मिलावहिं चुन माहि सब॥ शीतकाल मह तन्दुल कर तृण ओढ़ि बिछाई। राति बितावहिं बृद्ध तरुण सिसु लोग लुगाई। वह पयारहू दयावान जब कोउ आवहिं। निज घोड़न ढिग डारन हित उठ वाय मङ्गावहिं। यहि प्रकार दिन भरत तहूं परपोत भरन हित। बहुधा सब सम्पति खोवहिं सहिलात घात नित। समय परेपर येई पकरे जाहिं बिगारी। सब को गारी मार खाहिं बालक नर नारी बहुतक ऐसे दुःसह जीवन ते अकुलाई। देस त्याग करि-मरिश द्वीप-मह निबसहिं जाई॥ बहुतेरे जन द्वार २ मङ्गन बनि डोलहिं। तनिक नाज हित दीन बचन जेहि तेहि ते बोलहिं॥ बहुत लोग पर देश भागि अरु मांगि न सकहीं। चोरी चण्डाली करि बन्दीगृह पथ तकहीं॥ पेट अधम अनगनतिन अकरम करम करावत। दारिद दुर गुण पुंज अमित उरपुर उपजावत॥ सो दरिद्र नित रहत देश कह दस दिसि घेरे। है माटी के चूलह इहां घरमें सब केरे। यहि कर केवल हेतु यहै जो ह्यां कर सब धन। टिक्कस ब्यापारादि पंथ

ह्वै पहुंचत लन्दन ॥ फिरि ह्वां ते यहि ओर कबहुं कैसेहु नहिं आवत। बस याही ते दुख दरिद्र दुरदसा सतवत ॥ उतते जे अनुसाशक आवहिं ते कछु दिन कहँ। सुनहिं प्रजा की पीर इतो अवसर कहँ तिन कहँ ॥ नियत समय लगि राज काज करि घर फिरि जाहीं। दूजे आवत याही विधि उनके थल माहीं ॥ बिन बहु दिन सहबास परस्पर प्रीति न होई। प्रीति बिना ह्वै सकत हितू कब केहि कर कोई ॥ उनके जे सहबासी जिन सन उन कहं प्रीती। तिनही कर वे भलो करत सब थल सब रीती ॥ निज नेहिन कर लाभ होय जेहि विधि सोइ करहीं। हानि हमारी कछु होय कछु ध्यान न धरहीं ॥ देखहु, मदिरा सी कुबस्तु जेहि सब जग जानै। नाशति जो धन धर्म लाज बल बुद्धि परानै ॥ जाति पच्छ बस वहो न ह्यांते जाति हटाई। बकत मरहिं किन कोटि २ सज्जन समुदाई ॥ अंधाधुन्ध हमरो धन खरचहिं पै न बतावहिं। केहि कारज महं केहि निमित कब कतिक लगावहिं ॥ हम पूछहिं तो कोउ २ तुरतहि उठहिं रिसाई। कबहूं कोउ फुसिलावहिं कछु को कछु समझाई ॥ कौन नियम कब क्यों या-पहिं हम सों नहिं कहहीं। पै तेहि के बन्धन महं हम कहं बांधत रहहीं ॥ निज इच्छा अनुसरहिं सदा हमसों बिन पूछे। यहि महं हम नित होत रहहिँ सबही बिधि छूंछे ॥ तेहिपर दुसह दुकाल रहत नित सिर पर ठाढ़ो। प्रजा पुंज बिन मीच मरत पेटागिनि दाढ़ो ॥ दिन २ दूनी दीन दशा ह्यां के लोगन की। देखत छाती फटति सकति नहिं रहति बचन की ॥ खिन्न कियो हम चहत नाहिं तव कोमल मन कहं। याते ह्यां की कथा सुनाई सन्छेपहि महं। भली होय तुम भली भांति भारत न निहारो। बालक हो कहुं सहमि जाय जनि हृदय तिहारो। हां, जु कबहुं तुम्हरी दादी हमरी महारानी। इत आवहिं अरु सुनहिं दुखिन मुख कातर बानी ॥ तौ निहचै निज दया दृष्टि सों सब दुख हरहीं परम प्रीति सों अखिल जनहिं आनन्दित करहीं ॥ पै हमार असभाग कहां जो दरसन पावैं। अपने मुख सों उन कहं अपनी दशा सुनावैं ॥ वे बैठी हैं उहां इहां हमरी यह गति है। दुखहू रोवत कबहुं २ डर लागत अति है ॥ यह जिय धरकत-अस न होय कहुं कोउ सुनि लेई। कछू दोष हमारहि अरु रोवन नहिं देई— ॥ अहो कुंअर! जब यां ते तुम उनके ढिग जैयो। सुचित देखि कछु बातचीत को अवसर पैयो। कहियो भारत की आरत गति

धरि पद माथा। अपनाए की लाज देवि अब तुम्हरे हाथा ॥ रक्खहु रक्खहु भारत आरत शरण तिहारी। अब सब ह्यांकी प्रजा अहै अति दीन दुखारी॥ कारे गोरे भले बुरे तुम्हरहि कहवावैं। तव करुना बिन और कहूं अवलम्ब न पावैं॥ कै इन कहं निज ढिग इङ्गलिशपुर लेहु बुलाई। ब्रिटिश जाति सम सुख सों रहि करि हैं सेव काई। जब नन्दन बन पवन पानि गुण तन भिदि जैहैं ॥तब फिरि भूले हू भरतभूमि कर नाम न लैहैं ॥ दैव योग दुख परि है तब तव मन सुख कहिहैं। तव हाथन की छांहि मांहि आनन्दित रहिहैं॥ अथवा कोउ निज बन्शज उत देहु पठाई। राजै निज परिवार सहित नित ह्वै चिर थाई॥ कबहु २ करिजाय दरस तव चरण कमल कर। पै जिय जानै रहै हिन्द कहं निज निकेत बर॥ इहि प्रकार ममता दृढ़ ह्वैहै मन महं द्वौ दिसि सुख सनेह सङ्ग राजा परजा रहिहैं दिन निसि। नतु हिन्दुस्थानी जन ऐसी अर्चा पावैं। जाने २ सज्जन निज प्रतिनिधि ठहरावैं॥ जिन कामन महं होय कछू सम्बन्ध प्रजाकर। तिन महं उचित सलाह देहिं नित ते सुविज्ञवर॥ इहि बिधि भारत कर समस्त संकट कटिजैहै। राज तिहारो जब लौं चन्द्र सूरज लगि रैहै॥ येहो श्रीयुत प्रिन्स! जु यह बिनती सुधि रखिहो। समयपाय श्रीपितामही सों कहि अभिलखिहो॥ तौ तनिको सन्देह नाहि वह भारत स्वामिनि। न्याय दयाशुभ गुणकी मूरति सत पथ गामिनि॥ कछु उपाय करि प्रजा बर्ग की बिपति बिदरि है। सहजहि महं आनन्द अमृत की वर्षा करिहै॥ फिरि हम कबहू तुम्हरो गुण जिय ते न भूलै हैं। करिहैं जैजैकार सदा इमि आशिषदैहैं॥ जुग २ जीवहु जय जस युत युवराजदुलारे॥ जुग २ जीवहु श्री बिजयिनि के प्रान पियारे॥ बढै सदा तव विद्या बुधि बल बिभव बड़ाई। दिन दूनो सुख सुमति सुकृति सम्पति अधिकाई॥ रहै तिहारे बन्श राजलछिमी ह्वै सुस्थिर। सब बातन महं सकल महिप राखहि अब नत शिर। रहहु जगतपति चरण छत्र छाया तर नितही। रहहिं मित्र तव मुदित नशावै ईश अहितही॥ हम तुम अरु सब जगत कहै नित प्रमुदित चित्त ह्वै। श्रीविजयिनि जै! श्रीविजयिनि जै!! श्री विजयिनि जै!!!

हरि शशि सम्बत् पांच मह सित पख अगहन मास। श्री बिक्टर आगमन ते भयो हिन्द सुखरास॥

शुभमस्तु

प्रेम प्रशंसा ॥

इस नाम और निम्न लिखित

पद्य के आशय से हमारे कोई २ पाठक कदाचित् आश्चर्य करैं पर यह वाक्य स्मरण कर लेने से सारी शंका दूर होजायंगी कि प्रेम का पंथ सबसे निराला है उस की झलक हृदय में आती है तब स्तुति निन्दा एक समान होजाती है प्रेमी की गाली गाली नहीं कहलातीं क्योंकि वे स्वादु शून्य नहीं होतीं फिर इस कविता का इस के अतिरिक्त और कौन नाम रखने योग्य था ? लखनऊ निवासी मिरज़ा रजबअलीबेग साहब सुरूर का लिखा हुआ फिसाने अजायब उरदू के उत्तम ग्रन्थों में से है उस में एक मनोहर मुसद्दस है जिस का पहिला चरण यह है कि 'क्या मैं इस काफिरे बदकेश का अहवाल कहूं, यह छप्पै उन्हीं षट् पदियों का अनुवाद है जो रसिक उरदू वाले छन्द को देख २ के इन्हें पढ़ैंगे वे अधिक आनंद पावैंगे यद्यपि कविता के लिये उरदू भी बुरी नहीं है वरंच खड़ी पड़ी बोली से कहीं भली होती है पर ब्रज भाषा के आगे क्या है ? यही दिखलाने को हम यह छप्पै यहां प्रकाश और उरदू वाले मुसद्दस को भी देखते जाने का निवेदन करते हैं ॥

सम्पादक

—०—

✓ प्रेम प्रशंसा ॥

श्री पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय (हरि औध) निज़ामाबाद निवासी द्वारा अनुवादित ॥

छप्पै ॥

कहा चरित हम कहहिं या कुपथ रत कपटी को ! यही रक्त प्रिय पियत रक्त प्रेमिन के ही को । यही नरन को निबल और निन्दित निरमावै । क्रम क्रम यही अमतन कहं उनमत्त बनावै । है यही रुधिर स्रावी सदा असृक पान कारी नरन । हरिऔध यही कुपथी अहै आरज गन मतिगति हरन १ यही निठुर ह्वै करत प्रति पुरुष को उपहासित । यही बनावत है सबके दृग को निर्झर नित । कबहुं दिखावत गिरिवर कबहूं निरजन कानन । कबहुं बतावत अगम पंथ कबहूं दुख थानन । भरमाय द्वार द्वारन निदरि दलित बसन रज लुठित तन । यह असामान असहाय करि हरत प्रान सम प्रिय रतन । २ यही हुतो श्री गोपीजन के दुख को कारन । यहीं कियो नल दमयन्ती में बिरह प्रसारन । यहीं नृपति गन मान्य नहुख को उरग बनायो । है हरि को यह कोप प्रणय किन याको गायो । जग जननि राधिका की भई हीन कामना याहि बल । हरि औध लाज वारिन किती भईं वे परद अरु अथल ३

पुरूरवा सम याने बहु बौरहे बनाये ॥ करि विदेहता यहीं किये आपने पराये। जदपि जगत में विदित अहैं सन करतब या के। पै सोइ जानहिं याहि जो हैं या पथ के थाके। कबहूं अंतरपट प्रेयसी ओट माहिं दुरि कै रहत। हरि औध सनेहिन सिर कबहुं चढ़िके यह परगट दहत ४ श्री रुक्मिनी विमोह हेत जाचक बच भो यह। सुमन वाटिका मैं बिदेहजा मो हक हो यह। रुरुशर्मा की सेस आयु को अरध कियो यहिँ। प्रति केहरि के प्रान हरनि हित पान लियो यहिँ। कहुँ सुन्दरता बनि जात यह कहुँ कटाच्छ हावादि कहुँ। हरि औध कहूं हिय पीर यह होत ताप कहुँ बाद्य कहुँ ५ रावन सरिस अनेकन सिर दीन्हे ह्वै खेदित। पति रोकित गोपीन प्रान त्यागे हैं अगनित कबहुँ प्रेयसी निकट कबहुं प्रणयी ढिग आयो। या सों बच्यो न जार और नहिँ जोगकमायो। हरि औध मिलत जाको असह खेद सोक या सों मिलत। तिमि मिलत चिता नहिं काहु को होत कफनहू की किलत ६ सती तियन को धरम ओट दै सती कियो यहिं। कबहूं पात्रक को प्रसून सम बिरचि दियो यहिं। ताको तज्यो न प्रान जाहि जीवत यहि पायो। और जहां यहिँ चमत्कार आपनो दिखायो तहँ काम मृतक जन सों लियो रखि निकाम जीवित पुरुख। हरि औध रख्यो बेपीर ने नाम पीरहू केर सुख ७ अति अपार तिमि बृहत चरित जग में है याको। भयो निंद्य अरु इतर बन्यो संगी यह जाको। परो खाट पै रहत बिकल याको रोगीहत। अरु यह दै दै डंक कूच को डंक बजावत। हरि औध खेद दुख सोक तजि कहा देत है यह अपर। बदि निसा समागम की, दिखा देत बियोग दिनेस कर ८ प्रति प्रसून मैं सो बनाव सों दुरयो यही है। कोकिल हिय उनमाद कंठरुत फुरयो यही है। सम्पूरन मैं यही असहू मैं यह दरसै। बृन्दारकहू होय ताहु याको छल परसै। बहु बार अदोखिन को रुधिर याहि हम बहावत लख्यो। हरि औध पै कबहुं मेल नाहिँ चितवन पै आवत लख्यो ९ अतिहि अलपही हाल लिख्यो है हम यह याको। पै यह निर्दय प्रेत प्रीति के परसै जाको। बिपिन भ्रमन मैं भटकि होत सो ब्यग्र दुखारी। छुटत आपनो नगर और मीतन की यारी सो भयो रहित जगसों सकल भाँति जेहि निकट यह गयो। हरि औध कौन सो हिय मुकुर हूतो चूर जो नहिँ भयो १० बिरह खेद में अंत

भयो या में बहु जनको। छिते लै गये असह सोक हिय में अमिलन को। परिपुरन ससि कला मात्र भो गुन सो याके। याको लिखे हवाल अहै इतनो बल काके। यह जीवन सबही कर करत बिरह ताप सों अति भसत। हरिऔध प्रति पुरुख प्रान को—हा! बियोग—कहि कहि तजत ११॥ "नेति

—o—

रत्न हानि॥

१८ सितम्बर की रात्रि को ग्यारह बजे हमारे बैसवारे के कान्यकुब्ज समुदाय के एक अमूल्य रत्न कैलाश वासी होगये—इनके सद्गुणों का स्मरण करके तथा इस प्रकार अकस्मातिक वियोग देख सुन के हमी को नहीं किंतु इस प्रान्त के समस्त सज्जनों को हृदय विदारक शोक हुआ है—यह महात्मा हमारे परम प्रिय मित्र मुरादाबाद (ज़िला उनाव) निवासी श्रीमत्पण्डित फूलचन्द मिश्र (अकिंचन) के प्रातः स्मरणीय पिता श्यामलाल मिश्र थे! इनके समान सत्यवादी पुण्यात्मा दयालु सुशील स्वच्छहृदय पुरुष आज काल बिरले देखने में आते हैं—भगवान सदाशिव के चरण कमल में इन्हें इतनी दृढ़ भक्ति थी कि कुछ ही क्यों न हो उनकी सेवा में त्रुटि न करते थे—नित्य प्रातःकाल उठ के आठ बजे तक श्री पार्वती बल्लभ का गुण गान तदुपरांत गङ्गास्नान और पूरे पहर भर विधि पूर्वक पार्थिवपूजन करना उन्होंने कभी किसी अवस्था में नहीं छोड़ा और पूजा भी केवल नियम पालन मात्र न करते थे बरञ्च प्रेमानन्द में मत्त होजाते थे उस समय इनका दर्शन करने से सच मुच भगवान भूतभावन की मनोहर छवि दिखलाई देती थी इसी कारण अनेक लोग इन्हें स्वामीजी भी कहा करते थे इनका बिश्वास इतना दृढ़ था कि कभी किसी दुर्घटना से अधीर्य न होते थे बरञ्च दूसरों की घबराहट सीधी सच्ची प्यारी बातों से दूर कर देते थे पर शोक है कि अब हम लोग इनके साक्षात के सुख से निराश होगये! हा काल! अस्तु—क्या बशहै! ईश्वर इनके सम्बन्धियों को धैर्य एवं इनका सा सत्स्वभाव दान करे॥

—o—

मूल्य प्राप्त स्वीकार॥

श्रीयुत पण्डित बर कालीचरण द्विवेदी कानपुर १)

लाला छोटरमल भक्त ≡)

धनिराम सीताराम आगरा ≡)

बाबू गङ्गाप्रसाद आगरा ≡)

पण्डित प्रहलाद जी चतुर्वेदी आगरा ≡)

लालाबद्रीदास बांकेलाल आगरा ≡)

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "हनुमत्प्रेस, कालाकांकर में प्रकाशित हुआ॥
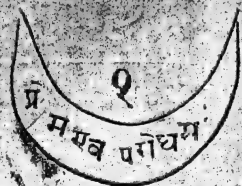
मासिक पत्र ॥

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं ॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा । न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः ॥
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त।

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 OCTOBER, 5 H. C, } No. 3,

खण्ड ६ { कानपुर १५ अक्टूबर श्री हरिश्चन्द्र सं० ५ } संख्या ३

नियमावली

१ वार्षिक मूल्य एक रुपया, एकप्रति का दाम दो आना है नमूने की कापी ≠) से कम में न भेजी जायगा ॥

२ ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उनसे १) इससे उप रान्त २) रु० लिया जायगा ॥

३ बिज्ञापन की छपाई -) प्रति पंक्ति लिया जायगा बिशेष पूछने से मालूम होगा ॥

४ बैरंग पत्र न लिया जायगा बिना मूल्य पत्र न दिया जायगा ॥

५ लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम ब्राह्मण आफिस कानपुर में भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर ॥

देखिये साहब ॥

ब्राह्मण के छठे वर्ष का यह तीसरा अंक भी निकल चुका लेकिन ग्राहकों में से अभी बहुत से महाशयों ने दक्षिणा नहीं दी इससे प्रार्थना है कि इस पत्र के पातेही शीघ्र दक्षिणा भेजकर ब्राह्मण से उऋण होजाइये ॥

ब्रजभूषणलाल गुप्त
मैनेजर ब्राह्मण

इण्डियन नेशनल कांग्रेस सन्
१८८८ की रिपोर्ट ॥

मोटे कागज पर देवनागरी भाषामें टाइप के अक्षरों में मुद्रित होरही है—इसमें डेलीगेटों की स्पीच तथा नामावली और श्री ह्यूम साहब की भूमिका—छपेगी—आशा है कि १५ नवम्बर तक छप कर तैयार होजाय वेलूपेएबल द्वारा मूल्य १।) मेरे पास दरख्वास्तें आनी चाहियें ॥

गङ्गाप्रसाद बर्मा मालिक
अखबार हिन्दुस्तानी व
एडवोकेट लखनऊ

दान पात्र ॥

तन मन धन एवं सर्वस्व दान कर देने के सच्चे और सर्वोत्तम पात्र अपने कुटुम्बी सजाती एवं स्वदेशी हैं जिस रीति से जब जो कुछ देना हो इन्हीं को देना चाहिये तिसमें भी जिससे जितना अधिक निकटस्थ और गम्भीर सम्बन्ध हो उसी को अधिक देना चाहिये जब स्त्री पुत्र माता पिता भाई बहिन चचा ताऊ फूफा मामा आदि का भली भांति भरण पोषण होने से उबरे तब अपने गोत्र वालों उनके पीछे जाति वालों उनके भी पश्चात अपने ही देश के अन्य जाति वालों को देना उचित है इसमें भी अन्धे लूले लंगड़े आदि को धर्म विद्यादि प्रचारकों को गुणियों को कारीगरों को देने से विशेष फल है पर हों अपनेही देश के 'उदारचरितानांतु बसुधैवकुटुम्बकं' के हम विरोधी नहीं हैं पर यह कभी न करना चाहिये कि 'बाहरवाले खागये घर के गावें गीत' नामधारी के लालच में निज के लोगों का हक अन्यों को देना दान नहीं है बरंच ऐसी मूर्खता है जिसका फल थोड़े ही दिनों में प्रत्यक्ष होजाता है जिन दिनों यहां अंग्रेज़ी राज्य का आरंभ और ईसाई धर्म की प्रबलता थी उन दिनों गुरु घंटालों ने प्रसिद्ध कर रक्खा था कि तीर्थ के सांड़े मुसण्डे पण्डों तथा पितृ कार्य में हट्टे कट्टे महापात्रों अथच गयावालों को एवं ब्याह बरात में कहार बाजदार आतशबाजी फुलवारी बनाने वालों तथाच भांड़ वेश्याओं को देना बृथा है। पर हमारी समझ में यदि अपने तथा कुटम्ब एवं जाति वालों से बचे तो इन्हें भी अवश्य देना चाहिये इससे अपना धन अपने ही देश में रहता है तथा देश भाइयों को अपने २ काम में उत्साह मिलता है परन्तु विद्या और कारीगरी तथा झूठी चमत्कार वस्तुओं के मोह में फस के घर का धन विदेश में फेंक देना निरी मूर्खता जतलाना तथा

दरिद्र बुलाना है यदि उन दिनों हमारे देशी भाई कपट मित्रों के माया जाल में न फँस जाते केवल राजा को कर मात्र देते अन्य बातों में अपने स्वदेशीय मनुष्यों तथा पदार्थों एवं गुण विद्या आदि की ममता न छोड़ते तो यह दशा कभी न होती जो आज कल भोगनी पड़ती है ! मुसल्मानी राज्य में अपव्यय का इतना तिरस्कार न था जितना इन दिनों है पर उस समय देश के चौथाई से अधिक निवासी भूखों न मरते थे कारण यह था कि देश का धन धूमधाम से देश ही में बना रहता था पर खेद है कि लोगों के हृदय पर इस बात का दृढ़ संस्कार न था कि पहिले धन देहु स्वदेशिन को। उबरै तब देहु बिदेशिन को हां जो लोग धन पाके अपने कर्तव्य में न लगावैं उन्हैं देना आलस्य अथच दुर्व्यसन की वृद्धि करना है पर इसमें भी इतना स्मरण रखना चाहिये कि अपना अपनाही है दूसरे देवताओं से भी अपने यहां के बुरे लोग अच्छे ! इनका देना एक दिन फलेगा पर औरों को देना निरा व्यय है। धन के अतिरिक्त विद्या दान के पात्र स्वदेशीय बालक मात्र हैं उपदेश दान सर्वसाधारण के लिये है जो किसी बात में अपने से बड़े हों वे सुश्रूषा के भाजन हैं जो कुटुम्बी अथवा सेवक की वस्तु के बिना उचित रीति से निर्वाह न कर सके हों वे उस वस्तु के दान पात्र हैं पर गऊ और कन्या के देते समय यह विचार कर लेना उचित है कि गृहीता उसे किसी प्रकार का कष्ट अथवा अनादर तो करेगा एवं उसमें उसके पालन पोषण अश्वासन की सामर्थ्य है कि नहीं ? यदि न हो तो अपनी ओर से निर्वाह के योग्य सहायता करना चाहिये नहीं तो केवल कुल देख के कभी दान पात्र न मान लेना चाहिये जो सच अर्थात अनन्य मन देश की भलाई का प्रयत्न कर रहे हों वे सर्वस्व दान के पात्र हैं पर उनके भेष में जो केवल अपना पेट पालने और मजा उड़ाने के लिये देशहितैषिता के गीत गाते हों उन्हें एवं अपने स्वार्थ के हेतु अपना यश का ढूप कसते हों वे चाहे अपने सगे बाप अथवा गुरू ही हों कुपात्र हैं ऐसों में जिन का भेद एक आध बार खुल गया हो वे चाहे बीस बातें बनावैं पर कुछ मांगें तो धक्के के सिवा कुछ न देना चाहिए हां यदि यह निश्चय हो जाय कि सचमुच महा दरिद्र है तो एक दिन के [illegible] [illegible] भोजन भर को दे देना दोषास्पद नहीं है पर उसके योग्य काम ले के

तथा अपनी दया और उसकी बनावट बता के. इसी प्रकार सेंतमेंत में अथवा धोखा खाके यथा सामर्थ्य किसी को कुछ न देना चाहिये हां जो निरा असमर्थ हो उसे इतना मात्र देना चाहिये जितने में उसकी जीवन रक्षा होजाय. यों देने से दान पात्र को ऐसी युक्ति बता देना उत्तम है जिसमें वह अपना निर्वाह आप कर सके. बस इससे अधिक दान पात्रों की व्याख्या व्यर्थ है केवल इतना और स्मरण रखिये कि जिसने अपना प्राण बचाने में सचमुच उद्योग किया हो उस के लिये यदि सारा धन काम आवे तो दे देना उचित है एवं जिसने मान सम्भ्रम (इज्जत) बचाया हो उसके लिये धन और प्राण दोनों खो देना योग्य है तथा जिसने अपने साथ सच्चा स्नेह किया हो उस पर धन प्रान और इज्जत सब वार देना महादान है! इन दिनों हिन्दुओं के लिए भारत धर्म महामण्डल और हिन्दोस्थानी मात्र के लिए नेशनेल कांग्रेस से बढ़ के दान पात्र कोई नहीं है जिन पर सारे देश का सुख सौभाग्य निर्भर है! यों सभाएं कई एक हैं पर वे यदि एक समुदाय का भला चाहती हैं तो दूसरियों के साथ स्पर्धा करती हैं बरञ्च कभी २ परस्पर द्वेष फैलाती हैं अतः उनकी सहायता केवल उन्हीं को योग्य है जो उनमें फंसे हुए हैं पर यह दोनों उपर्युक्त समाजें वर्षों से सर्व साधारण के लिए प्रयत्न कर रही हैं इस से सब का परम धर्म है कि इन के ऊपर तन मन धन निछावर करदें! जो हमारे दान विधान को मन लगा के समझेंगे. एवं दूसरों को समझावेंगे तथा ब्राह्मण के वचन वर्ताव में लावेंगे वे वह फल पावेंगे जिसका वर्णन वृथा है कुछ दिन में आप प्रत्यक्ष होजायगा।

ठगों के हथखण्डे ॥

एक हथखण्डा यह है कि कोई लम्बी चौड़े नाम की सभा स्थापन कर ली जिसका उद्देश्य लिखने मात्र के लिए देशहित अथवा मनोरञ्जन हो जिसमें नई अवस्था के अनजान देशहितैषी एवं कौतुकी (शौकीन) फंसते रहें और एक अथवा दो नियम ऐसे नियत कर लिए जिन से दूसरों को कुछ कहने सुनने का ठौर न रहे यथा—यदि पांच वा सात सभासद भी बने रहेंगे तो सभा तोड़ी न जायगी और जो सभासद सभा से निकल जायंगे उनका फिर किसी वस्तु पर अधिकार न रहैगा। तथा जो पदार्थ सभा स्थान की शोभा के लिए अथवा सभासदों के आराम के लिए कोई वा कई मेम्बर लावेंगे उस

का मूल्य एवं सभा सम्बन्धी पिछला ऋण वर्तमान सभासदों को देना होगा अथच अधिकारियों की बात में सभासदों को बोलने का तबतक अधिकार न होगा जबतक सभी सभ्य एक मत न होंगे इत्यादि--यद्यपि इस प्रकार के नियम दूषित नहीं हैं पर दुष्ट प्रकृति वाले इनमें भी अपनी चाल यों चलते हैं कि सभा का स्थान अपने तथा किसी निज सम्बन्धी के घर पर नियत कर देते हैं और चार पांच मेम्बर ऐसे बना लेते हैं जिन में विद्या योग्यता उदारतादि गुण चाहे एक न हो परहों कोई अपने ही नातेदार मित्राचार और जहांतक हो मुखियापन इन्हीं में रहे जैसे चचा प्रेसीडेण्ट है तो भतीजा सेक्रेटरी है मामा कोषाध्यक्ष है तो भानजा पुस्तकाध्यक्ष है साला प्रतिनिधि सभाध्यक्ष है तो बहनोई कार्याध्यक्ष है इत्यादि कहने सुनने को छोटे मोटे अधिकार दो एक बाहर वालों को भी दे दिए बस सभा घरमें है सब सामग्री (असबाब) अपने हाथ में है जितने लोगों से सभा कायम रह सकती है वे घर ही के हैं अब विश्वस्थ भोलेभालों के ठगने का ठान ठना, सभामें होता हवाता कुछ नहीं पर चन्दा हर महीने देते जाव बाजार से कोई वस्तु मैनेजर साहब चाहे घर के लिए भी लावें पर सभा की है अतः सभासदों को दूने चौगने दाम देने चाहिये जब कभी महीनों में अंतरंग अधिवेशन (प्राइवेट मीटिंग) होगा तो बरसों के ऋण का भी कुछ २ भाग सभासदों के माथे मढ़ा जायगा क्योंकि जो सभासद निकल गये हैं वे बेईमान थे इस से वर्तमान ही सभासदों का आसरा है बस इस रीति से कुछ दिन सभ्य बने रहो चन्दा इत्यादि सब देते रहो सामान बनवाने के लिये रुपया दे देकर सभा मन्दिर के स्वामी का घर भरते रहो यदि बरस दो बरस में कोई बहिरंग कार्य हो तब उत्साह दिखलाने को और भी अधिक देना पर अन्त में इस का नतीजा यह होना है कि एक न एक दिन कोई न कोई झगड़ा खड़ा करके आज मैं कल तुम परसों अन्य सभा से निकाल दिया जायगा अथवा आपही घर बैठ रहेगा और असबाब सभा के अध्यक्ष सेक्रेटरी अथवा मेनेजर के बाप का हो जायगा इस रीति से बहुतेरे बहुतों को ठगा करते हैं हमारे पाठकों को चाहिये कि इस प्रकार की चाल बाजियों से सावधान रहें और यदि एक आध बार ठग गये हों तो अपने मित्रों तथा

सर्व साधारण को उक्त ठगों के नाम ग्राम काम की सूचना दे दिया करें जिसमें दूसरे लोग धोखा न खायें इस प्रकार के वंचक बहुधा कुछ पढ़े लिखे शिष्टों के भेष में हुवा करते हैं अत: ऐसे की करतूत बहुधा दो एक बेर ठगाए बिना नहीं जान पड़ती पर तौभी जहां उपर्युक्त चाल ढाल की सभा हो वहां कभी २ ऐसा भी रङ्ग होता है एवं वहां के उन आने जाने वालों से कुछ २ भेद मिल सकता है जो कभी सभासद थे पर अब नहीं हैं अथवा हैं भी तो अफसरों के सम्बन्धी वा गहिरे मित्र नहीं हैं !!

फिर कभी

धर्म और मत ॥

धर्म वास्तव में परमानन्द मय परमात्मा एवं उनके भक्तों से प्रेम तथा संसार में क्षेम स्थापन का नेम मात्र है जितने महात्मा होगए हैं सब का यही सिद्धान्त रहा है इसीके अंतर्गत वेद शास्त्र पुराण बाइबिल अथवा कुरआन आदि किसी धर्म ग्रन्थ अथच किसी आचार्य की सत्यता पर विश्वास रखना यथासाध्य उन कामों से बचे रहना जिन्हें बुद्धिमानों ने बुरा ठहराया है पक्षपात को दूर रख के जिस से पूछियेगा यही उत्तर पाइएगा कि वास्तव में धर्म यही है और हम निश्चय पूर्वक कहते हैं कि यदि इस सर्व सम्मत धर्म पर सब मतों के मानने वाले चलते होते तो कभी किसी देश में कुछ भी विघ्न न होता पर जिन्हें लड़ना होता है वे अच्छी बातों में भी एक न एक बुराई निकाल लेते हैं जब जहां कोई अनर्थ होने वाला होता है तब वहां उपर्युक्त धर्म के स्थान पर मत का आदर होता है प्रत्येक समूह को यही सूझता है कि केवल हमारे यहां की पोथी और मत प्रवर्तक एवं आन्तरिक वाह्यिक व्यवहार अच्छे हैं सारे संसार के बुरे ! अन्त:करण चाहे अन्यों की किसी बात में कोई उत्तमता भी समझे पर कोई न कोई युक्ति ऐसी निकालना चाहिए जिस में दूसरे के मुख से बात न निकले और जगत् भर के लोग हमारे ही चेले होजायँ, कोई आग्रह के मारे माने वा न माने पर हम दृढ़ता सहित कह सकते हैं कि मत का लक्षण एवं मत वालों का हार्दिक मनोर्थ इतना ही मात्र है जिसका फल यह होता है कि जिन महात्माओं ने जन्म भर सबको सदुपदेश दिया है वे गालीं पाते हैं जिन ग्रंथों ने देश के देश पवित्र एवं उन्नत किये हैं वे कलुषित ठहराए जाते हैं

और भाई २ पड़ोसी २ में सदा जूता उछला करता है। बश होता है तो तलवार चला करती है नहीं वाक्य बाण तो चला ही करते हैं किसी का किसी से मन नहीं मिलता इसी से सब समुदायों की सारी बातें वस्तुत: सत्यानाश होती रहती है। पाठक महाशय कृपा करके यह तौबत लाइये कि इन दोनों बातों में ग्रहण करने योग्य किसे समझते हैं? जो धर्म की रुचि हो तो इस बात की गांठ बांधो कि अपने विश्वास को आंखें मूंदे मानते रहो दूसरों के सिद्धांतों से प्रयोजन न रक्खो कोई इस विषय में झगड़ने आय तो हार मान लो! और जो मत प्यारा हो तो मरखहा बैल की नाईं बझते फिरो औ जीवन को ऐसा व्यर्थ बनालो जैसा अनंता (बाहु भूषण) का सुवर्ण होता है मत की बदौलत न तुड़ाने के काम का न गलाने के॥

श्रीयुत बाबू राधाकृष्ण दास की स्फुट कविता॥

दोहा॥

जयति नवल श्री राधिका प्रेम मूर्ति गुन धाम। नेह डोर में बँधि रहे जाके श्री घनश्याम॥१॥ चख चकोर प्रमुदित कियो चन्द्रानन दरसाय। केहि हित आदर सो लियो घुंघट ओट दुराय॥२॥ चख चकोर मुख चंद्रमा दामिनि दसन लखाय। कच घन बूंदें स्वेदकन अङ्ग २ सुन्दर भाय॥३॥ अधरन रस राचो मिसो अतिसय सोभा देत। मनु पिय को रङ्ग श्याम लगि मुख चुंबन करि हेत॥४॥ इती रुखाई कौन हित अहो मीत सुख दैन। हम निसिदिन तरसत रहैं दरसन बिन नहि चैन॥५॥ सुन्दरता अरु मधुरई सबही विधिना कीन। इक दयालुता लेश नहि तुम को प्यारे दीन॥६॥ नव कुमारता नव वयसनवल २ अनुराग। सबही बानक अति बन्यो पूरन करन २ सुहाग॥७॥ यह सुन्दरता मधुरता यह नव हास विलास। काह करेगी आजु यह नव तरुन विकास॥८॥ भक्तबछल करुणायतन निज जन पूरन काम। रसिक शिरोमणि प्रेम निधि जय जय श्री घनश्याम॥९॥ दुखित देखि निज जन द्रवत तुरतहि कृपा निकेत॥ दया ऐन घनश्याम तोहि भाखत याही हेत॥१०॥

बरवा॥

अहो मीत पियारे परम सुजान। मेरी हू सुधि लीजै तलफत प्रान॥१॥ तुमतो रसिक सिरोमनि सब गुनखान। हिरदय निरदय हम हित केहि हित ठान॥२॥ प्रीतम प्यारे मितवा तुम

बिनु छाय। इक छिन रहत न धिरवा जिय लहराय ॥ ३ ॥ सबै अंग अति सब कोमल दया निधान। मोहित हृदय कठोरवा काहे ठान ॥ ४ ॥ आबरात बिनु देखे जिय अकुलाय। सीतल करिए छतिया पीतम धाय ५॥

कुण्डलिया ॥

जय महरानो राधिका जै बृजपति घन श्याम। जय सुन्दर बृन्दा विपिनि प्रेम रूप बृज बाम ॥ प्रेम रूप बृज बाम प्रेम सों सींचे तरु गन। जय बृज बासी लोग प्रेम राते जिनके मन॥ जय पशु पंछी सबै पियत अमृत तोजिके भय। जय पवित्र बृज भूमि सबै बृज मंडल जय जय ॥१॥ घूंघट करि बैठी तिया ससु ननद के पास। रूप सुधा पिय को पियति तऊ न बुझति पियास ॥ तऊ न बुझति पियास एकटक पिय मुख देखैं। धीरज जिय नहिं धरत लाज जग की नहिं लेखैं ॥ नेकहु नाहिं अघात देखि सुन्दर नागर नट ॥ रहि न सकी छिनु दास उघरि गयो तुरतहि घूंघट ॥२॥ किती न गोकुल कुल बधू काहि न केहि सिख दीन। कौने तजी न कुल गली ह्वै मुरली सुर लीन ॥ ह्वै मुरली सुरलीन मानजल हीनभई ज्यों प्रेम बारुनी छकीं देह सुधि भूलि गईं त्यों ॥ दास आस तजि सह्यो हास उपहास छाड़ि कुल। मो… गोहनलगी फिरीं तिय कितीन गोकु… ह्वै मुरली सुर लीन धाइ बन बीथि… भटकीं। छाड़ि बेद की रीति लो… मरजादहि पटकीं ॥ तजि गुरुज… की चास दास उपहास और कुल… लपटीं श्याम तमाल जाइ तिय कि… तीन गोकुल॥ ह्वै मुरली सुरलीन खिचि… गईं आपु बिवसह्वै। चुंबकसी अका… षित भईं मनु सुधि बुधि सब खै ॥ … नहिं रुकी कहुं उमगि चली मनु तोरि दुहूं कुल। नागर सागर जाइ… मिलीं तिय कितीन गोकुल ॥ फिर कभी…

जीव को दश अवस्था

उन्हीं को लिखे हुई ॥

शिशु—रहे कहांआगे कहां कौन माय को बाप। शिशुता मैं जानत न कछु कौन अहैं हम आप ॥ १

बालक।

खेलहि सो रति रात दिन जानत नहिं कुछ आन। धनि धनि लरिकाई, नहीं सुख जग जासु समान ॥

रात दिना खेलहि सों प्रीति। जानत नहिं जग की कछु रीति ॥

दोष रहित आनन्द निधान सुख नाहिन लरिकाई समान ॥२

पोगण्ड ॥

कछु विद्या हूं मे रुचि भई कछुक खेल हूं सों रति ठई। कछु २

मानि चल्यो संसार। हानि लाभ अप मान बिचार॥ कोट बूट पतलून कसि छाता चसमा लाय। पढ़िवे मिस सों जात हैं कालिज भेस बनाय॥

कैशोर॥

जोबन मद धरनी सुघर सब ही कला प्रबीन। सुखिया या संसार में कोउ मो सम नाहीन॥

युवा॥

अहंकार अरु दम्भ में रहत मत्त दिन रात। मनहु अमर घरिया पिए जग सिरपै धरि लात॥

प्रौढ़॥

पट भूषण बहु पहिरि कै जिय प्रसन्न जिन होउ। छय ह्वै है सब, यत्न करु बृथा काल मत खोउ॥

निज शरीर पालत रहत निसि दिन व्यस्त महान। दुरगन्धित मल मूत मय यह नहिं तो को ज्ञान॥

बृद्ध॥

धनमद में बौराइ कै भूलि रह्यो निध सार। सिर पर आय काल को कबहुं न करत बिचार॥

अतिबृद्ध॥

बौरायो डोलत फिरत हमरो हमरो बोलि। कहा तिहारो देखु किन आंख हिए की खोलि॥

जरा॥

अरे मूढ़ चीन्हत हमें देख्यो कबहु कि नाहिं। महाकाल यह नाम मम बिदित सकल जग माहिं॥ भांति भांति के रूपधरि तृभुवन करत बिहार। कहुं नारीकहु पुरुष बनि जग को करत सँहार॥

मृत्यु॥

महाकाल ने ग्रसि लियो चली न कछु उपाय। समभत अपने जिन्हैं ते आये फकि सहाय॥ जाहि लेइ कूदत रहे छिन में गयो बिलाय। राख होइ नभ में मिल्यो चिन्हहु रह्यो न हाय॥

शिशु बालक पोगण्ड कैशौरऽरु युवा स्वरूप। प्रौढ़ बृद्ध अति बृद्ध पुनि जरा मृत्यु दसरूप। दशौं अवस्था भोगि नर मरन समय पछिताय। हरि सेवै सुखसों जिए मरे सुखी हो जाय॥

चार॥

प्रो० पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय निजामाबाद वासी लिखित॥

प्रिय विचार शील एवं बिवेचक महाशय! (चार) शब्द से आशा है कि आप भलीभांति परिचय रखते होंगे और समाचार दुराचार अत्याचार अनाचार सदाचार शिष्टाचार आचार उपचार प्रचार बिचार उचार अँचार इत्यादि पदों के अन्त में इस को पाकर बिस्वास है आपने इस

का अर्थ भी अवश्य बिचारा होगा एवं यदि किसी समय शंका के वशीभूत होकर किसी पण्डित जी से पूछा होगा कि विद्वन् ! चार शब्द के क्या अर्थ हैं ? तो अवश्य पण्डित जी ने कहा होगा कि चार का अर्थ दूत है और यदि किसी गणितज्ञ से काम पड़ा होगा तो उसने कहा होगा कि चार एक संख्या का नाम है। आप मेरे इस लेख में पण्डित जी के अर्थ को छोड़कर गणितज्ञ कृत अर्थ को स्मरण रखियेगा क्योंकि इस समय उसी की आवश्यकता है इस के अतिरिक्त आप जानतेही हैं कि इस एकोनबिंशति शताब्दी में पण्डितजी कृत अर्थों का कितना सन्मान होता है यदि पण्डित जी कहें कि अमुक शब्द का अर्थ आम है तो हम इस को अवश्यही कहेंगे और यदि ऐसा कृपा करके न कहेंगे तो इस बात का उद्योग तो अवश्य करेंगे कि पण्डित जी कृत अर्थों को अपने लेख इत्यादि में व्यवहृत न करें बिस्वास न हो तो जिस पुस्तक अथवा समाचार पत्र में किसी आर्य्य समाजी महाशय और किसी पण्डित जी से शास्त्रार्थ का पूरा बयान हो उसको पढ़िये देखिये क्या बात प्रगट होती है। समयानुकूल हमभी पण्डित जी कृत अर्थको छोड़ कर गणितज्ञ महाशय कृत अर्थ को अपने काम में लाते हैं और उस का चमत्कार आप को दिखलाते हैं इसी कारण आप से उस के स्मरण रखने की प्रार्थना करते हैं॥

आहा ! यह संख्या बाची चार शब्द भी कैसा अनोखा है ! कि इस को जहां अनुवेषण कीजिये वहीं देखने में आता है। देखिये ! हमारे परमाराध्य भगवान बिष्णु की प्रलम्ब भुजायें चार हैं उनके धृत अस्त्र भी शंख चक्र गदा पद्म चार हैं ब्रह्मावतार श्रीराम श्री भरत श्री लक्ष्मण श्री शत्रुघ्न यद्वा श्रीकृष्ण श्री बलराम श्री प्रद्युम्न श्री अनिरुद्ध चार हैं। भक्त भी आर्त जिज्ञासु अर्थार्थी बिज्ञान निवास चार हैं। मुक्तियां भी सायुज्य सामीप्य सालोक्य सारूप चार हैं। अवस्थायें भी जाग्रत स्वप्न सुषुप्त तुरीय चार हैं। इनके बिभुभी क्रमशः बिश्व तैजस प्राज्ञ ब्रह्म चार हैं। पदार्थ अर्थ धर्म काम मोक्ष चार हैं। सम्प्रदाय शैव शाक्त वैष्णव बेदान्त चार हैं। लोकस्टजक एवं कबिकुल के बियोगी नायक नायकाओं के परम शत्रु भगवान बिधाता के मुख चार हैं इन के परम प्रिय पंच वर्षीय सुवन सनक सनन्दन सनातन सनतकुमार चार हैं। यदि काल से ही युग सत्ययुग त्रेता

द्वापर कलियुग चार हैं। आर्यों के परम पवित्र वेद भी ऋग यजु साम अथर्व चार हैं इन के उपवेद भी गान्धर्व वेद आयुर्वेद धनुर्वेद वास्तु वेद चार हैं वर्ण ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र चार हैं इन के उत्पन्न होने के स्थान भी मुख भुजा ऊरू चरण चार हैं। आश्रम ब्रह्मचर्य गृहस्थ बाण प्रस्थ संन्यास चार हैं। धर्मनिष्ठजन प्रिय धर्म के चरण सत्य शौच दया दान चार हैं यद्यपि ईशान वायव्य नैऋत्य अग्नि अध ऊर्द्ध मिलाकर दिशा दश कही जाती हैं परंतु मुख्य उत्तर दक्षिण पूर्व पश्चिम चार हैं भग वान भूतनाथ के धारण कृत उप करों में मुख्य जाह्नवी मयंक व्याल विष चार हैं। समस्त संसार के कारण आकर भी पिंडज अण्डज स्वेदज उद्भिज्ज चार हैं। बिश्वगत समग्र पशु समूह के समीप २ चरण भी चार हैं वृक्षों के मुख्य अङ्ग फल फूल पत्र शाखा चार हैं। गगन मण्डल प्रकाशक तारे भी ग्रह उपग्रह स्थिर पुच्छल चार हैं राजा के गुण भी साम दाम दण्ड बिभेद चार हैं॥ सेना के प्रकार भी अश्व गज रथ पदाति चार हैं योगिजन अकृत्रिम युवतियां भी पद्मिनी शंखिनी चित्रिनी हस्तिनी चार हैं। पुरुष जाति के भेद भी शशा कुरङ्ग अश्वहस्ति चार हैं शृङ्गार रस के अङ्ग भी उद्दीपन आलम्बन विभाव अनुभाव चार हैं। पूर्णोप मालंकार के पूर्ण कर्त्ता भी उपमान उपमेय बाचक धर्म चार हैं। नायिका प्राणाधार नायक भी अनुकूल दक्षिणशठ धृष्ट चार हैं। भाषा के छन्दों में अव सर पर पढ़ने योग्य और परम चित्ता कर्षक छन्द घनाक्षरी सवैया दोहा बरवा चार हैं। हमारे दुर्भिक्ष दलित भारत में राज्य भी बृटिश रक्षित अन्य देशीय स्वाधीन चार हैं। संसार में परम प्रसिद्ध मत भी बैदिक बौद्ध ईसवी इसलाम चार हैं। सम्प्रति भूमण्डल में सर्वोच्च सम्राट भी रूस इङ्गलैण्ड जर्म्मन चीन चार हैं। यवनों के पवित्र ग्रंथ भी तौरेत ज़बूर इंजील कुरआन चार हैं। उनके परमाचार्य महात्मा मुहम्मद के यार भी अली उसमान अबूबकर उमर चार हैं। मुसल्मानों के सिद्धांतानुसार तत्व भी ख़ाक (पृथ्वी) बाद (वायु) आब (जल) आतश (अग्नि) चार हैं। मुग़ल बंशीय भारतशासन कर्त्ताओं में सर्वोच्चशासनकर्त्ता भी अकबर जहांगीर शाहजहां औरंगजेब चार हैं। परम नीति बिशारद नृपाल अकबर के पौत्र भूपाल शाहजहां के पुत्र भी दाराशिकोह शुजा औरङ्गजेब

मुराद चार हैं। महाराज अकबर के मंत्रि प्रवर भी बीरबल अबुलफ़ज़ल बैरम ख़ुसरो चार हैं। आप के सुसज्जित पर्यंक के पाये भी चार हैं। सम्प्रति भाषा समाचार पत्रों में प्रायः लिखे जाने वाले सम्बत भी ईसवी बिक्रमीय हरिश्चंद्राब्द दयानन्दाब्द चार हैं। प्रिय पाठक! इस चार के समाचार को उच्चार कर मैं शिष्टाचार पूर्बक आप से प्रार्थी होता हूं कि इस बिषय में आप भी कुछ बिचार करें किंतु किसी प्रकार का अत्याचार नहीं। एवं भगवान के यश का उच्चार—नागरी का संचार—लाचार देश भाइयों का यथा शक्ति उपचार और प्रेम शास्त्र का प्रचार भी न भूलियेगा॥

—

मूल्य प्राप्ति॥

श्रीयुत पण्डित रामनारायण तिवारी गोरखपुर १)

बाबू गोबिन्दप्रसाद खत्री कानपूर १)

डाक्टर बिहारी सिंह बिठूर १)

लाला देवीप्रसाद डफालीमुहाल कानपूर १)

पण्डित देवीप्रसादजी अ० मैजिस्ट्रेट फर्रुखाबाद १)

बाबू भोलानाथ डिप्टी इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स कानपूर १)

मुंशी रामनारायण सब डिप्टी इंस्पेक्टर आफ स्कूल्स कानपूर १)

सारंगपाणि मुदलियार मैनेजर बलरामदास का पाखाना राजनांद गांव ६)

बाबू काशीनाथ खत्री सिरसा १)

दुर्गाप्रसाद मुदर्रिस कुड़वा १)

बाबू मन्नूलाल अग्रवाल कानपूर १)

बाबू शंकरलाल भट्ट टीचर कानपूर १)

बाबू बृजमोहनलाल इलाहाबाद १)

पं० अम्बिकाप्रसाद मुदर्रिस पुखरायां १)

मुंशी श्रीगोबिन्द सब ओवरसियर सुलतानपूर १)

चौधरी महंत रघुनाथ दास जयंतपुर(मुजफ्फरपुर) १)

बाबू गोपालचंद्र बनर्जी कानपूर १)

—

श्री पण्डित प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "हनुमत्प्रेस कालाकांकर में प्रकाशित हुआ॥

अघोरपिशुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि ॥

ब्राह्मण

मासिक पत्र

———:0:———

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु । लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा । न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त ।

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 SEPTEMBER, 5 H. C. } No. 2,
खण्ड ६ { कानपुर १५ सितम्बर श्री हरिश्चन्द्र सं० ५८ } संख्या २

नियमावली

१ वार्षिक मूल्य एक रुपया, एक प्रति का दाम दो आना है नमूने की कापी भी ॥) से कम में न भेजी जायगी ॥

२ ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) इसके उपरान्त २) रु० लिया जायगा ॥

३ विज्ञापन की छपाई ।) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालुम होगा ॥

४ बैरंग पत्र न लिया जायगा बिना मूल्य पत्र न दिया जायगा ॥

५ लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम ब्राह्मण आफिस कानपुर में भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

ब्रजभूषणलाल गुप्त
मेनेजर "ब्राह्मण"
कानपुर

॥ भलमंसी ॥

यदि भलमंसी यही है कि नाना भांति के क्लेश और हानि सहना पर पुरानी लकीर के बाहर एक अंगुल भी बाहर न होना, बिरादरी में दो दिन की वाह २ के लिए ऋण काढ़ के से-

कड़ों की आतशबाजी छिन भर में फूंक के सन्तान के माथे कर्ज मढ़ जाना केवल नाई और पुरोहित की प्रसन्नता के लिए साठ बरस और आठ बरस के बर कन्या की जोड़ी मिलाना तथा दोनों का जन्म नशाना, पांच बरस की बिधवा का यौवन काल में व्यभिचार एवं भ्रूण हत्या टुकुर २ देखते रहना बरंच छिपाने का यत्न करना पर विधवा बिवाह का नाम लेने वालों से मुंह बिचकाना, भूखों मर जाना पर अपना पराया धन लगा के छोटा मोटा धंधा तथा दश पांच की नौकरी न करना लड़कियों को जवान बिठला रखना उन का मनो बेदना जनित शाप सहना पर बराबर वाले अथवा कुछ अठारह बीस बिशुध वंशज के साथ बिवाह न करना दहेज की दुष्ट प्रथा के मारे नई पौध की उन्नति मट्टी में मिलाना बन्धु बांधव होटलों में खाया करें बिधर्मिनी स्त्रियों के मुंह में मुंह मिलाया करें अथवा कोटि २ कुकर्म कर २ जेल में जाया करें कुछ चिन्ता नहीं पर विद्या पढ़ने और गुण सीखने के लिए विलायत हो आवे तो उन्हें जाति में न मिलाना ! क्यों ? रीति नहीं है ? ऐसा करने से नाम धरा जायगा ! पुरखों की नाक कटैगी ! भलमंसी में बट्टा लगेगा न जाने कोई रीत पहिले पहिल किसी के चलाए बिना आप से आप चल गई थी ! या आप का अभी तक नाम ही नहीं धरा गया ! अथवा ऊपर कहे हुए कामों के अंत में नाम धराही न जायगा ! वा पुरखों की नाक ऐसी मोम की नाक अथच ककड़ी खीरा की बतिया है ! या भलमंसी कोई ऐसा बड़ा परमेश्वर से भी चार हाथ ऊंचा देवता है जिस के डर से पाप को पुण्य हानि को लाभ दुःख को सुख कह रहे हो ! एक कल्पित शब्द के पीछे बुद्धि की आंखों में पट्टी बांधना अपने हाथों पांव में कुल्हाड़ी मारना देख सुन के सोच समझ के जान बूझ के अनर्थ करना और दुःख पर दुःख सहते रहना ही यदि भलमंसी है तो ऐसी भलमंसी को दूरही से नमस्कार है पास आवे तो जूती है पैजार है उस पर और उसके गुलामों पर धिक्कार है ! हमें तथा हमारे मित्रों को परमेश्वर भलमंसी से दूर रक्खे ! मनुष्य को चाहिए अपना भला बुरा विचार के देश काल की दशा देख के अपना तथा अपने कुटुम्ब जाति देश का जैसे

बने वैसे हित साधन करे ! लोक परलोक की लज्जा, चिन्ता, भय को लात मार के उलटा सीधा छोटा मोटा जैसा आ पड़े वैसा काम करके अपना और अपने लोगों का धन, बल, विद्या वैभव इत्यादि बढ़ाते रहना ही मनुष्य का परम कर्तव्य मुख्य धर्म और सच्ची भलमंसी है इतिहास हमें सिखलाता है कि जिन लोगों ने अपनी दशा को उन्नत किया है उन्हों ने ऐसा ही किया है कविवर राजर्षि भर्तृहरि जी भी ऐसी ही आज्ञा करते हैं 'क्वचिद्भूमौ शय्या क्वचि दपि च पर्य्यंक शयनं, क्वचिच्छाकाहारी क्वचिदपि च शाल्योदन रुचिः। क्वचित् कंथाधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बर धरी मनस्वी कार्य्यार्थी न गणयति दुःखं नच सुखं' नीति विदांम्वर चाणक्य जी भी यही कहते हैं 'अपमानम्पुरस्कृत्य मानंकृत्वातुपृष्टतः। स्वकार्य्यं साधयेद्धीमान कार्य्य भ्रंशोहि मूर्खता' बस वास्तविक भलमंसी यही है वरंच ऐसे ही बर्ताव से भलमंसी उत्पन्न होती है इसके अतिरिक्त सब भले मानस सदा दिन २ दूनी दीनता के दास होते हैं और यार लोग चपत मार के टोपी उतार के उनकी भलमंसी झाड़ते रहे हैं जो आज भले मानसों के देवता पितर ऋषि मुनि पीर पैगम्बर मान्य पूज्य कहलाते हैं वे यदि अपने समय में आज कल की भांति भलमंसी निभाते तो कभी यह गौरव न पाते इससे हमारे पाठकों को उचित है कि भलमंसी की ममता छोड़ें शेष चिल्ली के विचार समझ के उससे मुंह मोड़ें और येन केन प्रकारेण स्वार्थ साधन का आराधन करें यही भलमंसी है इसी में भलमंसी है भलमंसी चाहो तो स्मरण रक्खो कि भलमंसी वलमंसी कुछ नहीं है अपने काम से काम रखना ही भलमंसी है।

॥ स्वार्थ ॥

इस गुण को हमारे पुराने ऋषियों ने बुरा कहा है पर हमारी समझ में इस विषय में उनका कहना अप्रमाण है क्योंकि जो जिस बात को जानता ही नहीं उसके वचनों का क्या प्रमाण बन में रहे कन्द मूल खाए भोजपत्र पहिने पोथियां उलटाते व राम राम श्याम २ करते जन्म बिताया न कभी कोई धन्धा किया न किसी की नौकरी की न किसी विदेशी से काम पड़ा फिर उन्हें स्वार्थ का नशा क्या मालूम था? यदि कहिए कि नवीन ऋषियों में महाराजा भर्तृहरि ने भी तो 'तेसी

मानुष राक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये' लिखा है तो हम कहेंगे उन्हों ने केवल पुराने लोगों की हां में हां मिलाई है या जान बूझ के धोखा दिया है नहीं तो स्वार्थ कोई बुरी वस्तु नहीं है सदा से सब उसी का सेवन करते आए हैं हिन्दुओं का राज्य था तब ब्राह्मण चाहे जो करें अदंड्य थे क्योंकि राज मन्त्री तथा कवि यही होते थे इससे अपने को सब प्रकार स्वतन्त्र बना रक्खा था यह स्वार्थ न था तो क्या था? मुसलमानी अमलदारी में भी राजा करै सो न्याव था बादशाह का जुल्म भी ऐन इन्साफ समझा जाता था उसमें भी स्वार्थ ही का डंका बजता था आज कल अंगरेजी राज्य में तो ऐसा कोई काम ही नहीं है जो स्वार्थ से खाली हो नहीं तो दो चार बातें बतलाइए जो केवल प्रजा ही के हितार्थ की गई हों! कोई काम बतलाइए जिसमें हिन्दोस्तान की महान हानि के लिए इंग्लिश जाति का छोटा सा लाभ भी उठा रक्खा गया हो! चाहे जितना सोचिए अंत में यही कहिएगा कोई नहीं फिर हम क्या बुरा करते हैं कि 'स्वार्थ में बुराई कोई नहीं सभी सदा से करते आए हैं' यदि महिदेवों (ब्राह्मणों) औ दीन दुनियां के मालकों (बादशाहों) तथा हमारे गौरांग प्रभुओं को मनुष्य समझिए तो रामायण में देवताओं का चरित्र पढ़िए! रामचन्द्र लक्ष्मण सीता को चौदह वर्ष बन २ फिराया! भरत जी को अयोध्या में रख के उपवास कराया! दशरथ जी के प्राण ही लिए क्यों? स्वार्थ के अनुरोध से! गोस्वामी जी ने खोल के कहा दिया है 'आए देव सदा स्वारथी' जब देवताओं को यह दशा है तब मनुष्य स्वार्थ परता से कैसे पृथक रह सकता है सच पूछो तो जो लोग स्वार्थ की निन्दा करते हैं वे स्वार्थ ही साधन के लिए दूसरों को भकुआ बनाते हैं! दूसरों को दया, धर्म, सत्य, न्याय निःस्वार्थ इत्यादि के भ्रम जाल में न फंसावें तो अवसर पर अपनी टट्टी कैसे जमावें! इससे हमें निश्चय होगया है कि चतुर बुद्धिमान नीतिज्ञ पुरुषों के लिए स्वार्थ कभी किसी दशा में अग्राह्य नहीं है! जो लोग दूसरों को परस्वारथ सिखाते हैं वे तो हेर अपना काम चलाने के लिए लोगों को फुसलाते हैं पर जो उनकी बातों में फंस कर परस्वार्थी बनने का उद्योग करते हैं वे नेचर के

नियम को तोड़ते हैं अथच अपने सुख सम्पत्ति सौभाग्य से मुंह मोड़ते हैं! नहीं तो बड़े बड़ों में निस्वार्थी है कौन? क्या देवता लोग राक्षसों का भला चाहते हैं? क्या महात्मा लोग नास्तिकों की खैर मनाते हैं? क्या स्वयं परमेश्वर अप्रेमिकों से प्रसन्न रहैं? फिर परस्वारथ कहां की बलाय है! सब स्वार्थ तत्पर हैं! हां अपने, अपने कुटुम्ब अपनी जाति अपने देश की जूठन काठन थोड़ी सी इतरों को भी दे देना चाहिए जिस में यश हो पर स्वार्थ ऐसी मजेदार चीज को बुरा समझ के उससे दूर रहना निरी मूर्खता है। जो लोग बड़े त्यागी बैरागी भक्त विरक्त होते हैं वे तो स्वार्थ को छोड़ते ही नहीं। वे दुनिया के सुखों को छोड़ के महा सुख स्वरूप सच्चिदानन्द को चाहते हैं अतः बड़े भारी स्वार्थ साधक हैं फिर गृहस्थी बन के दुनिया में रह के निःस्वार्थ या परस्वार्थ पर मरना कहां की बेअक्लि है। स्वार्थ न हो तो संसार की स्थिति ही न हो बड़े २ परिश्रम कर के जिन उत्तम बातों को लोग संचित करें वुह दूसरे को सौंप दें दूसरा तीसरे को सौंप दे इसी तरह होते २ थोड़े दिन में किसी के पास कुछ रही न जाय इसी से कहते हैं 'स्वार्थं समुद्धरेत्प्राज्ञः' हां बहुत ही न्यून स्वार्थ बुरा है 'आप जियन्ते जग जिये कुरमा मरे न हानि' का आचरण निन्दित है इससे अधिक से अधिक स्वार्थ बढ़ाते रहना चाहिए अपने ही लिए स्वार्थी न हो के अपने सम्बन्धी मात्र का स्वार्थ करना चाहिए अपने देश के स्वार्थ के लिए दुनिया भर को कैसी ही हानि हो कैसाही कर्तव्याकर्तव्य हो कर उठाना चाहिए क्योंकि इसके बिना निर्वाह नहीं है परस्वार्थी मरने पर चाहे वैकुंठ जाते हों पर दुनिया में सदा दुखी ही रहते हैं और हमारे महा मंत्र के मानने वाले दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति किया करते हैं भारत और इंग्लैंड इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं फिर भी न जाने कब हमारे देशी भाई स्वार्थ की महिमा न जानेंगे हम प्रतिज्ञा पूर्वक कहते हैं जो कोई स्वार्थ साधन के लिए निन्दा स्तुति पाप पुण्यादि का विचार न करेगा वुह थोड़े ही दिन में सब प्रकार सम्पन्न हो जायगा और अंत में किसी को उसकी निन्दा करने का साहस न होगा महात्मा कह गए हैं 'समरथ

को नहिं दोष गुसांई'' स्वार्थ साधन में दक्ष होने से बेईमान मनुष्य चतुर कहलाता है हत्यारा वीर कहलाता है पर निन्दक स्पष्ट वक्ता कहलाता है जिस पर परमात्मा की दया होती है वही स्वार्थ साधन तत्पर होता है इससे हे भाइयो ब्राह्मण के वाक्य को वेद की रिचा समझ के दिन रात सोते जागते स्वार्थ २ रटा करो इसी में भला होगा होगा नहीं सदा योंही अवनति होती रहेगी जैसी महाभारत के समय से होती आई है ॥

॥ देयवस्तु ॥

संसार में जितने पदार्थ देखे सुने और समझे जाते हैं सब परमात्मा ने मनुष्य को दान किए हैं और मनुष्य को सामर्थ्य है कि जितनी वस्तु अपने अधिकार में रखता है दूसरों को दान कर दे, सच्ची उदारता भी यही है कि अपना तन, मन, धन दूसरों को देता रहे यदि विचार के देखिए तो वास्तव में जगत का एवं तदन्तःपाती समस्त सामग्री का स्वामी सच्चिदानन्द है सब को सब कुछ दिया भी उसी ने है अतः मनुष्य को देने में आगा पीछा करना व्यर्थ है भाई जो तुम्हारी निज की वस्तु हो वुह न दो पर यह तो बताओ कि तुम्हारा है क्या ? शरीर पंच तत्व का है रुपया पैसा खानिज पदार्थ का है वस्त्र रुई ऊर्णादि के हैं मूल में सब कुछ परमेश्वर का है फिर देने में हिचिर मिचिर क्या 'पूंजी पूरे साह की जस कोऊ करि लेय' लड़का पैदा होता है तो कटिसूत्र तक नहीं पहिने होता पास कौड़ी भी नहीं होती मनुष्य मरता है तब भी वैसे ही पृथिवी जल अथवा अग्नि के मुंह में चला जाता है हाड़े की कौड़ी साथ ले जाता है न ताम्बे का पैसा, हां जब तक यहां रहता हैं तब तक थोड़े बहुत पदार्थों का भोग कर लेता है इससे यह तो प्रत्यक्ष है कि 'आदि संग आई नहीं अंत संग नहिं जाय। बीच मिली बीचै गई तुलसी झखै बलाय' हम चाहे कोटि उपाय करें पर ऐसा कभी किसी ने न सुना होगा कि जितना जो कुछ हम चाहते हैं उतना प्राप्त हो जाता हो कौन नहीं चाहता कि जगत भर की सम्पति सुख सुजस मुझे मिल जाय ? कौन नहीं चाहता कि मेरे बराबर किसी बात में कहीं कोई न देख पड़े ? पर ऐसा त्रिकाल में संभव नहीं है यदि सभी लोग संसार भरे के

स्वामी हो जाते तो सेवा करने वाले (जिन से स्वामित्व की शोभा है) कहां से आते? इससे यह प्रत्यक्ष है कि कहीं कोई एक महा सामर्थ्यवान शक्ति अथवा व्यक्ति है ईश्वर भाग्य इत्तिफाक़ चाहे जो मान लीजिए उसी की इच्छा वा उसी के द्वारा हमें जितना हमारे मिलने के योग्य है मिलता है, फिर क्या? जब हम स्वयं दूसरे का दिया पाते हैं तो देने में छिचिर मिचिर क्यों? जब कि दूसरे की वस्तु दूसरे को देना है तो सोचही विचार क्या? आखिर एक दिन हमारे हाथ से जाती रहेगी फिर क्यों न अभी से उस का मोह छोड़ के सेंत मेंत में कीर्ति लाभ करलें क्यों न सारे संसार एवं जगत कर्तार के मुख से 'भीख में से भीख दे। तीनों लोक जीत ले' कहलाने का उद्योग करें? स्मरण रखिए जो कुछ आप के पास है वुह यदि अपने काम में ले आइए तो कोई बुराई नहीं है पर भलाई भी क्या है हां यदि अपने और यथा साध्य पराए कार्य में भी लगाते रहिए तो बुद्धिमानी है पर यदि अपनी हानि करके भी पराया हित कर सकिए तो तो सच्ची कीर्ति के पात्र हो जाइएगा।

लक्ष्मी जी (धन बल विद्यादि) संसार में तीन रूप से विचरती हैं किसी के यहां कन्या के रूप में जाती हैं उसे निन्दास्पद बनाती हैं जो न अपने लिए उठाता है न औरों को देता है वुह सूम कहलाता है अंत में दूसरे लोग उसका धन भोगते हैं पर कुछ प्रशंसा नहीं करते हमें आशा है ब्राह्मण के रसिक अपनी लक्ष्मी से ऐसा वर्ताव न करते हैं न करेंगे लक्ष्मी जी बहुतों के पास पत्नी स्वरूप से जाती हैं अर्थात् जिस की कहलाती हैं उसी के काम आती हैं दूसरों से कुछ प्रयोजन नहीं; यद्यपि यह रीत बुरी नहीं है पर कोई उत्तमता भी नहीं है हां जिन के पास वेश्या बन के जाती हैं अर्थात् अपने पराए सब के सुख साधन में आती हैं वही उदार यशी जगत हितैषी कहलाता है! अतः बुद्धिमान को चाहिए कि परस्वारथ के लिए प्राण तक दान कर दे! पर सब से पहिले चाहिए कि इस बात पर दृष्टि दान करें कि दान वस्तु और दान का पात्र दोनों दान के योग्य हैं कि नहीं यह विचार रक्खे बिना दान निष्फल है बरंच बहुधा दुष्फल जनक हो जाना भी संभव है! हमने पुराने

ढंग के लोगों से सुना है कि बाजे २ लोग तीर्थों के पंडों को स्त्री दान करते थे उसे हम दान नहीं कहेंगे वुह बिना सोचे बिचारे धन और धर्म का सत्यानाश करना था यदि किसी वेद अथवा शास्त्र में प्रत्यक्ष वा हेर फेर के साथ ऐसी आज्ञा भी हो तो न माननी चाहिए स्त्री का नाम अर्द्धांगी इस लिए रक्खा गया है कि संसारिक अथच परमार्थिक कामों में साथ दे सकती है पर वुह कोई वस्तु अथवा पशु नहीं है कि जिसे चाहें उसे दे डालें। हां जिसे हम हाथ पांव धन अन्नादि से सहाय दान करते हैं हमारी अर्द्धांग स्वामिनी भी करे पर यह क्या है कि दान पात्र का कोई विशेष हित अथवा उसकी योग्यता देखे बिना ओम् विष्णुर्विष्णुः कर दिया जाय दान का मुख्य प्रयोजन यह है कि जिसे जिस बात की अत्यावश्यकता हो और उस आवश्यकता के पूर्ण करने की सामर्थ्य न हो उसे यथोचित अथवा यथा सामर्थ्य सहायता देना इस दशा में भी यदि यह शंका हो कि लेने वाला ले के उचित रीति से काम में न लवेगा तो दान करना पाप है बस इस नियम पर दृष्टि रख के सदा सकल पदार्थ दान करते रहिए पूर्ण फल के भागी हो जाइएगा! बिना जी दुखए फिर लेने की इच्छा से उचित ब्याज पर गरीब भले मानस को ऋण देना भी दान है कोमलता के साथ काम कराने की इच्छा से किसी को नौकर अथवा मजदूरी पर रख लेना भी दान है अपने पास खाने का सुभीता न हो तो साधारण लोगों से कुछ ले के (जितना देते उन्हें अखर न हो) उनके बालकों को विद्या पढ़ाना एवं कोई गुण सिखाना भी दान है किसी निर्बल व्यक्ति को एक अथवा अनेक अत्याचारियों के हाथ से कल बल छल कुछ ही करके बचा लेना दान है किसी की कोई बुरी लत छुड़वाना दान है क्यों कि ऐसे २ कामों से दूसरों को उचित सहायता मिलती है कहां तक कहिए समझ बूझ के साथ जाति धर्म प्रतिष्ठा धन मान प्रान सर्वस्व तक दान करना उत्तम है कोई गाय भैंस बालक वृद्ध अंध पंगु मोहरी में पड़ा हो और बिना हमारे निकाले न निकल सकता हो तो कपड़ों समेत नाली में घुस के उसे उबार लेना, देश में विद्या गुण कला कौशल फैलाने के लिए जहाज पर चढ़ के सब छुवा छूत

गंवा के विलायत जा के जाति छित साधन करना इत्यादि तो हई क्या लोक परलोक सब त्याग के पराया भला कराना दान है स्वामी रामानुज जी ने गोष्टी पूर्णाचार्य जी से ब्रह्म विद्या सीखी थी उस समय आचार्य से प्रतिज्ञा कर ली थी कि किसी को न बतावेंगे पर ज्योंही सीख चुके वोहीं समस्त शिष्य मण्डली को बतलाना आरंभ कर दिया! यह समाचार पाके पूर्णाचार्य कुछ होके कहने लगे कि 'तुमने गुरु के वाक्य उल्लंघन किए हैं अतः नर्क जाओगे' इस पर परमोदार शेषावतार श्रीयति राज ने कहा 'पतिष्ये एक एवाह नरके गुरु पातकात्। सर्वे गच्छन्तु भवतां कृपया परमम्पद:' सच है दान इसी का नाम है कि परोपकारार्थ नर्क से भी न डरना जब हमारे माननीय महात्मा यहां तक उदाहरण दिखला चुके हैं तो दूसरी वस्तु कौन सी है जो पात्र के देने योग्य न हो! हमारे पूर्वजों ने बड़ी भारी बुद्धिमानी से जाड़े में तिल कम्बल इन्धनादि का दान ग्रीष्म ऋतु में जल छत्र उपनहादि का दान बतलाया है इनमें बहुधा योग्यायोग्य का बिचार नहीं भी अपेक्षित है उस ऋतु में वे वस्तु जिसे दीजिएगा वही सुख पावेगा पर उसमें बिना बिचारे बहुत से दान पात्रों का विमुख रह जाना एवं जिन्हें आवश्यकता नहीं है उनका उड़ा ले जाना संभव है विशेषतः कन्या और गऊ तो कुपात्र को देना ही न चाहिए इसी से हमारे प्रेम शास्त्र की आज्ञा है कि सब से बड़ा मन का दान है! प्रत्येक दान में मन लगा के देख लिया कीजिए कि देय वस्तु और दान पात्र दोनों ठीक हैं कि नहीं बस सारे दान सुफल हो जायंगे यदि कुछ देने की सामर्थ्य न भी हो तो भी सेंत मेंत में मानसिक पुण्य मिलता है पर देखिए दान देके अपने लिए फल की आशा करना बणिक् वृत्ति है धर्म चाहो तो केवल पराया भला करने में दत्त चित्त रहो इसी में सब कुछ है जब मन दे दीजिएगा तो कोई वस्तु देते हुए न अखरैगी मन दे के यदि और कुछ न भी दे सकिए तो भी दान पात्र परम संतुष्ट रहेगा अतः सब दशाओं में दान पात्रों की दशा पर दृष्टि देते रहो इससे इतना महान् पुण्य होगा कि 'नर को बश करिबो कहा नारायण बश होय' बस दृष्टि और मन दे दीजिए फिर दान का सर्वस्व

आप के आधीन हो जायगा दूसरी वस्तु यदि आप न दे सकें तो आप के कहने से दूसरे लोग देना सीख जायंगे उस दशा में आप को विश्वास हो जायगा कि मन का दान करने वाला दाता ही नहीं बरंच दाताओं का गुरू है। और उसी दशा में हम आप से कहेंगे कि अमुक को कुछ दान कीजिए और कुछ न हो सके तो बचन मात्र से उपदेश ही का दान करते रहिए इसमें भी एक न एक दिन बड़ा उत्तम फल प्राप्त होगा। इस समय अधिक न हो सके तो हमारे इस बचन पर केवल कान दीजिए (यदि ध्यान दीजिए तो अत्युत्तम) कि दान अति उत्तम कृत्य है उसमें भी मन दान सब दानों का मूल है उसके कारण सारा संसार दान में देने के योग्य दिखलाई देगा यहां तक कि दाता लोग परम पद का दान कर सकते हैं पात्र होना चाहिए एक प्रेमी का बचन है कि एक महात्मा ने हमें परमतत्व परमात्मा दान में दे दिया यह बात यदि अभी न समझ में आवे तो कुछ दिन कुतर्क छोड़ के प्रेम शास्त्र पढ़िए तब निश्चय हो जायगा कि परमेश्वर तक दान में दिया जा सकता है दूसरी बात की तो बात ही क्या है? पर इतना स्मरण रखिए कि वुह 'कर्तुमकर्तुमन्यथा कर्तुं समर्थ' है इससे दाता दान पात्र एवं दान का विषय सब हो जाता है पर पात्र मिलने पर। पर यह विषय गूढ़ है इससे इस विषय में तो हम इतनी अनुमति मात्र दे सकते हैं कि एकाग्र चित्त हो के प्रेम देव से प्रार्थना करो तो कदाचित् वुह प्रेम सिद्धांतियों के दान का ज्ञान दें। हां यदि हमारे लेख से दान की सामग्री समझ में आ गई हों तो दान के पात्र भी ध्यान में धर रखिये॥

शेषमग्रे

होम करते हाथ जलता है

(प्रकाशित से आगे)

जिन्हों ने यह विज्ञापन लिखा या प्रकाशित किया है उन को झूठ का तो बड़ा भारी प्रमाण यह है कि कई एक भले मानसों के हस्ताक्षर झूठ मूठ छापे हैं। श्री हरिचरण शास्त्री से जब हमने पूछा कि क्या आपने हस्ताक्षर किए थे? तो उन्हों ने कहा 'हम कभी भाषा के पत्र में हस्ताक्षर करते ही नहीं हैं। विशेषतः इस झगड़ालू पत्र में हमें क्या पड़ी थी जो हस्ताक्षर करते?' मास्टर सुखदावलम्बित साहब

एक दिन मिले और इस विषय में कहा कि 'हमने बड़े आश्चर्य में आके कई बेर हस्ताक्षर कराने वालों से पूछा था कि क्या प्रताप मिश्र ने वह बातें कही थीं जो उसके विषय में लिखी गई हैं? उन्हों ने कहा हां साहब क्या हम झूठे हैं? तो हमने (मास्टर जी ने) समझा शायद उस समय प्रताप के जी में वैसा ही तरङ्ग आ गई हो' और भी तुर्रा यह है कि बाबू कालिकाप्रसाद तथा मास्टर जी गौरीशंकर जी का व्याख्यान भी न सुनने गए थे न उन्हें मत मतान्तर के झगड़े रुचते ही हैं फिर न जाने उनके हस्ताक्षरों से लोगों ने क्या लाभ समझा था? हां यदि हमारे हस्ताक्षर कराते तो उनके पत्र की शोभा थी क्योंकि हमने पण्डित गौरीशंकर का व्याख्यान भी सुना था उसका अनुमोदन भी किया था पर हमारे हस्ताक्षर क्यों कराते हमें तो वे अपवाद ही लगाया चाहते थे। पर हमें इस का सोच नहीं है कि हमें उन्हों ने क्या समझा क्या नहीं सोच केवल उन की बुद्धि पर है कि हमारे आशय को न समझ कर कुछ का कुछ लिख मारा और गौरीशंकर जी की प्रतिष्ठा जितनी बढ़ानी चाही उतनीही घटा दी जो सहृदय हम को और पण्डित जी को जानते हैं तथा ब्राह्मण और फर्रुखाबाद की धर्म सभा का पत्र देखा है एवं हमारे और पण्डित जी के व्याख्यान सुने हैं वे इस बात को कभी न मानेंगे कि गौरीशंकर जी के व्याख्यान तथा उनके लेख देख के प्रताप मिश्र के जी में स्वामी दयानन्द के सिद्धांतों से घृणा एवं मूर्ति पूजन पर श्रद्धा हुई। उनके व्याख्यानों की निन्दा स्तुति से हमें प्रयोजन नहीं है पर इतना कहने से हम नहीं रुक सकते कि उन व्याख्यानों से केवल आर्य समाजों के निर्बुद्धि शत्रु प्रसन्न हो जाने सकते हैं पर हमारी सी तबियत् वालों के जी पर ऐसे व्याख्यानों का असर होना त्रिकाल में असंभव है। हमारी भांति जिन लोगों को किसी सम्प्रदाय अथवा किसी ग्रन्थ पर आग्रह नहीं है जिनका विश्वास थोड़े से कागजों पर निर्भर नहीं है उनके विषय ऐसी बे सिर पैर की बातें उड़ाना अपनी बुद्धि की तुच्छता दिखाना या अपने मान्य पुरुष (मत प्रवर्तक) विडंबना करना है। प्रशंसा की हद को उल्लन्घन कर जाना प्रशंसक की मूर्खता और प्रशंसित

की निन्दा है। पर यह बात ऐसों की समझ में कब आने लगी जो दूसरे की बात का तत्व नहीं समझ सकते, तत्व समझना भी दूर रहा हमारी कही हुई बातें तक स्मरण न रख सके भला ऐसे लोग किसी का पक्ष क्या समर्थन कर सकते हैं हमने कभी नहीं कहा कि दयानन्द का मत कपोल कल्पित या असत्य है! यह निरी झूठी गढ़न्त है कि हमारे मुंह से दयानन्द स्वामी के विषय में वे अदबी का शब्द कभी निकला ऐसे वचन विज्ञापन दाताओं तथा उनके गुरू गौरीशंकर जी के मुख को मुबारक रहें। हां यह हमने अवश्य कहा था कि स्वामी जी मूर्ति पूजन की उत्तमता नहीं समझ सके तथा इस विषय में उन्होंने धोखा खाया था (मूर्ति पूजा की उत्तमता हमने लिखी है उसे ब्राह्मण के पिछले अंकों में देख लीजिए) पर विज्ञापन वालों ने ढिठाई से यह छापा है कि 'दयानन्द ने अतीव धोखा दिया' जिन्हें (धोखा देने) और (धोखा खाने) का अंतर नहीं सूझता (न स्मरण रहता है) वे किस बुद्धि के भरोसे पं० गौ० शं० की महिमा कायम रख सकते हैं? हमने 'वारम्बार' कैसा एक बार भी नहीं कहा कि 'मूर्ति पूजनादि सत्य वैदोक्त धर्म हैं' क्योंकि हमारे धर्म का मूल प्रेम है न कि कोई पुस्तक विशेष अतः हमने खोल के कहा था कि यदि वेदों में न भी हो तो भी मूर्ति पूजन कर्तव्य है क्योंकि उससे हृदय को शांति होती है वरंच इसके समर्थन में हमने यह भी कहा था कि इत्र लगाने, सरस कविता तथा राग सुनने एवं संतान का मुख चूमने के लिए हमें वेद की आज्ञा की कुछ आवश्यकता नहीं है। प्रेम किसी प्रमाण का भूखा नहीं है। मूर्ति पूजन चित्त को प्रेमानन्द देने के लिए है न कि किसी की आज्ञा पालन करने के लिए पर इन बातों को विज्ञापन छापने वाले स्मरण न रख सके क्योंकि उन्हें तो केवल आर्य समाजियों से द्वेष निभाना था हमारी बातें समझ के वे क्या करते। केवल अपने मतलब की समझ ली कि प्रताप मिश्र भी हम में शामिल हो गया। यह नहीं जानते कि प्रताप झगड़ा, मतवाद, परनिन्दा और द्वेष बढ़ाने के लिए किसी के साथ कभी नहीं हो सकता। उसके हिसाब हिन्दू, जयन, मुसलमान, क्रिस्तान, नास्तिक सब आदरणीय हैं यदि उसके रुचिकारक गुण रखते हों।

शेषम्पुनः

श्री पं० प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "शुभचिन्तक यंत्रालय" कानपुर में प्रकाश हुआ॥

अघोरपिगुणावाच्यादोषावाच्यागुरोरपि ॥

ब्राह्मण

मासिक पत्र

———:0:———

निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तुवन्तु। लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टं।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरेवा। न्यायात्पथः प्रविचलन्ति पदन्नधीराः
राजर्षि भर्तृहरि जी का सिद्धान्त।

VOL. 6 { CAWNPORE, 15 AUGUST, 5 H. C. } No. 1,
खण्ड ६ { कानपुर १५ अगस्त श्री हरिश्चन्द्र सं० ५ } संख्या १

नियमावली

१ वार्षिक मूल्य एक रुपया, एक प्रति का दाम दो आना है नमूने की कापी भी ≈) से कम में न भेजी जायगी॥

२ ग्राहक होने से तीन महीने तक मूल्य भेजेंगे उन से १) इसके उपरान्त २) रु० लिया जायगा॥

३ विज्ञापन की छपाई ≈) प्रति पंक्ति लिया जायगा विशेष पूछने से मालूम होगा॥

४ बेरंग पत्र न लिया जायगा बिना मूल्य पत्र न दिया जायगा॥

५ लेख तथा ब्राह्मण सम्बन्धी पत्र सम्पादक के नाम ब्राह्मण आफिस कानपुर में भेजने चाहिए और मूल्य नीचे लिखे पते पर

ब्रजभूषणलाल गुप्त
मेनेजर "ब्राह्मण"
कानपुर

वर्षारम्भ॥

छबिसागर नागर नवल सब गुन गन आगार। छैल छबीले रसिक बर प्रेमिक प्रान अधार॥१॥ चार वेद कह शास्त्रवित नहिं पावहिं तव पार। का तव महिमा कहि सकें हम मति

मन्द गंवार ॥२॥ करहिं यहै अति धृष्टता छमियो छमा निकेत। महा अपावन बदन ते नाम तुम्हारो लेत ॥३॥ हाड़ मास कफ कुवच छल पर निन्दा को धाम। यह मुख कब यहि योग है लेहि जु तुम्हरो नाम ॥४॥ तदपि नाथ अपनी गरज अरज करहिं तजि लाज। ब्राह्मण की रक्षा करहु छठे बरस महराज ॥५॥ जो हमरी करतूति कर करिहो कछू बिचार। तो कहुं केसेहु छनहु भरि नहिं निरबाह हमार ॥६॥ अंतर जामी आप तुम छप्यो कहा तुम पाहिं। तव करुणा बल तजि इहां एको लच्छन नाहिं ॥७॥ तन निरबल मन अति अथिर धन नाते तव नाम। केवल तुम्हरे आसरे चलत अहैं सब काम ॥८॥ करत रहैं निज हाथ हम बदि बदि बद व्यवहार। पै हमहूं से अघिन को तुम नित करत संभार ॥९॥ निज दासन के कबहुं तुम लखत न काज कुकाज। सदा निबाहत नाथ इक बांह गहे की लाज ॥१०॥ एकहु छिन झूठहु जु तुम गहो न्याय की चाल। तो न जानिए कौन धौ होय हमारो हाल ॥११॥ पै याही हम डरत नहिं तुम हो दया निधान। जनम दिवस ते आजु लगि लखे अमित परमान ॥१२॥ हम अगनित औगुन किए तहूं गने तुम नाहिं। किए अमित उपकार नित हितसों छिन २ माहिं ॥१३॥ याही ते अति ढीठ ह्वै संक सकुच सब खोय। करत रहै नित जाचना जो जिय की रुचि होय ॥१४॥ असन बसन इत्यादि सब भोगहिं तव परसाद। केवल ब्राह्मण हित चहैं श्री मुख आशीर्वाद ॥१५॥ चिरजीवी कारज कुशल करहु याहि सब रीति। जग जन या के बचन गहि करहिं परस्पर प्रीति ॥१६॥ भारत की आरत दशा वेगिहि जाय पताल। सुख सनेह छायो रहै सबहि ठौर सब काल ॥१७॥ निज भाषा निज देश हित वारें मन धन प्रान। रहहिं प्रेम मद मत्त सब भारत के सन्तान ॥१८॥ भारत शशि को रूप धरि तुम जु प्रकाश्यो तत्व। दरसावहु सब कहं सबिधि वाको दिव्य महत्व ॥१९॥ ब्राह्मण द्वारा प्रेम पथ गहैं सबै तजि भ्रांति। रहै पूरि सब दिशि सदा धर्म प्रेम शुभ शांति ॥२०॥ नेति

राम ॥

आहा यह दोनों अक्षर भी हमारे साथ कैसा सार्वभौमिक सम्बन्ध रखते हैं कि जिस का वर्णन करने की साम-

र्थ ही किसी को नहीं है जो रमण करता हो अथवा जिसमें रमण किया जाय उसे राम कहते हैं यह दोनों अर्थ राम नाम में पाए जाते हैं हमारे भारत में सदा सर्वदा राम जी रमण करते हैं और भारत राम में रमण करता है। इस बात का प्रमाण कहीं ढूंढ़ने नहीं जाना आकाश में रामधनुष (इन्द्र धनुष) धरती पर रामगढ़ रामपूर रामनगर रामगंज रामरज रामगंगा रामगिरि (दक्षिण में) खाद्य पदार्थों में रामदाना रामकीला (सीताफल) रामतरोई चिड़ियों में राम पाखी (बंगाली में मुरगी) छोटे जीवों में रामबरी (मेंढ़की) व्यंजनों में राम रंगी (एक प्रकार के मुंगौड़े) तथा जहांगीर ने मदरा का नाम रामरंगी रक्खा था 'कि राम रंगिए मा नश्शए दिगर दारद' कपड़ों में रामनामी इत्यादि नाम सुनके कौन न मानलेगा कि जलस्थल भूमि आकाश पेड़ पत्ता कपड़ा लत्ता खान पान सब में राम ही रम रहे हैं! मनुष्यों में भी राम लाल रामचरण रामदयाल रामदत्त रामसेवक रामनाथ रामनारायण रामदास रामप्रसाद रामदीन राम गुलाम रामबक्श रामनेवाज स्त्रियों में भी रामदेई रामकिशोरी रामपियारी रामकुमारी इत्यादि कहां तक कहिए जिधर देखो उधर रामही राम दिखाई देते हैं जिधर सुनिए रामही नाम सुन पड़ता है व्यवहारों में देखिए लड़का पैदा होने पर राम जन्म के गीत जनेऊ ब्याह मुंड़न छेदन में रामही का चरित्र आपस के शिष्टाचार में 'राम २' दुःख में हाय राम आश्चर्य अथवा दया में अरे राम महा प्रयोजनीय पदार्थों में भी इसी नाम का मेल लक्ष्मी (रुपया पैसा) का नाम रमा स्त्री का विशेषण रामा (रामयति) मदिरा का नाम रम (पोतेही पीते नस २ में रम जाने वाली) यही नहीं मरने पर भी 'राम २ सत्य है' उसके पीछे भी गया जी में राम शिला पर श्राद्ध! इस सर्व व्यापकता का कारण है? यही कि हमारे पूर्बज अपने देश को ब्रह्ममय समझते थे कोई बात कोई काम ऐसा न करते थे जिसमें सर्व व्यापी सर्व स्थान में रमण करने वाले को भूल जायं! प्रथच राजभक्त भी इतने थे कि श्रीमान् कौशल्यानन्द वर्द्धन जानकी जीवन अखिलार्थ नरेंद्र निषेवित पाद पद्म महाराजा धिराज माया मानुष भग-

वान रामचन्द्र जी को साक्षात् परब्रह्म मानते थे ! इस बात का वर्णन तो फिर कभी करेंगे कि हमारे दशरथ राजकुमार को परब्रह्म नहीं मानते वे निश्चय धोखा खाते हैं अवश्य प्रेम-राज्य में पैठने लायक नहीं हैं। पर यहां पर इतना कहे बिना हमारी आत्मा नहीं मानती कि हमारे आर्य वंश को राम इतने प्यारे हैं कि परम प्रेम का आधार रामही को कह सकते हैं ! यहां तक कि सहृदय समाज को 'रामः पाद नखज्योत्स्ना परब्रह्मेति गीयते' कहते हुए भी किञ्चित् संकोच नहीं होता ! इसका कारण यही है कि राम के रूप गुण स्वभाव में कोई बात ऐसी नहीं है कि जिस के द्वारा सहृदयों के हृदय में प्रेम भक्ति सहृदयता अनुराग का महा सागर उमड़ न उठता हो ! आज हमारे यहां की सब सुख सामग्री नष्ट प्राय हो रही है सहस्त्रों वर्ष से हम दिन २ दीन होते चले आते हैं पर तो भी राम से हमारा सम्बन्ध बना है उनके पूर्व पुरुषों की राजधानी अयोध्या की दशा देख के हमें रोना आता है ! जो एक दिन भारत के नगरों का शिरोमणि था हाय आज कुछ फैजाबाद के जिले में एक गांव मात्र रह गया है ! जहां एक से एक धीर धार्मिक महाराज राज्य करते थे वहां आज बैरागी तथा थोड़े से दीन दशा दलित हिन्दू रह गए हैं ! जो लोग प्रतिमा पूजन के द्वेषी हैं परमेश्वर न करे यदि कहीं उनकी चले तो फिर अयोध्या में रही क्या जायगी ! थोड़े से मन्दिरही तो हमारी प्यारी अयोध्या के सूखे हाड़ हैं ! पर हां रामचन्द्र की विश्व व्यापिनी कीर्ति जिस समय हमारे कानों में पड़ती है उसी समय हमारा मरा हुआ मन जाग उठता है ! हमारे इतिहास को हमारे दुर्दैव ने नाश कर दिया यदि हम बड़ा भारी परिश्रम करके अपने पूर्वजों का सुयश एकत्र किया चाहें तो बड़ी मुद्दत में थोड़ी सी कार्य सिद्धि होगी पर भगवान रामचन्द्र का अविकल चरित्र आज भी हमारे पास है जो औरों के चरित्र (जो बचे बचाए मिलते हैं वा कदाचित् दैव योग से मिलें) से सर्वोपरि श्रेष्ठ महा रस पूर्ण परम सुहावन है। जिसके द्वारा हम जान सकते हैं कि कभी हम भी कुछ थे अथच यदि कुछ हुआ चाहें तो हो सकते हैं। हममें कुछ भी लक्षण

हो तो हमारे राम हमें अपना लेंगे बानरों तक को तो उन्हों ने अपना मित्र बनालिया हम मनुष्यों को क्या भृत्य भी न बनावेंगे ? यदि हम अपने को सुधारा चाहें तो अकेली रामायण सब प्रकार के सुधार का मार्ग पा सकते हैं (इसका बर्णन फिर कभी) हमारे कविवर बाल्मीक ने राम चरित्र में कोई उत्तम बात नहीं छोड़ी एवं भाषा भी इतनी सरल रक्खी है कि थोड़ी सी संस्कृत जानने वाला भी समझ सकता है यदि इतना श्रम भी न हो सके तो भगवान तुलसीदास की मनोहारिणी कविता थोड़ी सी हिन्दी जानने वाले भी समझ सकते हैं सुधा के समान काव्यनन्द पा सकते हैं और अपना तथा देश का सर्व प्रकार हित साधन कर सकते हैं। केवल मन लगा के पढ़ना और प्रत्येक चौपाई का आशय समझना तथा उसके अनुकूल चलने का बिचार रखना होगा! रामायण में किसी सदुप देश का अभाव नहीं है! यदि बिचार शक्ति से पूछिए कि रामायण की इतनी उत्तमता उपकारकता सरसता का कारण क्या है ? तो यही उत्तर पाइएगा कि उसके कवि ही आश्चर्य शक्ति से पूर्ण हैं फिर उनके काव्य का क्या कहना! पर यह भी बात अनुभवशाली पुरुषों की बताई हुई है फिर इस सिद्ध एवं बिदग्धालाप कवीश्वरों का मन कभी साधारण बिषयों पर नहीं दौड़ता वुह संसार भरका चुना हुआ परमोत्तम आशय देखते हैं तभी कविता करने की ओर दत्त चित्त होते हैं इससे स्वयं सिद्ध है कि राम चरित्र वास्तव में ऐसाही है कि उस पर बड़े बड़े कवीश्वरों ने श्रद्धा की है! और अपनी पूरी कविता शक्ति उसपर निछावर करके हमारे लिए ऐसे २ अमूल्य रत्न छोड़ गए हैं कि हम इन गिरे दिनों में भी उनके कारण सच्चा अभिमान कर सकते हैं। इस हीन दशा में भी काव्यानन्द के द्वारा परमानन्द का स्वाद पा सकते हैं! और यदि चाहें तो संसार परमार्थ दोनों बना सकते हैं। खेद है यदि हम भारत सन्तान कहा कर इन अपने घर के अमूल्य रत्नों का आदर न करें। और जिन के द्वारा हमें यह महा मणि प्राप्त हुए हैं उनका उपकार न मानें तथा ऐसे राम को जिनके नाम पर हमारे पूर्वजों के प्रेम, प्रतिष्ठा, गौरव, एवं मनो विनोद की नीव थी अथच हमारे लिए इस

गिरी दशा में भी सच्चे अहंकार का कारण औ आगे के लिए सब प्रकार के सुधार की आशा है भूल जायं! अथवा किसी के बहकाने से राम नाम की प्रतिष्ठा करना छोड़ दें तौ कैसी कृतघ्नता, मूर्खता, एवं आत्म हिंसकता है। पाठक! यदि सब भांति की भलाई और बड़ाई चाहो तो सदा सब ठौर सब दशा में राम का ध्यान रक्खो राम को भजो, राम के चरित्र पढ़ो सुनो, राम की लीला देखो दिखाओ, राम का अनुकरण करो, बस इसी में तुम्हारे लिए सब कुछ है इस रकार और मकार का वर्णन तो कोई त्रिकाल में करी नहीं सकता कोटि जन्म गावें तौ भी पार न पावैंगे इससे यह लेख अधिक न बढ़ा के फिर कभी इस विषय पर लिखने की प्रतिज्ञा एवं निम्न लिखित आशीर्वाद के साथ लेखनी को थोड़े काल के लिए विश्राम देते हैं बोलो राजा रामचन्द्र की जै॥

कल्याणानान्निधानं, कलिमलमथनं, पावनम्पावनानाम्। पाथेयंयन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य॥ विश्राम स्थानमेकं कविवर वचसां, जीवनं सज्जनानां। बीजन्धर्मद्रुमस्य, प्रभवतु भवताम्भूतये राम नाम:॥१॥

भावार्थ॥

कुलि कल्यान निधान सकल कलि कलुख नसावन। सज्जन जीवन प्रान महा पावन जन पावन॥ अखिल परम प्रद पथिकन हित मारग कर संबल। कुशल कवीशन की बर बानी को बिहार थल॥ सद धर्म विटप कर बीज यह राम नाम सांचहु अमृत। तव भवन भरै सुख सम्पदा सुमति सुयश नित २ अमित॥१॥

ईश्वर का वचन॥

जबकि ईश्वर संसार भरे का स्वामी है तौ यह कैसे संभव है कि उसका वचन केवल एक देश के लोगों की भाषा में हो? जबकि ईश्वर अनन्त विद्यामय है तो यह कहां हो सकता है कि ईश्वर की बनाई केवल एक ही दो पुस्तकें हों? हम वेद बाइबिल और कुरआन का तिरस्कार नहीं करते वुह मनुष्य मात्र के मानने योग्य पुस्तकें हैं पर यह कहना कि केवल यही ईश्वर का वचन है! हमारी समझ में नहीं आता जबकि वेद में लिखा है 'अनन्ता वैवेदाः' तो क्या इन्हीं ऋग्यजुः सामथर्व पुस्तकों को अनन्त मान लें? जिन के मंत्र क्या अक्षर भी गिने जा सकते हैं। ईश्वर के वचन में इतनी

झूठ ? यदि कहिए कि उसका आशय अनन्त है तो भी 'अनन्तायया वेवेदाः' होना चाहिए ईश्वर के वचन में भ्रांति ? विशेषतः ऐसे वचन में जो सब के उपदेशार्थ प्रकाश किया गया हो ! बाइबिल तथा कुरआन के दोष दिखाना हमें अभीष्ट नहीं है पर इतनी शंका हमारे जी से नही जाती कि ईश्वर प्रणीत ग्रन्थों में इतना गड़बड़ क्यों हुआ कि मनुष्य उनमें दोष लगा सकें ? इसके सिवा इन पोथियों में जितनी विधि और निषेध वर्णित है मानव मंडली अधिकतः उनके विरुद्ध ही आचरण करती है यह क्यों ? एक छोटे से संसारी राज पुरुष की मौखिक आज्ञा को तो कोई भंगही नहीं कर सकता ईश्वर की लिखी हुई आज्ञा क्या उससे भी गई बीती है कि मानो तो वाह २ न मानो तो वाह वाह ! फिर हम क्योंकर मान लें कि यही पांच छः किताबें जिनका अर्थ कोई कुछ बतलाता है कोई कुछ यही थोड़े से कागज जो अंजुली भर पानी में गल के हलुवा और एक दिया सलाई में जल के राख हो सकते हैं ईश्वर का वचन है ! हां हम अपने लड़के को गोद में लिए बैठे हों और कोई प्रिय मित्र पूछे 'क्या यह आपका चिरंजीव है' तो हम उत्तर देते हैं 'जी हां आपही का है' यह कहना सभ्यता की रीति से झूठ नहीं है ऐसे ही अपने मान्य पुरुषों (जिन्हें हम ईश्वर का अभिन्न मित्र इकलौता बेटा अथवा प्यारा स्नेही समझते हैं और वास्तव में उनके बहुत से काम इन पदवियों के योग्य थे) उनके बनाए ग्रन्थ को ईश्वर का बनाया कहें तो कोई दोष नहीं है ! जैसे हम कहा करते हैं कि 'इस विपत्ति में परमेश्वर ही ने बचाया अथवा यह योग्यता परमात्मा ही ने दी नहीं तो हम में क्या सामर्थ्य थी' ऐसे ही यदि ईसा मूसा मुहम्मदादि ने कहा हो कि 'अमुक ग्रन्थ ईश्वर ही ने बनाया नहीं तो हमारा क्या साध्य था' तो कोई अपराध नहीं है बरंच उनके महा निराभिमान की पराकाष्टा है पर वास्तव में ऐसी पोथियों को ईश्वर कृत मानना जिनमें कहीं लिखा है ईश्वर ने छः दिन में जगत बनाया, कहीं कहा है मरने के पीछे कयामत के के दिन तक सब जीवों के पाप पुण्य का मुकद्दिमा ईश्वर की अदालत में भी दौरा सुपुर्द ही रहेगा, कहीं वर्णन

किया है एक स्त्री ग्यारह पति करले तौ भी पाप नहीं है, अंधेर है ! यदि बुद्धि कोई वस्तु है तो दूषित पुस्तकों को अथवा ऐसी पुस्तकों को जिनके अर्थ में भ्रांति संभव है या झगड़े के लिए स्थान है ईश्वर लिखित कभी न मानेगी हां जिस पोथी में कहानियां अथवा गीत कवित्त आदि की पुस्तक कहाती है वैसेही जिस पुस्तक में ईश्वर का वर्णन हो उसे ईश्वर की पुस्तक अथवा ईश्वर सम्बन्धी बचन को ईश्वर का बचन कह लेना दोषास्पद नहीं है ! पर वास्तव में बुद्धि संगत ईश्वर का बचन क्या है ? इसका समझना सहज नहीं है ! यों तो संसार ईश्वर का है अतः तदंतः पाती बचन मात्र ईश्वरही के बचन हैं ! कुत्ते की भौं भौं अथवा गधे की सीपों से लेके हमारी तुम्हारी गपशप और बड़े २ योधा धारियों की वक्चिता सब ईश्वर ही के बचन हैं पर ईश्वर अनादि अनन्त और अकथनीय स्वभाव विशिष्ट है अतः ईश्वर के बचन या उसकी आज्ञा तथा उसकी बनाई पोथी कैसी है क्या हैं कै हैं यह हम लोग नहीं बतला सकते ! हां थोड़ी सी उसकी बातें बहुत से विद्वानों द्वारा बिदित हुई हैं वुह सुन रखिये जिन बातों की इच्छा होने के साथही हमारे अंतः करण को यह विश्वास हो जाता है कि इसमें ईश्वर अवश्य सहायक होंगे, संसार भरका अथवा हमारे देश जाति कुटुंब का अवश्य हित होगा, चाहे कोटि विघ्न पड़ें ! चाहे अर्बुद कष्ट एवं हानि हो पर सिद्धि में शंका नहीं है ! अथवा सिद्धि चाहे जब हो पर इसमें कोई संदेह नहीं है कि इसका अनुष्ठान आनन्द पूर्ण है जैसे गौरव रक्षा, धर्म श्रद्धा, सुरीति संचार, विद्या प्रचार, सच्चे भ्रातभाव का उद्गार यह सब ईश्वर ही के बचन हैं जब हम ईश्वर के साथ सच्चा प्रेम अथच ईश्वर की सृष्टि के साथ अकृतिम स्नेह करते हैं तब हमारा हृदय बिहारी सदा हमें ऐसी ऐसी बातें बतलाया करता है जिनसे प्राण हानि होने पर भी अकथ्य आनन्द लाभ होने का दृढ़ निश्चय रहता है ! पर यह बातें केवल ईश्वर के अभिन्न मित्र ही सुन समझ सकते हैं ! साधारण लोगों को परमात्मा केवल कमाने खाने गृहस्थी चलाने आदि की युक्तियां बतलाया करता है जिससे उनकी जीवन यात्रा में कोई बड़ा विघ्न न पड़े महात्मा कबीर कहते हैं

'हरि जैसे को तैसा है' संसार में जितने जीवधारी हैं उनको ईश्वर उन्हीं के अनुकूल उपदेश करता रहता है चोर के जी में ईश्वर चोरी करने की बातें बतलाता है धन के स्वामी को अपना माल ताकने की युक्ति समझाता है जो साह जी ईश्वर का वचन न मान के धन से गाफिल रहेंगे तो चोर साहब सारी पूंजी उड़ा ले जांयगे और जो चोर राम परमेश्वर की बातों पर ध्यान न दे के जागने वाले के घर जांयगे तो अपने किए का फल पावेंगे। ऐसे २ अनेक उदाहरणों से आप समझ सकते हैं कि ईश्वर का वचन वही है जो हर एक के हृदय में उसकी भावना के अनुसार हर समय गूंजा करता है। रही ईश्वर की आज्ञा वुह स्वभाविक वृति है जब भोजन करने की आच्छा होती है तब किस को सामर्थ्य है कि न खाय? न खाय तो आज्ञा भंग करता है और उसी समय दंड पाता है अर्थात् भूख के मारे तिलमिला जाता है। नींद भूख प्यास दुःख सुख इत्यादि उसकी जीवंत आज्ञा हैं जिनका पालन करना ही सबके लिए श्रेयस्कर है नहीं तो जीवन दुःख मय हो जाता है। अपने निज मित्रों को परमेश्वर देशोद्धार और प्रेम प्रचारादि की आज्ञा दिया करते हैं जिनके माने बिना उन सत्पुरुषों का भी क्षण भर निर्वाह नहीं है ऐसी २ उसकी अनन्त आज्ञा हैं जिन का वर्णन तो कोई कर नहीं सकता ईशारा मात्र हमने कर दिया है जितना अधिक सोचिएगा उतनाही आप को ज्ञात होता जायगा यों ही उसकी बनाई पुस्तकें भी अगणित हैं पर हमें केवल दो पोथियां उसने दी हैं एक का नाम है दृश्यमान जगत अर्थात् भूगोल खगोल और दूसरी का नाम है आंतरिक सृष्टि अर्थात् मन बुद्धि आत्मा स्वभाव आदि का संग्रह इन्हीं दोनों पुस्तकों को लाखों बरस से लाखों लोग बिचारते आए हैं पर किसी ने इति श्री नहीं की। अस्तु जितना हो सके उतना आप भी बिचारते रहिए इसी में कल्याण है। हां हमारे इतने लिखने पर यदि कुछ रुचि उपजी हो तो कृपा करके यह बतलाइए कि आपको ईश्वर बहुधा कैसी बातें बतलाया करते हैं? आपको किस प्रकार की आज्ञा दिया करते हैं? आपने उनकी दोनों पुस्तकों को कितना समझा है?

दान ॥

यदि इस शब्द को सुन के हमारे पाठकों का चित्त पानदान पीकदान इत्यादि की ओर न चला जाय तो हम दिखलाया चाहते हैं कि हमारे महर्षियों ने इन दो अक्षरों में भी दोनों लोक की भलाई भर रक्खी है यदि किसी को यह संका होकि द (दकार) तो वर्णमाला भर में सब से बुरा अक्षर है (यह बात ब्राह्मण के चौथे खंड की दूसरी संख्या में देखो) फिर वुह शब्द जिस की आदि में दकार हो है क्योंकर अच्छा हो सकता है? तो इसका सहज उत्तर यह है कि अंत में जो नकार है वुह प्रायः सब भाषाओं में निषेध वाचक है संस्कृत में न अथवा नहि हिन्दी में नहीं फारसी में ने अंगरेजी में नो या नाट सबका अर्थ एकही है इससे इस बात की सूचना होती है कि 'दान' में दकार की दुरूहता नहीं है दान शब्द में दकार केवल इसलिए रक्खी गई है कि अपने पास से किसी को कुछ देना पहिले तनिक अखरता है नहीं तो, वास्तव में दान कोई बुरी बात नहीं है यह बात इस शब्द के अक्षरार्थ ही से प्रकाशित है अर्थात् द (दुःख दुस्सहपन दुरूहता आदि) और न अर्थात् नहीं भाव यह हुवा कि दान में कोई दोष नहीं है मोटी बुद्धि वाले न समझें अथवा कपट पूर्ण विदेषी उसका अर्थ कुछ का कुछ समझावें तो और बात है नहीं तो दान है बहुत अच्छी बात! यह सब मत, सब देश, सब काल के लोग मानते हैं कि धर्म को ईश्वर के साथ बड़ा भारी बड़ा गहिरा बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है क्योंकि ईश्वर की दया प्राप्त करने के लिए सब महात्माओं ने धर्म करना बतलाया है! जिसे ईश्वर की भक्ति अथवा ईश्वर कृत जगत की प्रीति होती है वह सदा धर्म ही का आचरण किया करता है उसी धर्म अथवा यों कहिए ईश्वर के परम मित्र के (हमारी पुराणों में लिखा है कि) चार चरण हैं १ सत्य २ शौच (पवित्रता) ३ दया ४ दान! उनमें से एक २ युग में एक २ चरण टूट जाया करता है सतयुग में सत्य शौच दया दान सब विद्यमान थे पर तो भी सत्य का पूरा सन्मान था श्री महाराज हरिश्चन्द्र के चरित्र से विदित है कि उन्हों ने राज, पाट, स्त्री, पुत्र सब कुछ त्याग दिया पर सत्य को न छोड़ा त्रेता में धर्म के तीनही चरण रह गए अर्थात् सत्य का

प्रावल्य जाता रहा! महाराज दशरथ ऐसे धरमात्मा का मन श्री रामचन्द्र की बन यात्रा के समय डावांडोल हो गया! यद्यपि केकयी जी से बचन हार चुके थे पर यह कभी न चाहते थे कि भगवान बन को चले जांय! जब ऐसों की यह दशा हुई तो दूसरों को सत्य का आग्रह क्या हो सकता था? हां शौच का उस काल में अधिक आदर था राम, लछ्मण, भरत, शत्रुघ्न हनुमान आदिक जो उस समय भारत के मुकुट के महा अमूल्य रत्न थे उनके चरित्र में हमारे द्वेषी भी (चाहे कोटि दोष लगावें पर) अपवित्रता की गन्धि नहीं बतला सकते! द्वापर में केवल दोही चरण रह गए! अर्थात् सत्य और शौच का बल इतना घट गया कि युधिष्ठिर ऐसे सत्यवादी ने 'नरो वा कुंजरः' कहा! पराशर ऐसे धर्मज्ञ का योजन गन्धा पर चित्त चल आया! परहां दया की उस काल में इतनी श्रद्धा थी कि भगवान बुध ने हिंसा प्रचार करने वाले वेद मंत्रों तक को तिरस्कार करके 'अहिंसा परमोधर्मः' का डंका बजाया अब कलयुग में न सत्य का बल है न शौच का निर्वाह है न दया में जीव है पर दान का अब भी अभाव नहीं है धर्म का यह चरण इतना दृढ़ है कि कलियुग के तोड़े भी न टूट सका इसको धर्म का चरण क्या यदि धर्म का रूप ही कहैं तौ भी विरुद्ध न होगा आप चाहे जैसे खोटे कर्म करते रहिए कुछ चिन्ता नहीं परन्तु अवसर पर चार पैसे किसी ब्राह्मण के हाथ धरिए उसी समय धर्म मूर्ति धर्मावतार की पदवी पा जाइएगा जब ग्रहण पड़ते हैं तब भड्डरी और डोम भी यही कहते हुए फिरा करते हैं कि 'धरम करो' इसका तात्पर्य यही है कि कुछ देव अब बिचारने की बात है कि सर्वोच्च ब्राह्मण से लेके अस्पर्श्य डोम तक जिसको धर्म कहते हैं वुह धर्म क्यों न होगा? हमारे यहां यह दोहा बहुत प्रसिद्ध है कि 'दया धर्म को मूल है नर्कमूल अभिमान! तुलसी दया न छोड़िए जब लग घट में प्रान' इसमें भी दया से यही अभिप्राय है कि दीन दुःखियों को कुछ देना! सब प्रकार की पवित्रता (शुद्धता) भी दानही से होती है घर साफ न हो दो आने मजदूर को दीजिए झाड़ कर देगा, कपड़े मैले होजायं धोबी को चार पैसे दीजिए स्वच्छ कर देगा; शरीर मैला हो नाई अथवा कहार को दो पैसे दीजिए नहला धुला के शुद्ध करदेगा; मन शुद्ध न हो कोई धेली रुपये की (बैराग्य शतक या तदीय सर्वस्व आदि) पुस्तक मंगवा के पढ़िए या किसी महात्मा पंडित को कुछ भेंट

देके उपदेश सुनिए सब दुविधा जाती रहेगी; तबियत रंजीदा हो किसी चन्द्र बदनी को दो एक रुपया देके घंटे आध घंटे उसके हाव भाव गान तान का स्वादु लीजिए सब दुःख जाता रहेगा! सत्य की परीक्षा भी रुपए ही पैसे के मुआमिले में होती है ठीक समय पर लेन देन बेबाक रखिए देने लेने में चार पैसे की समाई रखिए सब कोई आप को सच्चा समझैगा सारांश यह है कि सत्य, शौच और दया सब दानही के अंतर्गत हैं फिर दान को धर्म का स्वरूप कहना क्या अत्युक्ति है? अब यह वर्णन करना रह गया कि यदि दान ही धर्म है तो दान से और ईश्वर से क्या संबन्ध है? हां दान ईश्वर को इतना प्रिय है कि ईश्वर दिन रात दान किया करता है कौन आस्तिक है जो देह, प्राण, अन्न, वस्त्र, ज्ञान, बुद्धि, पुत्र, मित्र, भक्ति, मुक्ति आदि को ईश्वर ही का प्रसाद न मानता हो? ईश्वर के सिवा जन्म दाता, अन्न दाता, सहाय दाता दूसरा है कौन? ईश्वरही तो महादानी है उसी का दिया हुआ तो सब पाते हैं एवं उसी की दी हुई वस्तु हम तुम दान करते हैं! वुह महा दाता दाताओं का प्यार भी करता है कि जो कोई अपना मन परमेश्वर को दे देता है परमेश्वर उसे प्रेम सुधा का दान करते हैं! जब जगदीश्वर स्वयं दानी हैं और दानियों के हित कारक हैं तो संसारी जीवों का तो कहनाही क्या है? ऐसा कौन है जो दान पा के आनंदित न होता हो अथच दान देके यश और सुख न पाता हो? पर दान के योग्य पदार्थ और दान के पात्र का बिचार न रख के दाता को ठीक फल नहीं होता क्योंकि प्रेम के बिना जितनी बातें हैं सब में बिना बिचारे हाथ डालना कष्ट कारक होता है इससे यदि दान का पूरा आनन्द चाहो तो सोच समझ के दान किया करो हमारे पूर्वजों ने जो देश काल वर्णन किए हैं वुह सब ठीक हैं पर इस काल में न इतने श्रद्धालु दानी हैं न इतनी विद्या है इससे हम देश का अर्थ केवल भारत और इंग्लिस्तान समझते हैं जिन से सदा काम रहता है और काल के लिए कोई नियम नहीं समझते सदा सब काल देते रहना ठीक है रहा दान का फल सो अगले लोगों ने अभिकतः स्वर्ग प्राप्ति के लिए दान करना बतलाया है पर हमारी समझमें स्वर्ग का अर्थ सुख है अर्थात् जिसमें अपने मन, कुटुंब्ब जाति, और देश को सुख मिले वैसाही दान करना ठीक है मरने पर जो कुछ होता तो उन्हीं लोगों को स्वर्ग मुक्ति कैलाश बैकुंठ सब मिलैंगे जो देश के लिए दान करते हैं इससे अधिक लिखना व्यर्थ है केवल दान्य वस्तु और दान पात्र सुनिए॥ शेषमग्रे

श्री पं० प्रतापनारायण मिश्र सम्पादक की आज्ञानुसार "शुभचिन्तक यंत्रालय" कानपुर में प्रकाश हुआ॥